प्रेक्षाध्यान : व्यक्तित्व विकास

निदेशन

अणुव्रत अनुशास्ता तुलसी

आचार्य महाप्रज्ञ

समाकलन

मुनि धर्मेश

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रेक्षाध्यान : व्यक्तित्व विकास

लेखक
मुनि धर्मेश

जैन विश्व भारती
लाडनूं (राज०)

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सम्पादक : मुनि यशवन्त कुमार

© जैन विश्व भारती, लाडनूँ

सौजन्य

"गणाधिपति श्री तुलसी के कर–कमलों से दीक्षित, युगप्रधान आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के विद्वान शिष्य मुनिश्री धर्मेशकुमारजी के संयम ग्रहण के 20 वर्ष सम्पन्नता के उपलक्ष्य में मुनिश्री की माताजी श्रीमती रसालदेवी धर्मपत्नी स्व0श्री भंवरलालजी धोका की प्रेरणा से उनके सुपुत्र श्री प्रकाशचन्द, इन्द्रचन्द, महावीर, अजीत, भरत, तरुण, मुद्रित एवं समस्त धोका परिवार निवासी नीमली (सोजतरोड़) प्रवासी कांचीपुरम (तमिलनाडु) के उदार आर्थिक सौजन्य से प्रकाशित"

प्रथम संस्करण : 2005

मूल्य : 75/–रुपये

लेजर टाइप सेटिंग : हनुमानमल शर्मा, केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी, लाडनूँ

मुद्रक : एस. एम. प्रिण्टर्स, शाहदरा, दिल्ली–32

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अमृत वचन

प्रेक्षाध्यान जीवन दर्शन है। इसमें जीवन की समग्रता का दर्शन किया जा सकता है। मुनिश्री धर्मेशकुमार प्रेक्षाध्यान के अभ्यासी हैं और उस पर वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने वाले मुनि हैं। उनके लेखन में अभ्यास और विज्ञान का समन्वय है। प्रस्तुत पुस्तक आकार में बहुत बड़ी नहीं है पर प्रकार की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। इससे पाठक को अनेक आयामों में गति करने का अवसर मिलेगा।

11 फरवरी, 2003
कांदिवली

आचार्य महाप्रज्ञ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रस्तुति

संस्कृति के इस संक्रमणकाल में समाज की मर्यादाओं के अवनयन के साथ–साथ व्यक्ति भी अपने जीवन मूल्यों की आदर्श राह से भटक गया है। स्वस्थ, संतुलित एवं सम्बन्धित मानव जीवन के लिए वैयक्तिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की पुनर्स्थापना एवं उनका पोषण आज की महत्ती आवश्यकता है। यह तभी सम्भव है जब व्यक्ति के जीवन में 'आत्मानुशासन' को समुचित स्थान मिले। आत्मानुशासन से ही व्यक्तित्व विकास का मार्ग प्रशस्त होता है और व्यक्तित्वधारियों से स्वस्थ समाज की संरचना का संकल्प साकार हो सकता है।

व्यक्तित्व विकास और स्व–प्रबन्धन एक–दूसरे के पूरक हैं इस पुस्तक में लेखक ने सर्वांगीण व्यक्तित्व के घटक अवयवों एवं सोपानों का विवरण देते हुए स्व–प्रबन्धन की वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक पक्ष की सुन्दर विवेचना प्रस्तुति की है। स्व–प्रबन्धन की स्वस्थ एवं स्पष्ट व्याख्या देते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि इसकी धूरी दूसरों पर नहीं स्वयं पर आधारित है और इसका मूलमंत्र है स्वयं के प्रति जागरूकता। सही अर्थों में स्व–प्रबन्धन का लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब अन्तर्जगत की भावनाओं एवं कल्पनाओं और बाहरी जगत की अन्यान्य व्यवस्थाओं के बीच सांमजस्य स्थापित किया जा सके। समय–प्रबन्धन भी स्व–प्रबन्धन का अभिन्न अंग है इसको भी विषय–वस्तु के साथ सुनियोजित ढंग से जोड़ा गया है।

स्व–प्रबन्धन का लक्ष्य प्राप्त करने की राह में अनेकानेक बाह्य उद्दीपन तनावों को जन्म देते हैं। इन तनावों के प्रबन्धन के बिना न तो स्व–प्रबन्धन का लक्ष्य हासिल किया जा सकता है और न ही स्व–प्रबन्धन के लिए अपरिहार्य सकारात्मक दृष्टिकोण एवं उच्चतम स्तर की शक्तियों का विकास संभव है। तनाव एवं स्वास्थ्य एक–दूसरे के सर्वथा विरोधी हैं पर इन विरोधी युगंल मूल धर्मों से कोई व्यक्ति अछूता

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नहीं है। तनाव–प्रबन्धन के बिना स्वास्थ्य को पाया नहीं जा सकता और स्वास्थ्य ही स्व–प्रबन्धन की प्रक्रिया को पूर्ण बनाता है। पुस्तक में तनाव–प्रबन्धन और स्वास्थ्य प्रबन्धन को भी सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

स्वास्थ्य के विभिन्न अवयवों यथा – भावात्मक स्वास्थ्य, स्मृति विकास, उच्चतर शक्तियों का विकास एवं स्व–प्रबन्धन की निष्पत्ति के रूप में प्राप्त होने वाली संभावित उपलब्धियों को भी सच्चे ढंग से व्याख्यायित किया गया है।

अभिव्यक्ति कौशल एवं लेखन क्षमता का विकास व्यक्ति के जीवन में सफलता के नये द्वार खोलने में सहायक होते हैं। इससे जुड़े हुए उल्लेखनीय तथ्यों की विवेचना को पुस्तक में समुचित स्थान दिया गया है। व्यसन की समस्या वर्तमान समय की सर्वाधिक चर्चित एवं ज्वलंत समस्या है। व्यसन–मुक्ति के क्षेत्र में प्रेक्षाध्यान की उपादेयता इस पुस्तक की सर्वाधिक उल्लेखनीय उपलब्धि सिद्ध होगी – ऐसी मेरी मान्यता है।

सिद्धान्त के साथ यदि प्रायोगिक अभ्यास की संयुति हो "सोने में सुहागा" की उक्ति सिद्ध हो जाती है। इस पुस्तक में स्व–प्रबन्धन एवं व्यक्तित्व विकास के लिए जो प्रायोगिक उपाय सुझाये गये हैं वे निश्चित रूप से पाठकों को उपयोगी ढंग से लाभान्वित करेंगे और यही इस पुस्तक की सबसे बड़ी उपलब्धि होगी।

मुनि धर्मेशजी जीवन विज्ञान के शिक्षण–प्रशिक्षण से वर्षों से जुड़े रहे हैं। इन्होंने विषय के सिद्धान्तों को भली प्रकार न केवल समझा है बल्कि स्वयं इनको जिया है। इस पुस्तक की सटीक विवेचना से यह बात सिद्ध हो जाती है। जीवन विज्ञान के विद्यार्थियों, स्नातकों एवं शोधार्थियों के साथ स्वस्थ जीवन जीने के आकांक्षी व्यक्तियों को इस पुस्तक से भरपूर लाभ मिलेगा ऐसी आशा की जाती है।

सुधामही रघुनाथन
कुलपति
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

17 फरवरी, 2005

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रस्तुति

1.0 समस्या समाधान

'प्रेक्षाध्यान : व्यक्तित्व विकास' मेरे लिए एक आनन्ददायक यात्रा रही है। यह एक सटीक समाधान रहा है जिसकी खोज मैं वर्षों से कर रहा था। विद्यालयी शिक्षा छोड़ने के बाद से यह अनुभव करता रहा कि यदि व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के विकास का प्रशिक्षण विद्यालयी जीवन में ही दे दिया गया होता तो मुझे 1980 में निराशा का अनुभव नहीं करना पड़ता। उस समय प्रारम्भ किये गये ध्यान के अभ्यास ने मुझे अन्धकार से निकाल कर उजाले में खड़ा कर दिया। फिर मुझे पीछे मुड़कर कभी देखने की आवश्यकता नहीं पड़ी। साथ – साथ तब से ही मेरे दिल और दिमाग में कुछ प्रश्न घूमने लगे –

1. लोकाकाश की समस्त आत्माओं का विकास कैसे हो ?
2. मैं अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास कैसे कर सकता हूं ?
3. दूसरों के व्यक्तित्व विकास में कैसे सहभागी बन सकता हूं ?

इनके समाधान की खोज ने मेरे सामने अपूर्व अवसर पैदा कर दिये।

1.1 विकास के अपूर्व अवसर

1. वर्ष 1980 में ही ध्यान के क्षणों में एक संकल्प जागा कि मुझे अपने पूरे जीवन को ध्यान साधना में ही लगाना है।
2. जीवन में दूसरा मोड़ तब आया जब 4 मई 1984 को गुरुदेव श्री तुलसी ने अत्यन्त कृपा कर मुझे जैन मुनि दीक्षा प्रदान कर अपने विकास के लिए अनन्त आकाश दे दिया।
3. वर्ष 1989 मेरे जीवन में सर्वतोमुखी विकास प्रदान करने वाला, विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण से संयुक्त 'योगक्षेम वर्ष 1989' यादगार वर्ष बना। उस वर्ष की समाप्ति पर व्यक्तित्व को समझने का एक तीव्र संकल्प जगा और उस विषय पर अवलोकन, निरीक्षण व लेखन का क्रम प्रारम्भ हुआ।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. वर्ष 1990 में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी (तत्कालीन युवाचार्यश्री) ने कृपा कर मेरी ध्यान में रूचि को देखते हुए मुझे प्रेक्षाध्यान के सभी पक्षों पर अधिकृत विशेषज्ञता प्राप्त करने का निर्देश प्रदान किया।
5. वर्ष 1991 में जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) के प्रारम्भ से ही मुझे मनोविज्ञान व विशेष रूप से व्यक्तित्व मनोविज्ञान के सैद्धान्तिक पहलुओं को सूक्ष्मता से पढ़ने व समझने का अवसर मिला। अपेक्षावश इसी क्रम में अगले वर्ष (1992) से विश्वविद्यालय में 'प्रेक्षाध्यान' के प्रशिक्षण व अध्यापन का भी सुअवसर प्राप्त हुआ जो लगभग वर्ष 2000 तक चलता रहा।
6. वर्ष 1996 में पूज्य प्रवर गणाधिपति तुलसी की सन्निधि व आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के दिशा–निर्देशन में सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास हेतु प्रेक्षाध्यान के एक "त्रैमासिक शिविर" को प्रेक्षा–प्रशिक्षण के रूप में प्रारम्भ करने व उसके संचालन का सुअवसर मिला। इसके बाद गुरुदेव की महती कृपा से विविध प्रशिक्षण कार्यक्रमों को संचालित करने का सुअवसर अब तक मिलता रहा है। इन सबके बीच भी मेरे दिल और दिमाग में बसे हुए उक्त तीन प्रश्नों के सटीक समाधान खोजने व उनके परीक्षण का प्रयास भी चलता रह रहा है।

मैंने 'व्यक्तित्व' को किस रूप में समझा? व्यक्तित्व विकास के लिए पाठ्यक्रम क्या हो? इन प्रश्नों का संक्षिप्त विचार इस भूमिका में करने जा रहा हूं जिसका विस्तार से विवेचन पुस्तक में करने का प्रयास किया गया है।

2.0 व्यक्ति के तीन आयाम – अस्तित्व, व्यक्तित्व, कर्तृत्व

अस्तित्व

भारतीय दर्शनों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में दिव्य आत्मा का अस्तित्व है। यह शरीर एक मन्दिर है जहां दिव्य आत्मा रूपी देवता का निवास है। यह आत्मा उस पंछी के समान है जो जन्म के समय इस शरीर में डेरा डालता है और मृत्यु के समय उड़ जाता है। आगे पुनः नये घर में नया बसेरा बसा लेता है। जन्म और मृत्यु के चक्र में यह आत्मा अनन्त काल से भ्रमण कर रही है। भारतीय दर्शनों में यह सर्वमान्य तथ्य है कि यह भ्रमण तब तक चलता रहेगा जब तक व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप को न पहचान लेगा। प्रत्येक आत्मा के साथ उत्थान और पतन, विकास और ह्रास का अगणित लम्बा–चौड़ा इतिहास जुड़ा हुआ है जो आगे से आगे चलता रहता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मूलतः प्रत्येक व्यक्ति में उस परमात्मा का अस्तित्व है। प्रत्येक व्यक्ति में प्रभुता है, गुरुता है, महानता है, क्षमता है जिससे वह अपने आपको जान सकता है। उस क्षमता से व्यक्ति को परिचित करा देना व्यक्तित्व विकास का आदि बिन्दु है। उस क्षमता को विकसित करना या उजागर करना व्यक्तित्व विकास की मध्यवर्ती यात्रा है। उस क्षमता का परिपूर्ण विकास, आत्मा से परमात्मा बन जाना, व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास है।

व्यक्तित्व

सब व्यक्तियों में परमात्मा का अस्तित्व है। इस दृष्टि से सब व्यक्ति समान हैं किन्तु उसकी अभिव्यक्ति सबमें एक समान नहीं है। व्यक्ति–व्यक्ति में अभिव्यक्ति का अधिकतम विकास करना ही व्यक्तित्व विकास है। गुणों का सम्पूर्ण विकास – यह व्यक्तित्व विकास का लक्ष्य है। सब का स्वभाव अलग–अलग है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में गुणों के साथ अवगुण भी विद्यामान रहते हैं। अवगुण ही व्यक्तित्व विकास में सर्वाधिक बाधक बनते हैं। व्यक्ति के पतन के कारण भी बनते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर गुण–अवगुणों का युद्ध चलता रहता है। उसी का परिणाम है – विकास और ह्रास, उतार और चढ़ाव, उत्थान और पतन। जब गुणों की जीत होती है तो व्यक्तित्व उदार और विराट रूप में सामने आता है। जब अवगुण जीतने लगते हैं तब व्यक्ति अत्यन्त संकुचित और संकीर्ण रूप में सामने आता है। वह अपने स्वार्थ के दायरे से बाहर सोच ही नहीं पाता है। गुणों को मजबूत करने तथा उसके अवगुणों से लड़ने (दूर करने) में उसकी सहायता करना व्यक्तित्व विकास का एक प्रबल आधार है।

कर्तृत्व

व्यक्ति की महानता का आधार उसका कर्तृत्व है। कर्तृत्व की ऊंचाई उसकी उदारता, परोपकार परायणता, व स्वार्थ से परमार्थ की दिशा में प्रस्थान पर आधारित है। व्यक्ति अपने अस्तित्व के साथ प्राणी मात्र के अस्तित्व का भी अनुभव करता है। उनके दुःख–दर्द को भी समझता है। सबके प्रति करुणा, प्रेम, मैत्री जैसे सद्गुणों का अपने में विकास करता है। सबके सद्गुणों का भी सम्मान करता है। किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं पहुंचाता है। सबकी अच्छाइयों के विकास तथा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

गुण–दोष संग्राम में आत्म–कल्याण की कामना से कार्य करता है, सबकी सेवा करता है, सबका सहयोग करता है तब उसके कर्तृत्व का कद आकाश को भी छूने लगता है। उसका जीवन सर्वजन हिताय, लोक कल्याणकारी, स्व–पर हितकारी तथा सर्वोदयी बनता है। व्यक्तित्व गरिमामय बन जाता है। विष को पीकर अमृत बांटने वाला बन जाता है।

2.1 व्यक्तित्व विकास के कारक तत्व और निष्पत्ति

व्यक्ति के आदर्श स्वरूप को निखारने के लिए माता–पिता, शिक्षक, प्रशिक्षण–पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, व्यवस्था और वातावरण सबका समुचित व सम्यक् योगदान कारगर भूमिका निभाता है। इन सबके कुशल योग व संयोजन से व्यक्ति की सबलता सुदृढ़ होगी। दुर्बलताओं को दूर करने में मदद मिलेगी। सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप व्यक्ति खरा उतर सकेगा। ऐसा होने पर व्यक्तित्व का सर्वोदयी कल्याणकारी विकास संभव हो सकेगा। इससे व्यक्तित्व में निम्नलिखित परिणाम परिलक्षित हो सकेंगे–

1. व्यक्ति में निहित प्रभुता, महानता, विशिष्टता और क्षमताओं का अनुभव।
2. बुराई पर अच्छाई की विजय की सुदृढ़ आस्था।
3. करुणा, प्रेम, दया, प्रामाणिकता आदि गुणों के विकास का संकल्प।
4. बुराई या अपनी कमजोरियों से लड़ने के लिए अपनी क्षमताओं के उपयोग का साहस।
5. परोपकार परायण और प्रेरणादायी व्यक्तित्व।

2.2 गति–प्रगति और पेशेवर सफलता

व्यक्तित्व विकास जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। व्यक्ति के विभिन्न पक्षों का विकास जीवन के अन्तिम समय तक भी चलता रहता है। आयु अनुसार विकास की गति में बहुत अन्तर आ जाता है। बाल्यावस्था में व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक पक्षों का विकास बहुत तीव्रता से होता है। युवावस्था में उपरोक्त पक्षों के विकास की गति स्थिर होने लगती है। सामाजिक, व्यावसायिक विकास तेजी से होने लगते हैं। वृद्धावस्था में व्यक्तित्व के अनेक पक्षों का ह्रास भी दिखाई देता है। किन्तु अनुभव और परिपक्वता में वृद्धि देखी जाती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बाल्यावस्था में विकास की तीव्र गति को संवारने की सबसे कठिन चुनौती होती है। विकास को संवारने में माता–पिता, अनुभवी परिवारजनों तथा गुरुजनों की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। माता–पिता का आदर्श जीवन, वात्सल्य, उचित नियंत्रण, मार्ग–दर्शन, प्रेरणा और प्रोत्साहन बच्चों में अच्छे संस्कारों के पोषण का एक प्रमुख आधार होता है। इससे व्यक्ति की जीवनशैली पर बहुत प्रभाव पड़ता है। कठिन परिस्थितियों में निडरता व सही मार्ग के अनुसरण का साहस जैसे गुणों के विकास में माता–पिता व परिवार जनों का बहुत बड़ा योगदान होता है।

प्रायः बालक 4 वर्ष से लेकर 16 वर्ष तक विद्यालय व शिक्षकों के सम्पर्क में रहता है। इस समय उसके व्यक्तित्व विकास में शिक्षा व शिक्षक की अत्यन्त महनीय भूमिका हो जाती है। शिक्षकों का आदर्श जीवन, उनका जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण, उनके द्वारा दिये गये शिक्षण–प्रशिक्षण, प्रेरणा व मार्ग–दर्शन से बच्चों के सर्वांगीण व्यक्तित्व की आशा की जाती है। वस्तुतः यह व्यक्तित्व के चहुंमुखी विकास का प्रथम आधार है।

पेशेवर सफलता और स्व–प्रबन्धन

युवावस्था में शिक्षा की परिपूर्णता के बाद व्यक्तित्व को संवारने, उससे समाज और देश को लाभान्वित करने का दायित्व स्वयं व्यक्ति पर होता है। इस समय प्रायः देखा जाता है कि विकास को गति देने में अनेक कारणों से माता–पिता व शिक्षक की भूमिका धीरे–धीरे कम होती चली जाती है। शिक्षा की परिपूर्णता के बाद शिक्षकों से सम्पर्क लगभग समाप्त हो जाता है। माता–पिता से दूर रहकर युवक के अपने कार्य–क्षेत्र में काम करने के कारण भी उनसे क्षेत्रीय दूरियां बढ़ जाती है। सम्पर्क कम हो जाता है। अब युवकों को उनकी गलतियां बताने वाले व मार्ग–दर्शन करने वाले नगण्य हो जाते हैं। पूर्ण युवावस्था में विकास की गति, विशेष रूप से सामाजिक विकास और पेशेवर विकास की गति को बनाये रखने की जिम्मेदारी, अब स्वयं व्यक्ति पर ही होती है। इस उम्र में स्वयं का विकास स्वयं के द्वारा ही हो सकता है। जीवन के प्रति स्वयं के सकारात्मक दृष्टिकोण, स्वस्थ जीवनशैली, धैर्य और साहस के द्वारा अपने विकास की जिम्मेदारी स्वयं को ही लेनी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

होती है। अपने जीवन रूपी घोड़े की लगाम अपने ही हाथ में लेनी होती है। इस उम्र में स्वयं के द्वारा स्वयं का प्रबंधन ही सामाजिक और पेशेवर विकास का आधार होता है। स्वयं की जागरूकता, स्वयं का विवेक, स्वयं की उदारता ही व्यक्तित्व के सर्वहिताय विकास का आधार बनता है। व्यक्ति स्व–प्रबन्धन में जितना कुशल व निपुण होगा उतना ही वह अपने व्यक्तित्व को सार्थकता व विराटता प्रदान कर पायेगा।

3.0 विषय–वस्तु, पाठ्यक्रम और प्रविधि

3.1 विषय–वस्तु

किसी भी जहाज का निर्माण समुद्र को पार करने के लिए किया जाता है। जहाज के विभिन्न भागों के विकास और सम्पूर्ण निर्माण के बाद उसकी असली परीक्षा समुद्र की लहरों पर होती है। उन लहरों को चीर कर यात्रियों को सकुशल किनारे पर पहुंचाने की क्षमता में ही जहाज निर्माण की सफलता मानी जाती है। शिक्षा संस्थानों में व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों के विकास के बाद व्यक्ति की भी असली परीक्षा जीवन के महासागर में होती है। वहां उसे अनुकूल हवाओं और प्रतिकूल तुफानों के बीच पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राष्ट्रीय आदि सभी मोर्चों पर अपने दायित्वों एवं कर्तव्यों के सम्यक् निर्वाह के लिए शक्ति और समय का सही नियोजन करना होता है। ऐसे समय में स्वयं द्वारा स्वयं का प्रबन्धन ही एकमात्र कारगर उपाय सिद्ध होता है। अतः युवावस्था में स्व–प्रबन्धन के लिए पाठ्यक्रम के महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर विशेष रूप से ध्यान देकर उन्हें विकसित करने की आवश्यकता होती है। जैसे –

3.2 पाठ्यक्रम

1. लक्ष्य निर्माण : जीवन में सफलता के लिए जीवन के महासमर में कूदने से पहले अपना स्पष्ट उद्देश्य और लक्ष्य का निर्माण एवं उसके प्रति पूर्ण समर्पण।
2. आत्म–बोध : अपने वास्तविक स्वरूप का बोध, अपनी मूल क्षमताओं पर ध्यान केन्द्रित करना, क्षमताओं के विकास का संकल्प और दुर्बलताओं को दूर करने का साहस।
3. आत्म–निरीक्षण : स्वयं के परिष्कार और निखार हेतु प्रतिदिन नियमित रूप से अपनी गतिविधियों का निरीक्षण।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. भावात्मक विकास : सामाजिक सौहार्द व सहयोग के लिए उदारता, दूसरों के प्रति करुणा, सद्भाव व सेवा भावना का विकास।
5. समय प्रबन्धन : शक्ति की सूरक्षा व समय के अपव्यय से बचाव के लिए लक्ष्यानुकूल कार्यों में समय का कुशल नियोजन।
6. सदाचार व कठोर परिश्रम : वैयक्तिक व सामुदायिक उत्थान के लिए स्वयं के आचार, विचार और व्यवहार की प्रामाणिकता व सात्त्विकता के साथ कठोर परिश्रम व सबको साथ लेकर काम करने की आदत।
7. शिष्टाचार : सबसे सहयोग प्राप्ति हेतु छोटे–बड़े सभी के साथ सम्मानजनक व्यवहार।
8. स्वाध्याय : सकारात्मक दृष्टि, उत्साह व प्रेरणा के लिए सत्साहित्य का नियमित वाचन।
9. ध्यान : शक्ति, एकाग्रता और कार्यक्षमता के विकास के लिए ध्यान का नियमित अभ्यास।
10. कायोत्सर्ग : तनाव के कुशल निराकरण, अनासक्त जीवन व परमशांति के लिए कायोत्सर्ग का नियमित अभ्यास।

3.3 शिक्षण विधि

उपरोक्त तथ्यों (विषय–वस्तु) को विकसित करने के लिए सैद्धान्तिक ज्ञान, प्रायोगिक प्रशिक्षण व सतत अभ्यास तीनों का शिक्षण प्रशिक्षण में समावेश आवश्यक है। सैद्धान्तिक ज्ञान से व्यक्ति का चेतन मन प्रभावित होता है। उससे प्रेरणा प्राप्त होती है। रुचि जागृत होती है। किन्तु इसका प्रभाव सीमित होता है। चेतन मन की शक्ति सीमित होती है। वह एक समय में एक ही कार्य कर पाता है। उसके लिए भी उसे प्रयास करना पड़ता है।

प्रायोगिक प्रशिक्षण व सतत अभ्यास से अवचेतन मन प्रभावित होता है। इससे विचार रूपान्तरित होकर संस्कार बन जाते हैं। अच्छी आदतें निर्मित हो जाती हैं। अवचेतन मन की असीमित शक्ति का सहज सुयोग प्राप्त होता है। अवचेतन मन उस कार्य को सहज रूप से, न्यूनतम प्रयास में निष्पन्न करा देता है। अभ्यास से श्रद्धा, आत्म–विश्वास

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

व कौशल बढ़ता है। सुसंस्कारों से आत्मानुशासन विकसित होता है। चेतन मन और अचेतन मन दोनों की क्षमताओं के सम्यक् उपयोग से स्वयं पर स्वयं का प्रबन्धन कुशलता से किया जा सकता है।

4.0 आदर्श गुरु

व्यक्तित्व निर्माण में गुरु की बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। गुरु में कुछ ऐसी विशिष्ट योग्यताएं होती है जिनके कारण उनके हाथों अनेक योग्य व महान व्यक्तियों का भी निर्माण हो जाता है। अतः परिपूर्ण व्यक्तित्व निर्माण के लिए पहले अच्छे शिक्षक और प्रशिक्षकों का निर्माण आवश्यक है। शिक्षकों के व्यक्तित्व में व्यक्तित्व–निर्माण की तड़फ, उदारता, सात्विक़ता व महानता होगी तब ही अच्छे व्यक्तित्व निर्माण की कल्पना साकार हो सकती है।

4.1 आचार्य श्री तुलसी

एक बार मैं गुरुदेव आचार्यश्री तुलसी के पास एक समस्या लेकर गया। मैंने पूछा – "गुरुदेव ! छोटे सन्तों पर अनुशासन करते समय आवेश आ जाता है।" गुरुदेव ने फरमाया –"अनुशासन करते समय आवेश आ सकता है। आवेश तो अन्यत्र भी आ सकता है। लेकिन यह हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा उद्देश्य है – सुधार, परिष्कार और परिमार्जन।

आचार्य श्री तुलसी एक विलक्षण आदर्श गुरु थे। उनके मन में व्यक्तित्व निर्माण की बेजोड़ तड़फ थी। इसके परिणाम स्वरूप आपके नेतृत्व में अनेकानेक आदर्श, परोपकार परायण और लोकोपकारी अनेक व्यक्तियों का निर्माण हुआ। साधु–साध्वियों, श्रावक–श्राविकाओं और कार्यकर्ताओं की लम्बी श्रृंखला तैयार हो गई। गुरुदेव श्री तुलसी व्यक्तित्व–निर्माण हेतु शिक्षक–प्रशिक्षकों में तीन योग्यताओं के विकास को आवश्यक मानते थे – (1) ममता, (2) समता और (3) क्षमता।

4.2 ममता

मम अर्थात् मेरा, ममता अर्थात् मेरेपन का भाव, अपनत्व का भाव। शिक्षक में शिष्यों के प्रति अपनत्व, वात्सल्य और स्नेह का भाव होना चाहिए। इसके साथ ही उनके निर्माण की गहरी तड़फ उनके भीतर होनी चाहिए। गुरुदेव तुलसी अनेक बार फरमाया करते थे कि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शिष्य कुंभ गुरु कुम्हार घड़–घड़ काडे खोट।
अन्तर्तल में रक्षा करे बाहर में बाहे चोट।।

शिष्य कच्चे घड़े के समान होता है। गुरु कुम्हार के समान होता है। जैसे कुम्हार घड़े के ऊपर बाहर से चोट करता है किन्तु साथ–साथ अन्दर के तल में हाथ द्वारा सहारा भी देता रहता है। अन्दर से उसकी रक्षा भी करता है। वैसे ही गुरु बाहर से चोट करते हैं, खोट को दूर करते हैं, भीतर से रक्षा करते हैं और व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आज के शिक्षकों में भी शिष्य के निर्माण की आन्तरिक तड़फ होनी चाहिए। सभी शिष्य लक्ष्य प्राप्ति में आगे बढ़े। उनकी क्षमताओं का विकास हो। यह भावना ममतामयी होनी चाहिए।

4.3 समता

सहिष्णुता : शिक्षक में सहनशीलता की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। उसकी दृष्टि समत्व से अनुप्राणित हो अर्थात् वह शिष्य की कमियों को देख सके, समझ सके और धैर्य तथा सहानुभूति के साथ उनको दूर करने का प्रयास कर सके। कमियों को देखकर अपना सन्तुलन न खोये। सामान्तया देखते हैं कि कमियों पर जितनी तीव्र प्रतिक्रिया देखने को मिलती है उतनी ही तीव्र तत्परता सद्गुणों की सुरक्षा व प्रोत्साहन हेतु देखने को नहीं मिलती हैं। अनगढ़ शिष्य है तो उसमें कमियां तो अवश्य होगी। यदि उसके प्रति उत्तेजना व आवेश से काम लेंगे तो अनेक बार व्यक्ति टूट जाता है। उसका आत्मविश्वास कमजोर पड़ता है।

तटस्थता : शिक्षक का व्यवहार तटस्थ होना चाहिए। ऐसा लगना चाहिए कि वह किसी के साथ भी पक्षपात नहीं कर रहा है। अतः शिक्षक का अनुशासन व बाह्य व्यवहार भी असंदिग्ध, स्पष्ट तथा पक्षपात रहित दिखना भी चाहिए और रहना भी चाहिए।

4.4 क्षमता

व्यक्तित्व विकास एक जटिल प्रक्रिया है। सभी व्यक्तियों का स्वभाव तथा गुण धर्म एक जैसे नहीं होते हैं। उनमें बहुत भिन्नताएं होती है। व्यक्ति में अच्छाइयों के साथ–साथ बुराइयां भी रहती हैं। वे ही विकास में अत्यधिक बाधक बनती हैं। व्यक्ति के इस बुराई वाले पक्ष को

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ही देखेंगे तो निराशा ही हाथ लगेगी। व्यक्तित्व का दूसरा उजला पक्ष भी है। प्रत्येक व्यक्ति में कोई न कोई विशिष्टता भी होती है। गुणों के विकास की तीव्र तत्परता एवं प्रोत्साहन से व्यक्ति अपने आप से परिचित हो पाता है तथा उसमें अपनी शक्ति व समय का नियोजन कर विकास कर लेता है।

प्रशिक्षक को व्यक्तित्व–निर्माण के विभिन्न पहलुओं का ज्ञान होना चाहिए। व्यक्ति के गुणों को प्रोत्साहित करने एवं कमियों को दूर करने हेतु विविध उपायों का बोध होना चाहिए। उसमें ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि वह व्यक्ति के भीतर के गुरु को जगा सके। विवेक चेतना को जागृत कर सके। आत्म–निरीक्षण के संस्कारों को पुष्ट कर सके। आत्मविश्लेषण की आदत डलवा सके। शिक्षक में इस कौशल का विकास होना चाहिए कि घड़े के निर्माण के लिए उस पर चोट करते समय अन्दर में हाथ कहां रखना है? चोट भी हो किन्तु घड़ा टूटे नहीं, यही शिक्षक की कसौटी है।

बुराई के परिष्कार के लिए उससे होने वाली हानियों से अवगत कराना होता है। साथ ही साथ ऐसा वातावरण और व्यवस्था भी बनानी होती है जिससे व्यक्ति के अवगुण उस पर हावी न हो सके। अवगुण परास्त हो सके। उनका निरन्तर परिष्कार हो सके।

यदि किसी का व्यवहार बदलना है तो उसके मूल कारण की खोज करके उसके अनुरूप उपाय करने से ही उसका सम्यक् परिष्कार हो सकता है। हथौड़े से ताला खुलता नहीं, टूट जाता है। बेकार हो जाता है। अनुशासन करते समय उत्तेजना या आवेश आ सकता है किन्तु यह हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा उद्देश्य है व्यक्तित्व विकास। उत्तेजना या आवेश से समाधान नहीं हो सकता। व्यक्तित्व विकास की समस्याओं का समाधान सही कारण की खोज़ व उसके निराकरण से ही संभव होता है।

व्यक्ति–व्यक्ति में दुर्बलताएं भिन्न–भिन्न प्रकार की होती हैं। उनके प्रभाव भी भिन्न–भिन्न होते हैं। कुछ कमियां वैयक्तिक विकास में बाधक बनती हैं, तो कुछ कमियां सामाजिक प्रतिष्ठा को गिराने वाली होती हैं। कुछ कमियां ऐसी भी होती हैं जो सामाजिक शान्ति को भंग करने वाली होती हैं। अतः व्यक्ति के दुर्बल पक्षों को भी नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रशिक्षक का मूल उद्देश्य होता है – व्यक्तित्व विकारा को संवारना। अतः उसे मधुर और गुणों की प्रशंसात्मक भाषा के प्रयोग में कुशलता अर्जित करनी चाहिए। शिक्षक की भूमिका शिक्षण के साथ–साथ सशक्त प्रेरक की भी होनी चाहिए। शिक्षक व्यक्तित्व विकास में सशक्त भूमिका निभा सके। अतः संक्षेप में निम्नलिखित क्षमताओं का विकास उसमें सलक्ष्य होना चाहिए –

1. स्वयं के मानसिक स्वास्थ्य हेतु गुणग्राहिता।
2. दूसरों के मानसिक स्वास्थ्य हेतु गुणानुमोदन।
3. दूसरों के व्यक्तित्व विकास हेतु गुण–प्रकाशन।
4. गुणों के विकास हेतु विविध उपायों का ज्ञान व कौशल।
5. अवगुणों के परिष्कार हेतु धैर्य, माधुर्य तथा विविध उपायों का ज्ञान व कौशल।

प्रस्तुत पुस्तक में "स्व–प्रबन्धन" के विकास हेतु व्यक्ति के चेतन मन और अवचेतन मन दोनों की क्षमताओं के उपयोग पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। विषय के सैद्धान्तिक और प्रायोगिक पक्ष को भी उजागर किया गया है। प्रायोगिक पक्ष के रूप में प्रेक्षाध्यान का अभ्यास एक सशक्त साधन है। उसके छोटे–छोटे प्रयोगों के सैद्धान्तिक पक्ष, प्रायोगिक प्रक्रिया और उसकी प्रविधि को भी इस पुस्तक में समझाया गया है।

5.0 प्रशिक्षण प्रबन्धन

प्रशिक्षण की सुव्यवस्था हेतु अर्थात् व्यक्तित्व विकास के सम्पूर्ण पक्षों के सैद्धान्तिक ज्ञान, प्रायोगिक प्रशिक्षण व सतत अभ्यास हेतु एक संक्षिप्त कार्यक्रम "व्यक्तित्व विकास कार्यशाला के आयोजन की रूपरेखा" तैयार की, उसे क्रियान्वित करके देखा। लोगों की अच्छी सहभागिता रही। संभागीगण बहुत लाभान्वित हुए। कार्यशाला के संभागियों के अनुभव, कार्यशाला का स्वरूप और संचालन प्रक्रिया को परिशिष्ट में दे दिया गया है। आशा है इससे जीवन विज्ञान, प्रेक्षाध्यान के प्रशिक्षक एवं अन्यान्य सम्बद्ध सभी कार्यकर्ता भी संचालन द्वारा दूसरों के व्यक्तित्व विकास में सहभागी बन सकेंगे।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6.0 आभार

प्रस्तुत कृति गुरुदेव तुलसी व आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के सुदीर्घ आशीर्वाद, शक्ति–सम्प्रेषण व प्रेरणा का प्रसाद है। पूज्य युवाचार्य का वरद हस्त, शुभदृष्टि व अनुकम्पा मेरे लिए विकास का सशक्त सम्बल रहा है। सबके श्री चरणों में रहकर विकास के मार्ग पर निश्चिंत होकर आगे बढ़ता रह सका हूं। इस कृति के प्रतिलिपि शोधन तथा अन्यान्य दैनिक कार्यों में मुनि यशवन्त कुमार जी का अनन्यतम सहयोग रहा है। जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय), के कुलपति श्रीमति सुधामही रघुनाथन ने कृति का अवलोकन कर अपनी महत्त्वपूर्ण सम्मति प्रेषित की। केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी के वरिष्ठ निदेशक श्री सुन्दरलाल माथुर ने इसके संशोधन व संवर्द्धन में अपने अमूल्य क्षणों तथा श्रम का योगदान किया है। इसे पुस्तकाकार रूप देने में श्री मनोज संचेती (दिल्ली) व श्री हनुमान मल शर्मा, प्रशिक्षक, केन्द्रीय जीवन विज्ञान अकादमी, लाडनूं ने निष्ठा से कार्य किया है। जैन विश्व भारती के अधिकारियों की प्रस्तुत कृति को पाठकों तक पहुंचाने में महत्त्वपूर्ण सेवाएं रही हैं। अन्त में उन लेखकों के प्रति भी हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिनकी कृतियों से मैंने विगत बीस वर्षों में व्यक्तित्व विकास के बार में कुछ न कुछ ग्रहण करता रहा हूँ, सीखता रहा हूँ। उनमें से कुछ का उल्लेख परिशिष्ट–9 में किया है।

आशा है कि प्रस्तुत कृति आज की युवा पीढ़ी के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। साथ ही कार्यकर्ता तथा प्रेक्षा–प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण कार्य में सहयोगी बनेगी। 'कृति' में सुधार व संवर्द्धन के लिए पाठकों के सुझाव आमंत्रित है। "विकास की यात्रा" में हम एक–दूसरे के विकास में सहभागी बनें। इसी विश्वास के साथ।

मुनि धर्मेश

छापर

दिनांक 22.12.2004

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अनुक्रम

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	व्यक्तित्व विकास और स्व–प्रबन्धन	01
2.	प्रेक्षाध्यान और अखण्ड व्यक्तित्व विकास	14
3.	समय प्रबन्धन	29
4.	स्मृति विकास	38
5.	तनाव प्रबन्धन	50
6.	उच्च मानसिक शक्तियों का विकास	65
7.	कार्यक्षमता का विकास	80
8.	स्वास्थ्य प्रबन्धन	93
9.	सकारात्मक दृष्टिकोण और आत्म–विश्वास	105
10.	भावात्मक विकास और भावात्मक स्वास्थ्य	121
11.	लक्ष्य-निर्माण और लक्ष्य-प्राप्ति	134
12.	व्यसन की समस्या : प्रेक्षा का समाधान	149
13.	अभिव्यक्ति कौशल का विकास	158
14.	लेखन क्षमता का विकास	171
15.	सार–संक्षेप	180
15.	परिशिष्ट	182
	1. प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला : अनुभव के स्वर	183
	2. कार्यशाला का स्वरूप	198
	3. कार्यशाला में प्रदत्त विषयों का संक्षिप्त सार	202
	4. रजिस्ट्रेशन फॉर्म	212
	5. प्रशिक्षणार्थी अनुभव पत्रक	213
	6. प्रेरक गीत : समय का अंकन हो	214
	7. अणुव्रत : मानवीय आचार संहिता	215
	8. सार्वजनिक भाषण कला	216
	9. सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ	224
	10. कार्यशाला : प्रमाण पत्र	226

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विषयानुक्रम

(1) व्यक्तित्त्व विकास और स्व–प्रबन्धन 1–13

1.0 सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास – 1.1 शारीरिक विकास, 1.2 बौद्धिक विकास, 1.3 मानसिक विकास, 1.4 भावात्मक विकास, 1.5 सामाजिक विकास, 1.6 आध्यात्मिक विकास, 2.0 व्यक्तित्व विकास के सोपान – 2.1 व्यक्तित्व की भूमिकाएं और सोपान, 2.2 स्वयं की पहचान, 3.0 अध्यात्म और विज्ञान – 3.1 चेतना विज्ञान, 3.2 स्व–प्रबन्धन, 3.3 स्व–प्रबन्धन और प्रेक्षाध्यान, 3.4 स्व–प्रबन्धन और अध्यात्म

(2) प्रेक्षाध्यान और अखण्ड व्यक्तित्व विकास 14–28

1.0 अखण्ड व्यक्तित्व और प्रेक्षाध्यान – 1.1 सहायक अंग, 1.2 मुख्य अंग, 1.3 विशिष्ट अंग, 2.0 व्यक्तित्व : स्वरूप और संरचना – 2.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व, 2.2 शरीर के स्तर, 2.3 चेतना के स्तर, 3.0 व्यक्तित्व कार्य प्रणाली और प्रेक्षा – 3.1 व्यक्तित्व विघटन, 3.2 प्रेक्षाध्यान : अखण्ड व्यक्तित्व का विकास, 4.0 प्रेक्षाध्यान की विशेषताएं – 4.1 अनुभव परक, 4.2 विज्ञान सम्मत और स्वास्थ्य संवर्द्धक, 4.3 सीखने में सरल

(3) समय प्रबन्धन 29–37

1.1 समय प्रबन्धन : महत्त्व – 1.2 सुसंगठित व सार्थक व्यक्तित्व, 1.3 सफल जीवन, 2.1 समय प्रबन्धन : लक्ष्य निर्माण – 2.2 प्राथमिकताओं का निर्धारण, 2.3 समय विश्लेषण, 2.4 कार्य विभाजन और निरीक्षण, 3.1 आत्म विकास – 3.2 स्वयं के लिए समय, 3.3 आत्म निरीक्षण, 4.0 समय प्रबन्धन का प्रयोग

(4) स्मृति–विकास 38–49

1.0 स्मृति और विस्मृति – 1.1 स्मृति का महत्त्व, 1.2 विस्मृति के कारण, 2.0 स्मृति–प्रशिक्षण – 2.1 रूचि, 2.2 एकाग्रता, 2.3 सम्बन्ध संयोजना, 2.4 पुनरावर्तन, 3.0 सुदृढ़ स्मृति और अध्ययन शैली – 3.1 सर्वावलोकन, 3.2 पूर्वावलोकन, 3.3 अन्तरावलोकन, 3.4 पुनरावलोकन, 4.0 मस्तिष्क की क्षमता और प्रेक्षाध्यान – 4.1 स्मृति विकासक प्रयोग : महाप्राण ध्वनि, 4.2 ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का ध्यान

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(7) कार्यक्षमता का विकास 80–92

1.0 कार्य क्षमता – 1.1 दायित्व वृद्धि : क्षमता में कमी, 2.0 कार्य क्षमता का आधार – 2.1 ज्ञान, 2.2 एकाग्रता, 3.0 मानसिक प्रशिक्षण – 3.1 मानसिक एकाग्रता, 3.2 मानसिक एकाग्रता का उपाय : श्वास प्रेक्षा, 3.3 श्वास प्रेक्षा एवं श्वसन तंत्र, 3.4 वैज्ञानिक दृष्टि से श्वास, 4.0 एकाग्रता का अभ्यास – 4.1 ज्ञान और अभ्यास, 4.2 अभ्यास से असंभव भी संभव, 4.3 अभ्यास और निरन्तरता, 4.4 अभ्यास और संकल्प, 5.0 प्रयोग–प्रविधि – 5.1 दीर्घ श्वास प्रेक्षा, 5.2 लयबद्ध श्वास प्रेक्षा

(8) स्वास्थ्य प्रबंधन 93–104

1.0 स्वास्थ्य – 1.1 शरीर की संरचना, 2.0 स्वास्थ्य की व्यवस्था – 2.1 व्यवस्था में अव्यवस्था, 2.2 दर्द रूपी घन्टी, 2.3 दर्द सहने की क्षमता, 2.4 दर्द की अनुभूति, 3.0 स्वास्थ्य प्रबंधन और प्रेक्षाध्यान – 3.1 प्रेक्षाध्यान : शरीर प्रेक्षा, 3.2 शरीर प्रेक्षा के परिणाम, 3.3 स्वास्थ्य की अनुप्रेक्षा

xx

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(5) तनाव–प्रबंधन 50–64

1.0 तनाव : क्या और क्यों ? – 1.1 तनाव के कारण, 1.2 तनाव के लक्षण, 1.3 तनाव के प्रकार, 2.0 शारीरिक तनाव – 2.1 पेशीय संकुचन, 2.2 रासायनिक घटनाएं, 2.3 पेशी श्रान्ति, 2.4 पेशी शिथिलन, 3.0 मानसिक/भावनात्मक तनाव – 3.1 दबाव तन्त्र, 3.2 असामान्य परिवर्तन, 4.0 तनाव के दुष्परिणाम, 5.0 तनाव का उपचार : कायोत्सर्ग – 5.1 कायोत्सर्ग का पुनः पुनः अभ्यास, 5.2 मांसपेशीय स्वास्थ्य, 6.0 तनाव–प्रबंधन – प्रयोग – 6.1 प्रयोग–प्रविधि

(6) उच्च मानसिक शक्तियों का विकास 65–79

1.0 शक्ति का स्वरूप – 1.1 शक्ति : आध्यात्मिक दृष्टिकोण, 1.2 शक्ति : वैज्ञानिक दृष्टिकोण, 2.0 उच्च मानसिक शक्तियां – 2.1 तर्क शक्ति, 2.2 अन्तर्दृष्टि, 2.3 उच्च गणनाएं, 3.0 उच्च मानसिक शक्ति का आधार – 3.1 शक्ति का भण्डार, 3.2 शक्ति का उपयोग, 4.0 शक्ति का ऊर्ध्वारोहण – 4.1 शक्ति का ऊर्ध्वारोहण और अन्तर्यात्रा, 4.2 प्रयोग प्रविधि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(9) सकारात्मक दृष्टिकोण और आत्म-विश्वास 105–120

1.0 आत्म–विश्वास – 1.1 सकारात्मक दृष्टिकोण, 1.2 आत्म-विश्वास : अर्थ और स्वरूप, 1.3 आत्म-विश्वास और आत्म-हीनता, 1.4 आत्म-हीनता के दुष्परिणाम, 1.5 आत्म-विश्वास के सुपरिणाम, 2.0 सुदृढ़ आत्म-विश्वास – 2.1 आत्म-विश्वास में अभिवृद्धि का उपाय, 2.2 प्रेक्षा एवं प्रेक्षा के परिणाम, 2.3 परिपूर्णता के प्रयास, 3.0 आत्म-विश्वास और अन्तर्दृष्टि – 3.1 अन्तर्दृष्टि और प्रेक्षाध्यान, 3.2 चैतन्य केन्द्र और आधुनिक विज्ञान, 3.3 अनिष्ट भाव और गोनाड्स ग्रन्थि, 3.4 विवेक चेतना और अन्तर्दृष्टि, 4.0 अन्तःस्रावी ग्रन्थि तंत्र का संतुलन और दर्शन केन्द्र प्रेक्षा – 4.1 प्रयोग प्रविधि

(10) भावात्मक विकास और भावात्मक स्वास्थ्य 121–133

1.0 भावात्मक विकास – 1.1 भावात्मक विकास और अनुसंधान, 2.0 भावात्मक बुद्धि (**Emotional Intelligence**) 2.1 स्व – जागरूकता, 2.2 मनोदशाओं का प्रबन्धन, 2.3 अन्तःप्रेरणा, 2.4 संवेग नियंत्रण, 2.5 पारस्परिक सौहार्द, सम्पर्क एवं सम्प्रेषण, 3.0 संवेग–प्रबन्धन – 3.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व, 4.0 भावात्मक रुग्णता – 4.1 क्रोध, 4.2 मान, 4.3 माया, 4.4 लोभ, 5.0 भावात्मक स्वास्थ्य और प्रेक्षाध्यान – 5.1 भावात्मक स्वास्थ्य और स्वस्थ आभामण्डल, 5.2 शुभ भाव और लेश्याध्यान, 5.3 लेश्याध्यान : रंगों का ध्यान, 6.0 प्रयोग का अभ्यास – 6.1 प्रयोग प्रविधि

(11) लक्ष्य निर्माण और लक्ष्य प्राप्ति 134–148

1.0 लक्ष्य का महत्त्व – 1.1 लक्ष्य पर अनुसंधान, 1.2 लक्ष्य विहीनता के कारण, 1.3 सफल व्यक्तित्व, 2.0 लक्ष्य के प्रकार – 2.1 अन्तिम लक्ष्य, 2.2 दीर्घकालीन लक्ष्य, 2.3 अल्पकालीन लक्ष्य, 2.4 तत्कालीन लक्ष्य, 3.0 लक्ष्य का मनोविज्ञान – 3.1 लक्ष्य निर्माण और चेतन मन, 3.2 लक्ष्य प्राप्ति और अवचेतन मन, 4.0 अवचेतन मन से सम्पर्क – 4.1 हमारा मस्तिष्क, 4.2 मस्तिष्कीय तरंगे, 4.3 दायां मस्तिष्क एवं अल्फा तरंगें, 4.4 अल्फा तरंगें एवं कायोत्सर्ग, 5.0 लक्ष्य प्राप्ति और प्रेक्षाध्यान – 5.1 अभिप्रेरणा, 5.2 शिथिलीकरण, 5.3 एकाग्रता, 5.4 साक्षात्कार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(12) व्यसन की समस्या : प्रेक्षा का समाधान 149–157

1.0 व्यसन–मुक्त व्यक्तित्व – 1.1 स्वस्थ समाज, 2.0 व्यसन का प्रभाव – 2.1 शारीरिक प्रभाव, 2.2 व्यसन और मनोभाव, 2.3 व्यसन : समाज और राज्य, 2.4 व्यसन और परिवार, 2.5 व्यसन और आर्थिक क्षति, 3.0 व्यसन : कारण और निवारण – 3.1 व्यसन का समाधान, 3.2 व्यसन मुक्ति और प्रेक्षा प्रयोग, 3.3 व्यसन मुक्ति शिविर की उपलब्धियां

(13) अभिव्यक्ति कौशल का विकास 158–170

1.0 अभिव्यक्ति कौशल – 1.1 अभिव्यक्ति कौशल का महत्त्व, 1. 2 अभिव्यक्ति का स्वरूप, 2.0 अभिव्यक्ति के कारक तत्त्व – 2.1 सौहार्दपूर्ण व सहयोगात्मक सम्बन्ध, 2.2 आत्म–विश्वास, 2.3 स्पष्टता, 2. 4 ग्रहण क्षमता, 2.5 संवेग–नियंत्रण, 2.6 सीखने की इच्छा, 2.7 प्रामाणिकता, 3.0 अभिव्यक्ति की दक्षताएं – 3.1 निर्देशात्मक अभिव्यक्ति, 3.2 सूचनात्मक अभिव्यक्ति, 3.3 चुनौतीपूर्ण अभिव्यक्ति, 3.4 विरेचनात्मक अभिव्यक्ति, 3.5 प्रेरणात्मक अभिव्यक्ति, 3.6 सहयोगात्मक सम्प्रेषण

(14) लेखन क्षमता का विकास – 171–179

1.0 लेखन का प्रयोजन – 1.1 स्व–पर विकास, 2.0 स्व–प्रबन्धन – 2.1 संस्कारों का विवेचन, 2.2 मार्ग–दर्शन, 2.3 जीवन–विकास का साधन, 2.4 जीवन में सन्तुलन, 3.0 सम्प्रेषण की शक्ति का विकास – 3.1 अध्ययन की गहनता, 3.2 समस्याओं का समाधान, 4.0 लेखन की प्रक्रिया – 4.1 प्रथम चरण, 4.2 दूसरा चरण

सार–संक्षेप 180–181

परिशिष्ट : 182–226

प्रेक्षाध्यान : व्यक्तित्व विकास कार्यशाला – 1. संभागियों के अनुभव – (1) शाहदारा, दिल्ली, (2) गांधीनगर, दिल्ली, (3) छोटी खाटू, राजस्थान, 2. कार्यशाला का स्वरूप, 3. कार्यशाला में प्रदत्त विषयों का संक्षिप्त सार, 4. रजिस्ट्रेशन (प्रवेश) फार्म, 5. अनुभव प्रपत्र, 6. गीत – समय का अंकन हो, 7. अणुव्रत : मानवीय आचार संहिता, 8. सार्वजनिक भाषण कला, 9. सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ, 10. प्रमाण–पत्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

व्यक्तित्त्व विकास और स्व–प्रबन्धन

रूपरेखा

1.0 सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास
- 1.1 शारीरिक विकास
- 1.2 बौद्धिक विकास
- 1.3 मानसिक विकास
- 1.4 भावात्मक विकास
- 1.5 सामाजिक विकास
- 1.6 आध्यात्मिक विकास

2.0 व्यक्तित्व विकास के सोपान
- 2.1 व्यक्तित्व की भूमिकाएं और सोपान
- 2.2 स्वयं की पहचान

3.0 अध्यात्म और विज्ञान
- 3.1 चेतना विज्ञान
- 3.2 स्व–प्रबन्धन
- 3.3 स्व–प्रबन्धन और प्रेक्षाध्यान
- 3.4 स्व–प्रबन्धन और अध्यात्म

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

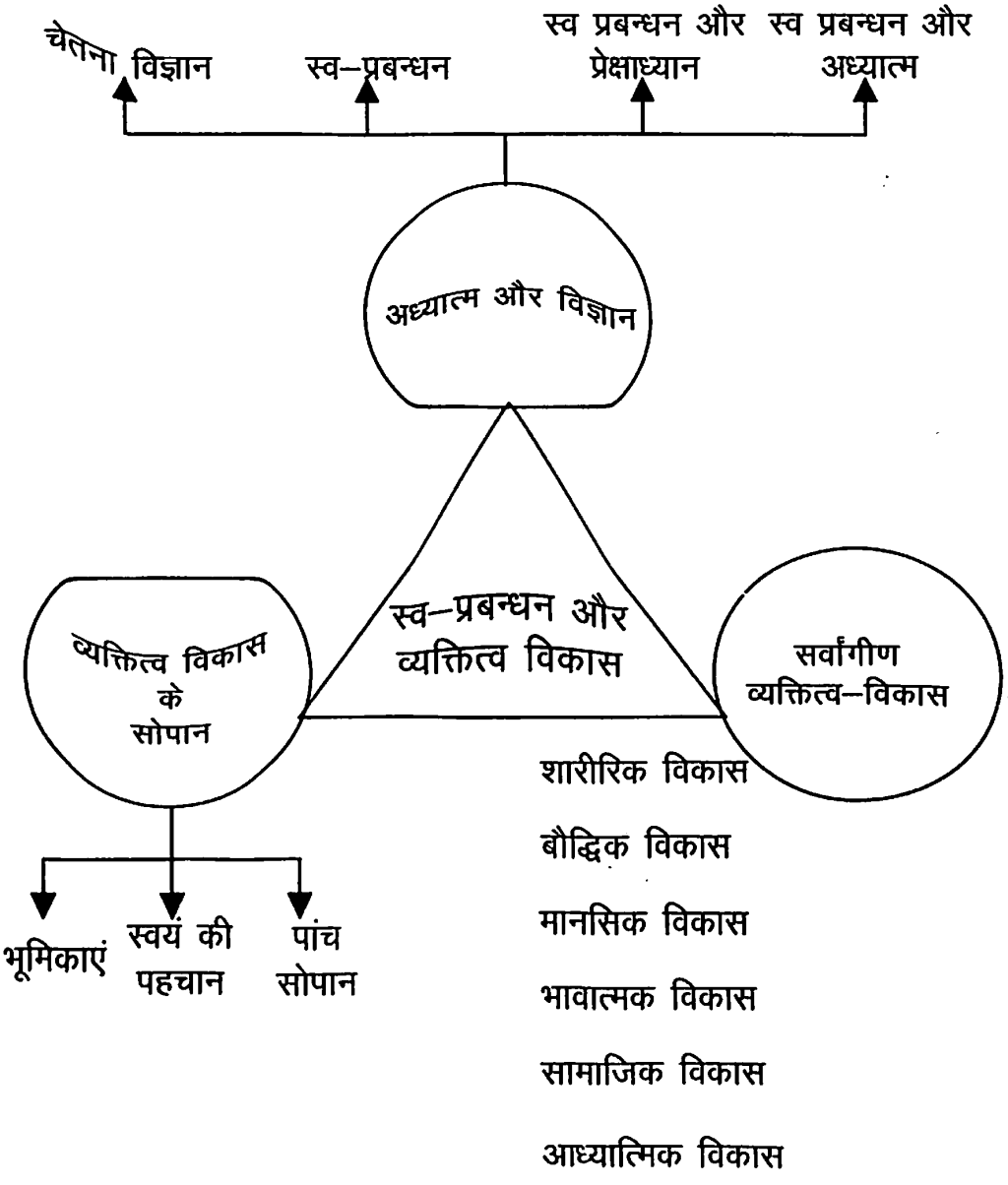

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. व्यक्तित्व विकास और स्व–प्रबन्धन

1.0 सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास

आज 'पर्सनलिटी' (Personality) शब्द बहुत प्रचलित है। यह आज के युवा मानस का प्रिय शब्द है। प्रत्येक युवक चाहता है कि उसकी पर्सनलिटी अच्छी बने, आकर्षक बने। यह आज की युवा पीढ़ी की चिन्ता है। पर्सानलिटी का सामान्यतया अर्थ लिया जाता है – व्यक्तित्व का बाह्य रूप। व्यक्ति की वेश–भूषा, शारीरिक गठन व बाह्य सौन्दर्य आदि। यह बाह्य रूप व्यक्तित्व का अंशमात्र है। सर्वांगीण व्यक्तित्व तब निखरता है जब उसके सारे आंतरिक आयाम और बाह्य पक्ष उज्ज्वल बनते हैं, उनमें निरन्तर निखार आता है और सभी पक्षों का संतुलित विकास होता है।

1.1 शारीरिक विकास

हमारे व्यक्तित्व के अनेक आयाम हैं– शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, सामाजिक, भावात्मक व आध्यात्मिक। सामान्यतया युवकों का ध्यान शारीरिक आयाम व बाह्य पक्ष पर ही अधिक टिकता है। यह सत्य है कि पहली नजर में बाह्य रूप ही आकर्षण का केन्द्र होता है। शारीरिक विकास के लिए व्यक्ति खेलकूद, व्यायाम, योगासन आदि को अपनाता है। यथोचित शारीरिक पक्ष को पुष्ट करता है, परन्तु व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए सभी पक्षों पर ध्यान देना आवश्यक है।

1.2 बौद्धिक विकास

व्यक्ति के बौद्धिक विकास के लिए आज की शिक्षा पद्धति पूरी तरह लगी हुई है। वर्तमान शिक्षा पद्धति बौद्धिक विकास के लिए अनेक विषयों से व्यक्ति को परिचित कराती है। गणित, विज्ञान आदि अनेक विषय हमारे समझने की शक्ति, तार्किक शक्ति, चिन्तन शक्ति को विकसित करते हैं, किन्तु इनसे सम्पूर्ण मानसिक शक्तियों का विकास नहीं हो पाता है।

1.3 मानसिक विकास

व्यक्तित्व के मानसिक पक्ष का तात्पर्य है कि व्यक्ति में मानसिक एकाग्रता, मनोबल, मानसिक संतुलन व धैर्य कितना विकसित है। आज

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का युवा वर्ग व्यक्तित्व के इस पक्ष से अपरिचित है। यह जीवन का ऐसा पक्ष है जो हमारी सफलता का बहुत बड़ा आधार है पर आज हमारी शिक्षा प्रणाली इस कमी को पूरा करने में समर्थ नहीं है। अतः पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने शिक्षा जगत् के सामने जीवन विज्ञान का विकल्प प्रस्तुत किया है। यह जीवन विज्ञान मानसिक विकास और भावात्मक विकास की कमी को पूरा करता है।

1.4 भावात्मक विकास

भावात्मक पक्ष व्यक्तित्व का सबसे प्रबल व ठोस पक्ष है पर आज की युवा पीढ़ी सबसे अधिक इसी से वंचित है। भावात्मक पक्ष के विकास का तात्पर्य है कि व्यक्ति अपने नकारात्मक भावों का परिष्कार कर सके जिससे उसमें सकारात्मक भावों का विकास हो। मुख्य नकारात्मक भाव हैं – क्रोध, अहंकार, लालच, कुटिलता, भय, वासना आदि। इनके परिष्कार द्वारा करुणा, विनम्रता, सरलता, संयम, निर्भयता, पवित्रता आदि सकारात्मक भावों का विकास हो।

कुछ दिनों पूर्व एक युवक आया। उसने कहा "मुझे छोटी–छोटी बातों पर बहुत जल्दी आक्रोश आ जाता है। मैं उस क्रोधावस्था में बहुत कुछ कह देता हूं, बाद में क्रोध शान्त होने पर मुझे बहुत दुःख होता है। अनेक बार स्थिति बहुत जटिल हो जाती है। स्थिति बिगड़ जाती है। मुझे क्या करना चाहिए?" वस्तुतः हम सब क्रोध के दुष्परिणामों से परिचित हैं। अतः सहिष्णुता, मृदुता, विनम्रता, सरलता आदि सकारात्मक भावों का मूल्यांकन करें। ये भाव हमारे व्यक्तित्व को ऊंचा उठाने में, शान्ति की अनुभूति में सहायक होते हैं। इन भावों के अभाव में ऊंचे से ऊंचा ओहदा, बड़ी से बड़ी सफलता, सारी सुख–सुविधाएं एवं समृद्धि व्यक्ति को शान्ति नहीं दे सकती। अपेक्षा है कि हम इस भावात्मक पक्ष पर ध्यान केन्द्रित करें।

1.5 सामाजिक विकास

व्यक्तित्व का सामाजिक पक्ष उन गुणों से संबंधित है जिससे व्यक्ति परिवार व समाज में तालमेल बिठा सके, सामंजस्य स्थापित कर सके, विभिन्न परिवेश व व्यक्तियों से समायोजन कर सके, समय आने पर समूह का नेतृत्व भी कर सके। इस पक्ष का विकास सामाजिक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसके अभाव में घर–परिवार नरक बन जाता है और समाज रुग्ण।

1.6 आध्यात्मिक विकास

आध्यात्मिक पक्ष का तात्पर्य है कि व्यक्ति अपने आपको पहचाने, अपने आप से परिचित हो। व्यक्ति अपने मूल स्वरूप, शुद्ध चैतन्य से परिचित हो और वास्तविक गुण, योग्यता, अर्हता से भी परिचित हो। इसके साथ–साथ वह अपनी दुर्बलता, कमी या दोषों को भी पहचाने। आध्यात्मिक पक्ष व्यक्तित्व का आधारभूत पक्ष है। व्यक्ति जब इस पक्ष पर ध्यान देता है तो उससे उसके सभी पक्ष विकसित होने लगते हैं। जब व्यक्ति अपने गुणों को पहिचान लेता है तब उसमें शक्ति के सही दिशा में नियोजन की संभावनाएं बनती है। जब व्यक्ति अपने दोषों को देखता है तो उससे बचने की योग्यता विकसित होती है। जो व्यक्ति अपने गुण–दोषों को देखता है वह दोषों से खिन्न नहीं होता क्योंकि वह गुणों को भी देखता है। इसी प्रकार जो गुणों को देखता है वह अहं से अभिभूत नहीं होता क्योंकि वह दोषों को भी देखता है। स्वयं के गुण–दोषों की समीक्षा या प्रेक्षा जीवन में समता और संतुलन का महत्त्वपूर्ण सोपान है।

2.0 व्यक्तित्व विकास के सोपान

भगवान ऋषभ समवसरण में विराजमान थे। उनके पास उनके पुत्र आये। अपनी समस्या रखी। भगवन् ! भरत हमारी स्वाधीनता और स्वतंत्रता में हस्तक्षेप कर रहे हैं, आपके दिये हुए राज्य को छीन रहे हैं। भगवान् ने समाधान के स्वरों में कहा – "संबुज्झह किं न बुज्झह सम्बोहि पेच्च दुल्लहा।" जागो ! क्यों नहीं जाग रहे हो ! अपने भीतर के उस असीम व शाश्वत राज्य के प्रति जागो ! आगे बढ़ो, अपने अन्तर्राज्य को प्राप्त करो। अपने अस्तित्व आत्मा को उपलब्ध करो। यह अवसर दुर्लभ है। वे जाग गये। समाधान को पा लिया। हमेशा के लिए स्वतंत्र हो गये, मुक्त हो गये।

निराशा और हताशा व्यक्तित्व विकास की गति में अवरोध है। निराशा कब आती है? जब व्यक्ति केवल अंधकार पक्ष को ही देखता है। प्रकाश को देख ही नहीं पाता, तब निराशा आती है। महापुरुषों द्वारा दिखाई गई प्रकाश की मात्र एक रश्मि व्यक्ति में आशा का संचार कर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देती है। क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जिसमें प्रकाश न हो ? क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जिसमें केवल अंधकार ही हो ? क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जिसमें कोई अच्छाई न हो ? कोई नहीं। प्रश्न इतना ही है कि हम किसके प्रति जागरूक हैं। संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसमें गुण और अवगुण दोनों न हो। बस अपेक्षा इतनी है कि हम अपने गुणों के प्रति जाग जाएं। हमारी शक्ति व समय का अधिक से अधिक उपयोग गुणों के विकास में करें।

2.1 व्यक्तित्व की भूमिकाएं एवं सोपान

जागरण व्यक्तित्व विकास का प्रथम सोपान है। गुण और अवगुण के प्रति जागृति के अनुसार व्यक्तित्व की चार भूमिकाएं सामने आती हैं–

1. गुणों के प्रति सुप्त तथा अवगुणों के प्रति भी सुप्त – अविकसित व्यक्तित्व।
2. गुणों के प्रति सुप्त तथा अवगुणों के प्रति जागृत – अधोगति व्यक्तित्व।
3. गुणों के प्रति जागृत तथा अवगुणों के प्रति सुप्त एवं लापरवाह – विकासशील किन्तु बुराई ग्रस्त, अन्ततः पतनमुखी व्यक्तित्व।
4. गुणों के प्रति जागरूक तथा अवगुणों के प्रति भी जागरूक – विकासशील व्यक्तित्व।

सफल व्यक्तित्व के निर्माण के लिए चतुर्थ भूमिका को स्वीकार करना होगा। गुणों के प्रति जागरुक होकर उसमें समय व शक्ति का समुचित नियोजन करना होगा। अवगुणों में नियोजित समय व शक्ति को हटाना होगा। चतुर्थ भूमिका पर आरोहण के पांच सोपान हैं –

1. स्वयं की पहचान – अपनी दुर्बलताओं और विशेषताओं का भान करना।
2. अपनी विशेषताओं का विकास करना।
3. अपनी दुर्बलताओं को समाप्त करने के लिए अपनी विशेषताओं का कारगर ढंग से उपयोग करना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. अपनी क्षमताओं को एक सही दिशा में नियोजित करना।
5. अपनी क्षमताओं का स्व–पर कल्याण की भावना से अधिकतम उपयोग करना।

2.2 स्वयं की पहचान

समयस्या यह है कि स्वयं की पहिचान कैसे हो? किस प्रकार स्वयं के गुणों और अवगुणों की पहचान करें? किस प्रकार समय और शक्ति का सही नियोजन करें? किस प्रकार अवगुणों को दूर करें?

स्वयं के गुण–अवगुणों की पहचान के लिए अनेक उपाय हो सकते हैं। उन्हें मुख्य दो भागों में बांट सकते हैं –

(अ) स्वयं के द्वारा स्वयं का बार बार अवलोकन करना।

(ब) विश्वस्त, गंभीर, विशेषज्ञ व्यक्तियों से परामर्श करना।

(अ) स्वयं के द्वारा स्वयं का अवलोकन

आत्म निरीक्षण करना ही प्रेक्षा है। इसकी पूरी पद्धति है। इसमें स्वयं के द्वारा स्वयं का अवलोकन किया जाता है। प्रेक्षाध्यान पद्धति में साधक 'प्रतिक्रमण योग' का अभ्यास करते हैं। इसके भी दो रूप हैं– लिखित और सुबह–सायं मानसिक रूप से ।

(i) डायरी लेखन

प्रतिदिन का लेखा जोखा करना व रखना डायरी लेखन है। विश्व की महान् विभूतियों में से अनेकों ने डायरी लेखन किया है। वे उनसे लाभान्वित होते रहे हैं। वे ही नहीं उनसे दूसरे लोग भी अमूल्य प्रेरणाओं को प्राप्त करते हैं। महात्मा गांधी डायरी लिखते थे। उनसे वे स्वयं तो लाभान्वित हुए ही, अन्य हजारों लोग भी लाभान्वित होते रहे हैं। पिछले पच्चीस वर्षों से मैं यदा कदा डायरी लिखता रहा हूं। इस लेखन के प्रारम्भ में कठिनाइयां आई किन्तु कालान्तर में वे स्वतः समाहित हो गईं। इससे मैं बहुत लाभान्वित हुआ और अनुभव भी निरन्तर बढ़ा है। इससे अपने आप को समझने में बहुत अधिक मदद मिली। मेरी डायरी लेखन में इन तथ्यों का समावेश विशेष रूप से हुआ। वे तथ्य हैं– (1) स्व–विश्लेषण (2) पर–गुण विश्लेषण, (3) स्वतः सुझाव, (4) स्वकथ्य, (5) स्व समीक्षा, (6) घटना के प्रति अपना चिन्तन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(7) किसी एक विषय पर नये नये प्रयोग, अवलोकन, विश्लेषण, सामान्य नियम का निर्माण व परीक्षण।

उपरोक्त तथ्यों के लेखन व विश्लेषण से स्वयं के गुण दोषों को पहचानने में मदद मिली। इसी के अन्तर्गत दूसरा उपाय है – दैनिक अवलोकन।

(ii) दैनिक मानसिक अवलोकन

यह मानसिक अवलोकन दिन भर में की जाने वाली क्रियाओं का क्रमिक स्मरण है। पुनरावलोकन के अन्तर्गत दिन भर मे की गई क्रियाओं का पुनः अवलोकन सोने से पूर्व किया जाता है। पुनरावलोकन से अपनी अच्छाई व बुराई, गुण–दोष, सबल–दुर्बल पक्ष की जानकारी मिलती है। पुर्वावलोकन प्रातः उठने के बाद दिन भर में की जाने वाली क्रियाओं का पूर्व स्मरण है। इससे उनके प्रति जागरुकता व सतर्कता का संकल्प जागता है।

(ब) विश्वस्त, गंभीर व विशेषज्ञ व्यक्तियों से परामर्श

स्वयं की पहचान का दूसरा उपाय है– विश्वस्त, गंभीर व विशेषज्ञ पुरुषों से अपने बारे में जानना। विश्वस्त व्यक्तियों में अपने माता–पिता तथा परिजन आते हैं जो सदैव हमारे हित में सोचते हैं, उनसे भी हम अपने बारे में पता कर सकते हैं। गुरुजन, अध्यापक, शिक्षक, संत–मुनिगण गंभीर होते हैं वे दूसरों का, अपने शिष्यों का हित चाहते हैं। उनसे भी हम अपने बारे में जान सकते हैं। विशेषज्ञ में उनको ले सकते हैं जो अपनी विद्या की विशिष्टता द्वारा हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं। जैसे– मनोवैज्ञानिक अपने ज्ञान तथा उपलब्ध परीक्षणों द्वारा व्यक्ति को स्वयं की विशेषाताओं और दुर्बलताओं से परिचित करा कर मार्गदर्शन कर सकते हैं। इसी प्रकार हस्तरेखा विशेषज्ञ तथा कुण्डली विशेषज्ञ भी व्यक्ति को उसकी विशेषताओं एवं दुर्बलताऔं से परिचित कराकर मार्गदर्शन कर सकते हैं।

3.0 अध्यात्म और विज्ञान

प्राचीन काल से ही जीवन की मुख्य दो धाराएं मानी जाती रही हैं– अध्यात्मवादी एवं भौतिकवादी। जीवन की यात्रा का निर्वाह कोरे अध्यात्मवाद से संभव नहीं है। जीवन में शान्ति और समाधि कोरे

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पदार्थवाद से भी संभव नहीं हैं। जीवन निर्वाह के लिए पदार्थ आवश्यक है तो जीवन में शान्ति एवं समाधि के लिए अध्यात्म। एकांतिक–दृष्टिकोण से जीवन कभी सफल नहीं हो सकता। सफलता का सूत्र है अनेकान्त का दृष्टिकोण। यह भगवान महावीर का एक प्रमुख संदेश रहा है। मनोवैज्ञानिक भी इस सच्चाई का अनुभव करने लगे हैं।

3.1 चेतना विज्ञान

इस सत्य को आज प्रबुद्ध लोग भी अनुभव कर रहे हैं। इसी का परिणाम है कि प्रसिद्ध वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, पर्यावरण वैज्ञानिक, चिकित्सक, समाजशास्त्री, शांति अन्वेषक आदि मनीषियों का रूझान अध्यात्म–अन्वेषण की ओर झुका है। इन मनीषियों ने अध्यात्म को अपने क्षेत्र से जोड़कर अपूर्णता को पूर्णता एवं एकान्तिकता को अनेकान्तिकता में परिवर्तन करने की तीव्र अभिरूचि जागी है। इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है– भौतिक विज्ञान की सलाहकार समिति के परामर्श को पढ़ने से।[1]

यह घटना 1982 की है। अमरिका की सरकार ने अपनी वैज्ञानिक सलाहकार समिति से परामर्श मांगा कि आने वाले सौ साल बाद किस प्रकार के वैज्ञानिक अनुसंधान की जरूरत होगी ? आप हमें बताएं। उस दिशा में अभी से कार्य प्रारम्भ करें। उसके लिए जितना भी अनुदान अपेक्षित है, वह हमसे लें। वैज्ञानिक सलाहकार समिति ने कहा – आने वाले सौ साल पश्चात् हमें– "चेतना के भौतिक विज्ञान" (Physics of Consciousness) की जरूरत होगी। "मन और शरीर" के अन्तःसंबंधों की जानकारी की जरूरत होगी। क्योंकि मन/चेतना में देश और काल से परे जानने की क्षमता है। अतः इस दिशा में अविलम्ब कार्य प्रारम्भ कर देना चाहिए।

इस प्रकार अध्यात्म के सिद्धान्तों की खोज, चेतना के नियमों की खोज विज्ञान की दिशा से भी प्रारम्भ हो गई हैं। यह केवल भौतिक विज्ञान की ही बात नहीं, जीव–विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान आदि सभी क्षेत्रों से ऐसी मांग प्रारम्भ हुई है।

---

1. Report to the house of Representatives, U.S.A. by the committee of Science & Techonogy.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.2 स्व–प्रबंधन

मनोवैज्ञानिकों ने स्वयं के द्वारा स्वयं के व्यक्तित्व विकास हेतु एक नई शाखा को विकसित किया है। उसका नाम है – स्व–प्रबन्धन। वस्तुतः इसे अध्यात्म का आधुनिक संस्करण भी कहा जा सकता है। इसमें स्वयं के जीवन के विकास पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया गया है।

अध्यात्म जीवन का अभिन्न अंग है। मूल अंग है। अध्यात्म के सिद्धान्त से रिक्त होकर जीवन का कोई भी क्षेत्र संतोषजनक प्रगति नहीं कर सकता। व्यक्ति का जीवन शांत व समाधिमय नहीं हो सकता। जहां जीवन को अध्यात्म से काट कर देखा गया, वहां अनर्थ ही घटित हुआ है, दुःख बढ़ा है, समस्याएं बढ़ी हैं। आज इसका अनुभव अनेक प्रबुद्ध मनीषि कर रहे हैं। वे अपने–अपने विषयों में अध्यात्म का प्रवेश कैसे हो ? कैसे उसके अधूरेपन को पूरा किया जाए ? इस पर गहन चिन्तन कर रहे हैं। कतिपय विद्वानों ने उसका समावेश भी किया है। इसका स्पष्ट प्रमाण है–आज के मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रदत्त "स्व–प्रबंधन" (Personal Management)।

"स्व–प्रबंधन" की धुरी दूसरे पर नहीं स्वयं पर आधारित है। स्व–प्रबंधन का केन्द्र बिन्दु बनाया गया है– स्वयं के प्रति जागरूकता को।[1] हजारों वर्षों से अध्यात्म का सूत्र रहा है –"स्वयं को जानो"। स्वयं के प्रति जागरूक रहो।

स्व–प्रबंधन का अर्थ है– स्वयं का प्रबंधन, जिसका तात्पर्य है– आन्तरिक जगत् की भावना, कल्पना, चिन्तन और इच्छा का बाह्य जगत् से सम्बन्ध, कार्य–क्षेत्र और समाज के साथ सामंजस्य, समायोजन व व्यवस्थापन।

इसके लिए मात्र भौतिक विकास पर्याप्त नहीं, किन्तु आध्यात्मिक जागरण की अपेक्षा है। आज इसकी अनुभूति "स्व–प्रबंधन" करा रहा है। अच्छे वैयक्तिक प्रबंधन के लिए भी आध्यात्मिक जागरण की अपेक्षा महसूस की गई है। वे कहते हैं कि अच्छे प्रबंधन के लिए साहस एवं लचीलेपन की जरूरत है। अपने आपसे परिचित होने की

---

1. Personal Management page -19

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जरूरत है। अपनी योग्यता से परिचित होने की जरूरत है। इसके लिए सर्वाधिक आवश्यक है– निरन्तर जागरूक रहकर अपना निरीक्षण करना।

3.3 स्व–प्रबंधन और प्रेक्षाध्यान

"प्रेक्षाध्यान पद्धति" आध्यात्मिक उत्कर्ष की प्रक्रिया है। इसके सूत्र हैं – प्रवृत्ति और निवृत्ति का संतुलन, दिल और दिमाग का संतुलन। ये ही सूत्र आज "स्व–प्रबंधन" के केन्द्र में हैं। उनकी दृष्टि में स्व–प्रबन्धन का तात्पर्य है– जीवन में संतुलन बनाए रखना। परिवार और ऑफिस के समय का संतुलन। चिन्तन और भावना का संतुलन। 'करने' और 'होने' का संतुलन। कृतत्व और अस्तित्व–बोध का संतुलन।

अध्यात्म मनीषि आचार्य श्री महाप्रज्ञ का प्रसिद्ध सूक्त है –'रहो भीतर, जीयो बाहर।' इसी की ध्वनि हमें स्व–प्रबंधन में सुनाई देती है। प्रभावपूर्ण स्व–प्रबंधन का अर्थ है – आन्तरिक गतिविधियों एवं सामाजिक प्रवृत्तियों को स्व–बोध की दिशा में नियोजित करना। स्व–बोध का तात्पर्य है – अपने आप से परिचित होना। जो हम हैं, वही होना। अपनी विशिष्ट क्षमताओं का बोध करना। सार्थक लक्ष्य का निर्माण करना एवं सार्थक लक्ष्य को प्राप्त करना। यह स्व–बोध जीवन को गहनता, सार्थकता एवं दिशा–बोध से परिपूर्ण बनाता है।

बाहर में जीना अनिवार्य है, किन्तु केवल बाहर में जीने से संतोष, समाधि एवं शान्ति की अनुभूति संभव नहीं। बाहर एवं भीतर सामंजस्य स्थापित करने की अपेक्षा है। निश्चय एवं व्यवहार में संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है। बाहर में जीते हुए भी आन्तरिक अनुसंधान व अपने प्रति जागरूकता आवश्यक है। "स्व–प्रबंधन" का प्रमुख कार्य है– आन्तरिक अपेक्षाओं एवं सामाजिक अपेक्षाओं का कुशल समायोजन एवं सामंजस्य स्थापित करना। इसका तात्पर्य है– ऐसे कार्यक्षेत्र का चयन जो आन्तरिक आवश्यकता और बाह्य सामाजिक अपेक्षा की भी पूर्ति करता हो। प्रेक्षाध्यान का लक्ष्य है– "अप्पणा सच्चमेसेज्जा" –स्वयं सत्य की खोज करना।[1] उसकी प्रविधि है– "संपिक्खए अप्पगमप्पएणं" स्वयं स्वयं को जानना।[2] इसके अगले चरण हैं–

---

1. उत्तराध्ययन
2. दसवैकालिक–चूलिका द्वितीय

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. अपने में आस्था–निर्माण।
2. स्व–लक्ष्य का निर्माण।
3. शक्तियों का विकास।
4. समाधि, संतुलन एवं स्वस्थ जीवन के लिए शक्तियों का अधिकतम नियोजन।
5. तनावमुक्त जीवन।

इनकी तुलना वैयक्तिक प्रबंधन के इन चरणों से करें –

1. स्वयं की खोज (Self-discovery)
2. स्वयं में आस्था–निर्माण (Self-esteem), आत्म विश्वास।
3. जीवन में स्वनिर्देशन और कार्य क्षेत्र का चयन। (Self-direction and career selection)
4. स्वयं की योग्ताओं का विकास। (Developing capabilities)
5. स्वयं का प्रभावी नियोजन। (Effective self-involvement)
6. दबावों का कुशल प्रबन्धन। (Stress management)

तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन का कोई भी क्षेत्र अध्यात्म से अछूता नहीं है। अध्यात्म समग्र जीवन को प्रकाशित करता है। अध्यात्म विज्ञान इस समस्याकुल विश्व में व्यक्ति को शान्तिपूर्ण जीवन जीने की कला सिखाता है। यही उद्देश्य स्व–प्रबंधन का भी है। प्रेक्षाध्यान स्वयं की सुषुप्त शक्तियों से परिचित होने की अमोघ पद्धति है। इससे दूसरों को भी उनकी शक्तियों से परिचित कराने की योग्यता प्राप्त होती है। यह सन्तुष्ट एवं सफल जीवन जीने का मार्ग है। इससे व्यावहारिक संबंध मधुर एवं प्रभावशाली बनते हैं। यह अपने जीवन की लगाम अपने हाथ में लेने का प्रयोग है। इससे आन्तरिक जीवन एवं बाह्य जीवन का संतुलन स्थापित होता है। अपेक्षा है इसके सिद्धान्त, प्रयोग, उपयोग को समझने, सीखने और जीवन में अपनाने की।

3.4 स्व–प्रबंधन और अध्यात्म

स्व–प्रबंधन के विशेषज्ञों ने स्वास्थ्य और अधिकतम शक्ति को बनाये रखने के लिए आध्यात्मिक आयाम को अनिवार्य माना है। उन्हीं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

के शब्दों में –"Even those who reject religion must realise that the spiritual or soulful dimension is necessary to maintain health and full potential"[1] जो व्यक्ति धर्म को अस्वीकार करते हैं, उन्हें भी यह जानना चाहिए कि जीवन में स्वास्थ्य एवं स्वयं की अधिकतम शक्ति को बनाये रखने के लिए अध्यात्म या आत्मिक आयाम अनिवार्य है।

आज अपेक्षा है कि अध्यात्म के क्षेत्र में काम करने वाले लोग जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को अध्यात्म का अवदान दें जिससे जीवन में घटित होने वाली अशान्ति को कम किया जा सके। इस दृष्टि से अध्यात्म के सिद्धान्तों और प्रयोगों का जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़ी हुई समस्या का समाधान में उपयोग अपेक्षित है। आज उन क्षेत्रों से जुड़े हुए लोगों में यह प्यास जगी है। इस पर वे चिन्तन, मनन व अनुसंधान कर रहे हैं। अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय के इस युग में समन्वय ही विश्व में बढ़ते विनाशकारी कदमों को रोकने, मोड़ने और उनकी दिशा बदलने में सक्षम हैं। यह दिशा परिवर्तन ही स्वस्थ व्यक्ति और स्वस्थ समाज के निर्माण में सफल प्रस्थान सिद्ध होगा।

□□□

1. Personal Management. Page 71.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. प्रेक्षाध्यान और अखण्ड व्यक्तित्व विकास

रूंपरेखा

1.0 अखण्ड व्यक्तित्व और प्रेक्षाध्यान
    1.1 सहायक अंग
    1.2 मुख्य अंग
    1.3 विशिष्ट अंग
2.0 व्यक्तित्व : स्वरूप और संरचना
    2.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व
    2.2 शरीर के स्तर
    2.3 चेतना के स्तर
3.0 व्यक्तित्व कार्य प्रणाली और प्रेक्षा
    3.1 व्यक्तित्व विघटन
    3.2 प्रेक्षाध्यान : अखण्ड व्यक्तित्व का विकास
4.0 प्रेक्षाध्यान की विशेषताएं
    4.1 अनुभव परक
    4.2 विज्ञान सम्मत और स्वास्थ्य संवर्द्धक
    4.3 सीखने में सरल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

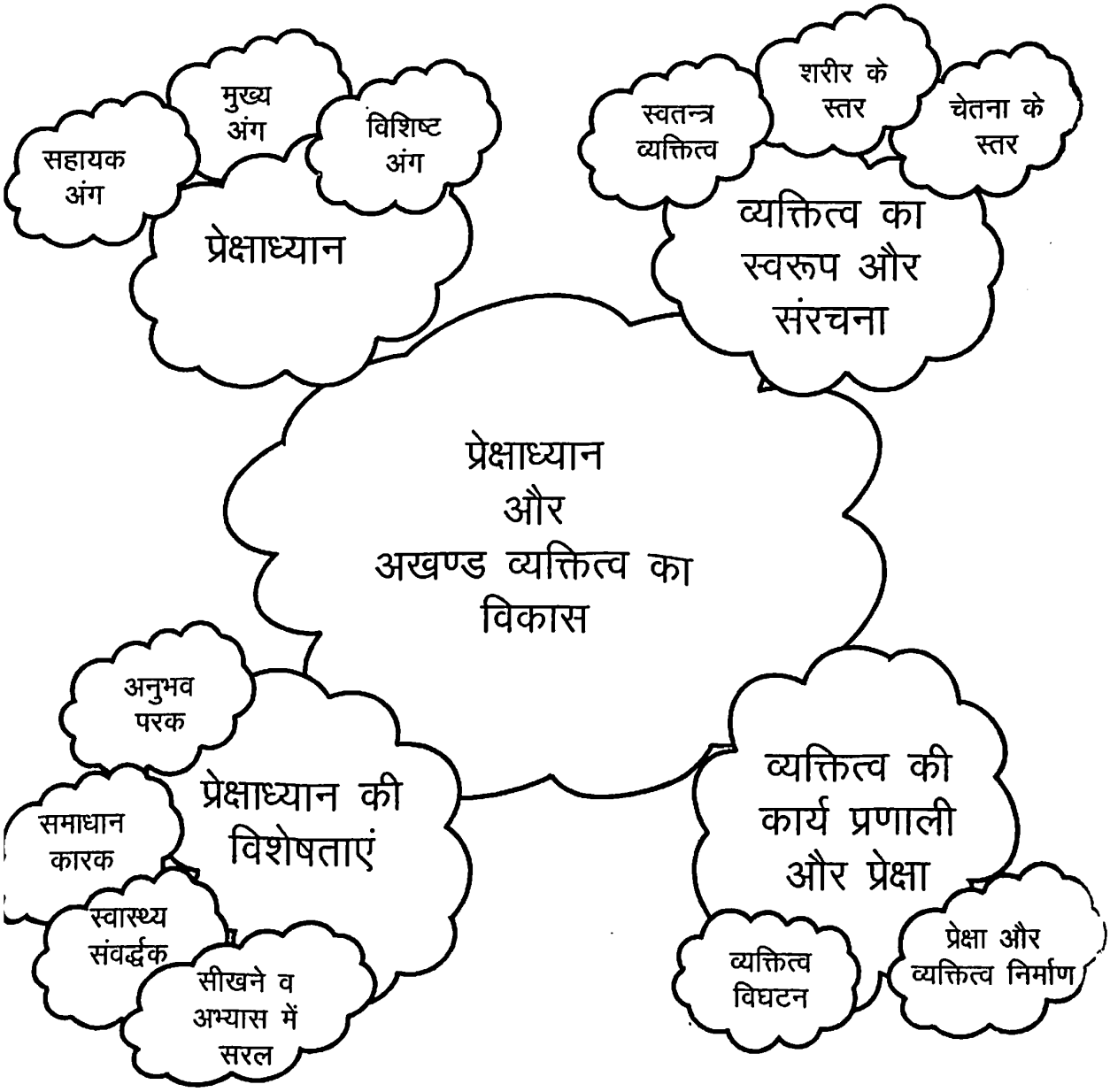

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. प्रेक्षाध्यान और अखण्ड व्यक्तित्व विकास

1.0 अखण्ड व्यक्तित्व और प्रेक्षाध्यान

जीवन निर्वाह के लिए भौतिक संसाधन एवं जीवन में शान्ति के लिए आध्यात्मिक अनुभूति की आवश्यकता होती है। दोनों के संतुलन से ही जीवन में सार्थकता, समृद्धि व सफलता प्राप्त होती है, किन्तु अत्यधिक भौतिक पदार्थों की आकांक्षा से संतुलन बिगड़ जाता है। व्यक्ति भावात्मक रूप से अस्थिर हो जाता है। इससे व्यक्ति का ग्रन्थि तंत्र गड़बड़ा जाता है। परिणाम स्वरूप व्यक्ति का अनुकम्पी नाड़ी तंत्र अधिक सक्रिय हो जाता है। मांसपेशियां तनावग्रस्त हो जाती हैं। उसका व्यवहार भी असंतुलित हो जाता है। यदि व्यक्ति सही समय पर नहीं संभले तो पारम्परिक संबंधों में दरारें पड़ने लगती हैं। व्यक्तित्व विखण्डित हो जाता है। अखण्ड व्यक्तित्व निर्माण के लिए व्यक्ति को अपनी चेतना की क्षमता और स्वतंत्र इच्छाशक्ति का उपयोग करना होगा। पुनः सम्पूर्ण शारीरिक तंत्रों में संतुलन स्थापित करते हुए अखण्ड व्यक्तित्व निर्माण की दिशा में अग्रसर होना होगा। ग्रन्थि तंत्र व नाड़ी तंत्र में संतुलन लाते हुए मांसपेशियों को तनावमुक्त करना होगा।

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व रूपान्तरण की एक शक्तिशाली प्रविधि है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हम अपनी चेतना की विलक्षण क्षमता "जागरूकता" का उपयोग करते हैं। इससे मांसपेशियों के तनाव को दूर करते हैं। नाड़ी–ग्रन्थितंत्र में संतुलन लाते हैं। अपने व्यवहार में परिवर्तन करते हैं। हम अपनी चेतना की शक्ति "जागरूकता" का अपनी इच्छा से उपयोग करते हुए अपने अस्तित्व के विभिन्न स्तरों को देखते हुए, अनुभव करते हुए उसमें रूपान्तरण घटित करते हैं। अपने व्यक्तित्व के विभिन्न स्तरों पर जागरूकता का अभ्यास इस पद्धति का आधार है। प्रेक्षाध्यान पद्धति के चार सहायक, आठ मुख्य एवं तीन विशिष्ट अंग हैं –

1.1 सहायक अंग

- आसन – शरीर को स्वस्थ, सुदृढ़, स्थिर व साधनानुकूल बनाये रखने में सहायता करते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

- प्राणायाम – प्राणशक्ति को संतुलित व विकसित करने में सहायता करते हैं।
- ध्वनि – विचारों को शान्त, मन को एकाग्र तथा बुरे कम्पनों से स्वयं की सुरक्षा करने में सहायता करती है।
- मुद्रा – पवित्र भाव को बनाये रखने और प्राण प्रवाह को एक निश्चित दिशा देने में सहायता करती है।

1.2 मुख्य अंग

- कायोत्सर्ग – व्यक्ति इसके द्वारा शरीर के प्रति जागरुक होकर अपने सुझावों द्वारा मांसपेशीय व स्नायविक तनावों को दूर कर स्वयं की अनुभूति करता है।
- अन्तर्यात्रा – इसके द्वारा व्यक्ति अपनी शक्तियों का उर्ध्वारोहण करता है।
- श्वास प्रेक्षा – इसमें श्वास के प्रति जागरुकता का अभ्यास किया जाता है जिससे एकाग्रता का विकास होता है।
- शरीर प्रेक्षा – इसमें शरीर के प्रत्येक अंग के प्रति जागरुकता का अभ्यास किया जाता है। इससे प्राण का संतुलन व स्वयं की चेतना की अनुभूति होती है।
- चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा – इसमें शरीर में निहित चेतना के विशिष्ट केन्द्रों पर जागरुकता का अभ्यास किया जाता है। इससे व्यक्तित्व की विशिष्ट क्षमताओं का जागरण होता है।
- लेश्याध्यान – इसमें अपने व्यक्तित्व की सूक्ष्म रंगीन तरंगों के प्रति जागरुकता का अभ्यास किया जाता है। इससे भावधारा निर्मल होती है। आभामण्डल विशुद्ध और तेजस्वी बनता है।
- अनुप्रेक्षा – इसमें शाश्वत सत्य के प्रति जागरुकता का अभ्यास किया जाता है। इससे शाश्वत् सत्य का बोध होता है। मन की मूर्च्छा टूटती है।
- भावना – इसमें सद्विचारों का बार बार पुनरावर्तन व अभ्यास किया जाता है। इससे सद् संस्कारों का निर्माण होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1.3 विशिष्ट अंग

- वर्तमान क्षण की प्रेक्षा – इसमें वर्तमान क्षण के प्रति जागरुकता का अभ्यास किया जाता है। इससे चेतना की अनुभूति प्रखर होती है।
- विचार प्रेक्षा – इसमें अपने विचारों के प्रति जागरुक रहने का अभ्यास किया जाता है। इससे बुरे संस्कारों से मुक्त होने में सहायता मिलती है।
- अनिमेष प्रेक्षा – पलक झपकाये बिना केवल जागरुकता का अभ्यास। इससे चेतना की शक्ति जागृत होती है। द्रष्टा का बोध विकसित होता है।

2.0 व्यक्तित्व : स्वरूप और संरचना

विभिन्न दर्शनों में व्यक्तित्व पर भिन्न भिन्न दृष्टिकोणों से विचार हुआ है। प्रेक्षा प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने व्यक्तित्व के स्वरूप को आधुनिक संदर्भों में समझाते हुए बताया है कि संसार में मुख्य रूप से दो प्रकार के तत्व हैं – सजीव और निर्जीव। सजीव वे तत्व हैं जिनमें चेतना है, आत्मा है। निर्जीव वे पदार्थ हैं जिनमें आत्मा या चेतना नहीं है। हमारे व्यक्तित्व में भी दोनों प्रकार के तत्वों का संयोग है। (चित्र 2.1) आत्मा के साथ निर्जीव जड़ पदार्थ भी जुड़ा हुआ है। अध्यात्म विज्ञान के अनुसार आत्मा के तीन मुख्य गुण है–आनन्द, ज्ञान और शक्ति। इसी प्रकार

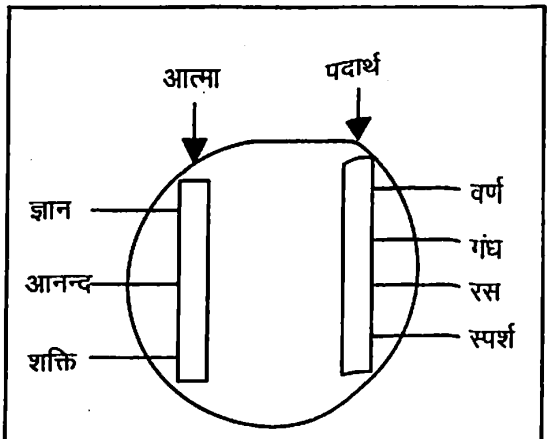

चित्र 2.1 व्यक्ति में दो तत्त्वों का संयोग

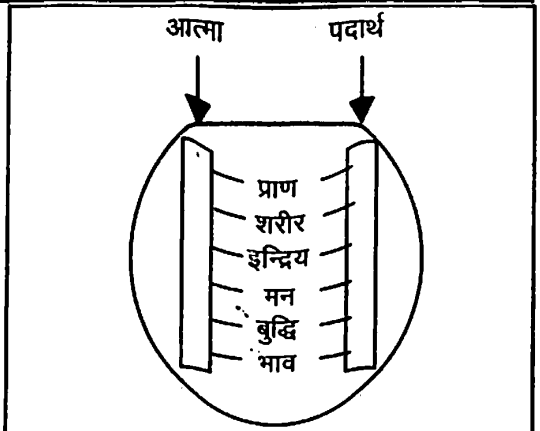

चित्र 2.2 दो तत्त्वों के संयोग से छः तत्त्व

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

व्यक्ति जब इन्द्रियों के माध्यम से जड़ को जानता है तब निर्जीव जड़ पदार्थ के भी मुख्य चार गुणों का बोध करता है– स्पर्श, रस, गंध और वर्ण। आत्मा और जड़ के संयोग से हमारे व्यक्तित्व में छह तत्वों का उद्‌भव होता है – प्राण, शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि और भाव। (चित्र 2.2) इन सब स्तरों पर हमारा सम्पूर्ण व्यक्तित्व संचालित होता है।

2.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व

सामान्यतया व्यक्ति इन्द्रियों के स्तर पर जीता है एवं इन्द्रियों के माध्यम से ही पदार्थों को जानता है। इनके गुण – स्पर्श, रस, गंध और वर्णों का अनुभव करता है। यदि यह अनुभव मन के प्रतिकूल होता है तो व्यक्ति में अप्रियता के भाव पैदा होते हैं। वह उसके लिए दुःख का कारण बनता है। वह उससे बचने का प्रयास करता है। यदि इसके विपरीत पदार्थ का अनुभव मन के अनुकूल होता है तो उसके भीतर प्रियता का भाव पैदा होते हैं। वह सुखानुभूति का कारण बनता है। वह उसको बनाये रखना चाहता है। बार बार चाहता है। पदार्थ से सुख की अनुभूति भी उसके एक सीमा तक उपयोग/उपभोग करने से ही प्राप्त होती है। अन्यथा वह भी दुःख का कारण बन जाती है। जैसे किसी व्यक्ति को मिष्ठान्न अत्यधिक प्रिय है। यदि उसको भी वह सीमा से या संयम से खाये तभी वह उसके लिए सुखद होगा। सीमा से अधिक खाने पर वही उसके लिए दुःख का कारण बन जायेगा। अतः स्वतन्त्र व्यक्तित्व विकास का पहला सूत्र है – पदार्थों के उपभोग में संयम का अभ्यास।

जीवन पदार्थ के बिना नहीं चल सकता किन्तु पदार्थ के प्रति अत्यधिक आसक्ति और इन्द्रिय सुखों में गृद्धि से व्यक्ति जीवन में आनन्द और शान्ति से वंचित हो जाता है। वह अपने वास्तविक स्वरूप/सत्य का बोध नहीं कर पाता। जितनी–जितनी आसक्ति बढ़ती है उतना– उतना असंयम और दुःख बढ़ता है। इससे शक्ति का ह्रास होता है, तनाव व थकान मे वृद्धि होती है, जागरुकता में कमी आती है। स्वार्थपरकता बढ़ती है। वह दूसरों के हितों की परवाह किये बिना संग्रह में लगा रहता है। इससे क्रूरता व हिंसा को भी बढ़ावा मिलता है। इससे आन्तरिक शान्ति और आनन्द की अनुभूति नहीं हो सकती। इससे कृत्रिम आवश्यकताएं और मांग ही बढ़ेगी। इससे प्रकृति का दोहन ही बढ़ेगा। सामाजिक और वैयक्तिक स्वास्थ्य में भी गिरावट आयेगी।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मूलतः आत्मा और शरीर भिन्न भिन्न है किन्तु कर्मों के बंधन के कारण हमारे व्यक्तित्व में आत्मा स्वतन्त्र नहीं है। अर्थात् हम स्वतन्त्र नहीं हैं। पदार्थों से प्रभावित होते हैं। शरीर के बंधन से भी बंधे हुए हैं। आत्मा की स्वतंत्र सत्ता को जानना, आत्मा के स्तर पर जीना, आत्मा को कर्मों के बंधन से मुक्त कर देना, स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास करना है। यह प्रेक्षाध्यान का मूल प्रयोजन है। इस यात्रा में दो बाधक तत्व हैं – प्रियता–अप्रियता के भाव तथा चंचलता। जागरुकता के अभ्यास द्वारा चंचलता को एवं प्रियता एवं अप्रियता के भावों को कम करना अर्थात् अनासक्त चेतना और एकाग्रता का विकास करना – प्रेक्षाध्यान के विभिन्न अंगों के विकास का आधार है।

2.2 शरीर के स्तर

वातावरण के प्रति जागरुकता एवं उसका ज्ञान चेतना के द्वारा होता है। हमारे व्यक्तित्व में चेतना के साथ पदार्थ भी जुड़ा हुआ है। यह पदार्थ शरीर के रूप में है। इसके तीन प्रकार हैं– स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्मतम। स्थूल शरीर अस्थि, मांस आदि से निर्मित है। दिखाई देता है। उसे दार्शनिक भाषा में औदारिक शरीर कहा गया है।

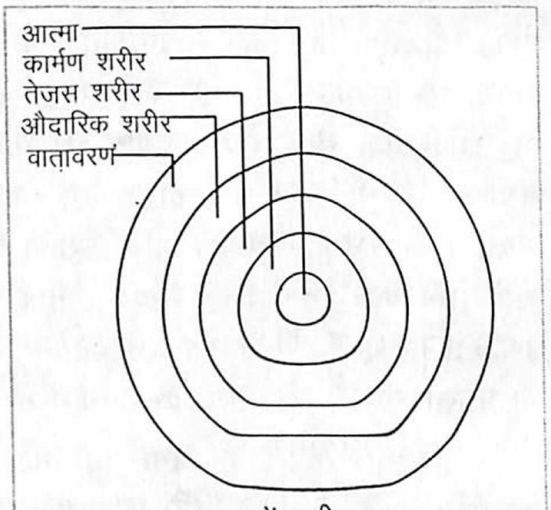

चित्र 2.3 व्यक्तित्व में शरीर के विभिन्न स्तर

सूक्ष्म शरीर का संबंध विद्युत ऊर्जा, प्राणशक्ति से है। सामान्यतया इसे आंखों से देख पाना संभव नहीं है किन्तु आजकल अति संवेदनशील उपकरणों (कैमरों) द्वारा इसके फोटो लिये जाते हैं। जिसे किर्लियन फोटोग्राफी कहते हैं। इसे दार्शनिक भाषा में तैजस् शरीर कहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक शब्दावली में उसके बाह्य रूप को आभामण्डल कहा जाता है। यह स्थूल शरीर के चारों तरफ सूक्ष्म तरंगीय क्षेत्र के रूप में विद्यमान रहता है।

सूक्ष्मतम शरीर का संबंध हमारे भीतर विद्यमान कर्म संस्कारों से है। इसे कार्मण शरीर कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि इसमें

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अपने दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य के सूक्ष्म संकेतों का निरन्तर अंकन व संचय होता रहता है। यह शरीर सूक्ष्मतम होता है। इसे भी आंखों से देखा नहीं जा सकता है। हमारी चेतना तीनों शरीरों में व्याप्त है किन्तु हमारी जागरुकता केवल स्थूल शरीर तक ही सीमित रहती है। हम अपने सूक्ष्म स्तरों तक जागरुक नहीं रह पाते। इस जागरुकता का विस्तार सूक्ष्मतम शरीर तक किया जा सकता है एवं इससे भी आगे अपने चैतन्य के प्रति भी निरन्तर जागरुक रहा जा सकता है।

2.3 चेतना के स्तर

हम आत्मा या शुद्ध चैतन्य के रूप में एक ओर अखण्ड हैं पर समझने की दृष्टि से चेतना को अनेक स्तरों पर विभाजित किया गया है। हमारे अस्तित्व से जुड़े हुए तीनों शरीर औदारिक, तैजस् और कार्मण के स्तर पर चेतना के भी अलग अलग स्तर बनते हैं। जैसा कि चित्र (2.4) में समझाया गया है – हमारे व्यक्तित्व के केन्द्र में है – आत्मा। कार्मण शरीर के स्तर पर जुड़ी हुई या संपृक्त चेतना स्तर को अध्यवसाय कहते हैं। इसी प्रकार तैजस् शरीर के साथ संपृक्त चेतना को लेश्या कहते हैं। औदारिक शरीर के स्तर पर संपृक्त चेतना को चित्त कहा गया है।

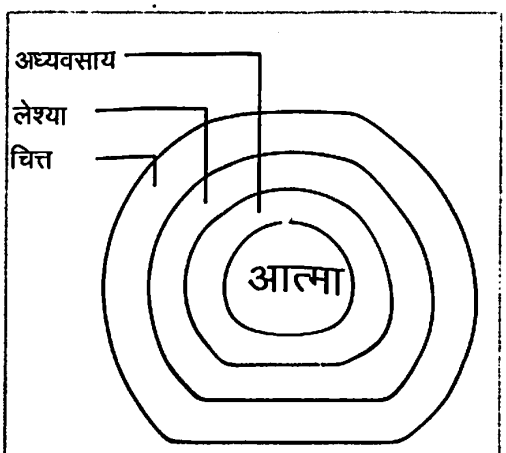

चित्र 2.4 व्यक्तित्व में चेतना के स्तर

जागरुक चित्त के द्वारा जाना जाता है। सुषुप्त चित्त द्वारा ज्ञान नहीं हो सकता। जागरुक चित्त द्वारा ही कार्मण शरीर में अंकित व संचित संकेतों का परिवर्तन किया जा सकता है। भीतर की प्रेरणाओं के क्रियान्वयन का निर्णय भी चित्त द्वारा ही होता है। यदि चित्त जागरुक नहीं है तो जैसी अच्छी या बुरी प्रेरणा भीतर से आती है वैसी ही क्रियान्विति हो जाती है। चित्त में यह शक्ति है कि वह एक समय में एक सूक्ष्म बिन्दु पर केन्द्रित हो सकता है और दूसरे ही क्षण एक विस्तृत क्षेत्र में भी फैल सकता है। जहां चित्त रहता

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है वहां का ज्ञान हो जाता है। वहां परिवर्तन घटित किया जा सकता है। जब चित्त आन्तरिक क्रियाओं से जुड़ता है तो उनके प्रति हमारी जागरुकता बढ़ती है। वहां परिवर्तन और बदलाव आता है। प्रेक्षाध्यान में जहां परिवर्तन करना होता है वहां चित्त को केन्द्रित किया जाता है इससे व्यक्तित्व की विशिष्ट क्षमताओं का जागरण होता है। व्यक्तित्व का रूपान्तरण होता है। स्थूल चेतना से सूक्ष्मतम चेतना तक चित्त का विस्तार अखण्ड व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक होता है।

लेश्या चित्त से सूक्ष्म है। सामान्तया यह हमारे अनुभव में नहीं आ पाती है। हमारी जागरुकता केवल स्थूल और बाह्य जगत् तक सीमित होती है। सूक्ष्म और आन्तरिक जगत् की तरफ अभ्यास से जागरुकता को विस्तृत किया जा सकता है। लेश्या को, रंगीन प्रकाशमयी धाराओं को भी अनुभव कर सकते हैं। लेश्या के स्तर पर भी परिष्कार किया जा सकता है। लेश्या भीतर में अंकित और संचित संकेतों को रंगीन तरंगों के माध्यम से स्थूल शरीर तक लाता है एवं इसी प्रकार स्थूल स्तर की प्रवृत्तियों, क्रियाकलापों के संकेतों को रंगीन तरंगों के माध्यम से सूक्ष्मतम कार्मण शरीर के स्तर तक पहुंचाता है। अध्यवसाय का स्तर लेश्या से अधिक सूक्ष्म है। इसमें कर्म संस्कार, वृत्तियों के रूप में आगे बढ़ते हैं। तैजस् शरीर के स्तर पर आकर लेश्या का रूप ले लेते हैं। वे ही आगे चलकर औदारिक शरीर में भाव के रूप में प्रकट होते हैं, जो विचार, आचार और व्यवहार में अभिव्यक्त होते हैं।

3.0 व्यक्तित्व की कार्यप्रणाली और प्रेक्षा

प्रत्येक व्यक्ति में आत्मा और तीनों शरीर की पारस्परिक अन्तःक्रिया निरन्तर चलती रहती है। आत्मा के तीन मुख्य गुण हैं – ज्ञान, आनन्द और शक्ति। इनकी अभिव्यक्ति हमारे व्यक्तित्व में ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक क्षमताओं के रूप में होती है। आत्मा के इन तीन गुणों को चैतन्य की तीन धाराओं के रूप में समझ सकते हैं। (देखें चित्र 2.5) चैतन्य की प्रथम धारा आनन्द की है। वह कर्म शरीर, तैजस् शरीर और औदारिक शरीर के स्तर पर क्रमशः अध्यवसाय, लेश्या और भावों के रूप में अभिव्यक्त होती हुई आगे बढ़ती है।

चैतन्य की दूसरी धारा शक्ति की है। वह तैजस् शरीर से जुड़ कर आगे बढ़ती है। प्राण का रूप ले लेती है। यह औदारिक शरीर के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नाड़ी तंत्र में अभिव्यक्त होती है। मन, वाणी और शरीर की क्रियाओं के लिए शक्ति प्रदान करती है।

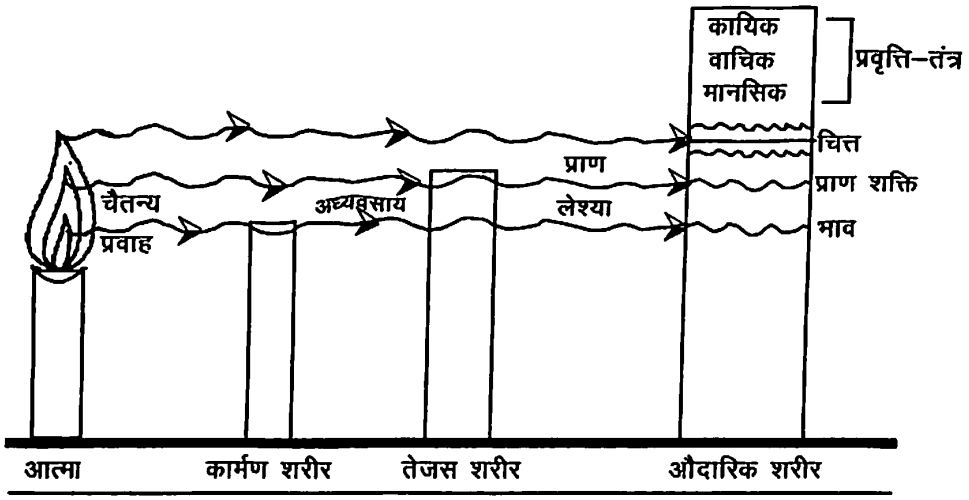

चित्र 2.5 चेतना स्तर का निर्माण

चैतन्य की तीसरी धारा ज्ञान की है। वह धारा औदारिक शरीर, स्थूल शरीर के स्तर पर चित्त के रूप में प्रकट होती है। चित्त की अपनी स्वतंत्रता होती है। वह कार्मण शरीर से आने वाले भावों की प्रेरणा को चाहने पर क्रियान्वित कर सकता है। अन्यथा नहीं चाहने पर रोक भी सकता है अथवा रूपान्तरित भी कर सकता है। यह स्वतंत्रता की शक्ति उसकी जागरुकता पर निर्भर है। सुषुप्त अवस्था में इस क्षमता का उपयोग नहीं किया जा सकता। मूर्च्छा, तंद्रा, निद्रा, आलस्य की स्थिति में जैसी भावना होगी वैसी ही मानसिक, वाचिक और कायिक प्रवृत्ति हो जायेगी। जब चित्त जागरुक होकर केवल देखेगा, द्रष्टाभाव से प्रेक्षा करेगा, भावों से नहीं जुड़ेगा तो भावों से प्रभावित प्रवृत्ति नहीं होगी। चित्त की मूर्च्छावस्था में भीतर से आने वाली भावों की प्रेरणा प्राणशक्ति का उपयोग करते हुए मानसिक, वाचिक और कायिक तीन प्रकार की प्रवृत्तियों में परिणत हो सकती है। जागरूक अवस्था में चित्त स्वतंत्र निर्णय लेकर भीतर की प्रेरणा को परिष्कृत कर प्रवृत्ति की धारा को अपने अनुकूल कर सकता है।

3.1 व्यक्तित्व विघटन

चैतन्य की धाराएं कार्मण शरीर से प्रभावित होकर अध्यवसाय, लेश्या और भावों के रूप में अन्ततः औदारिक शरीर में प्रकट होती हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ये भाव (अच्छे या बुरे) आन्तरिक प्रेरणाओं के रूप में प्रकट होकर क्रियान्विति के लिए चित्त और मन पर दबाव डालते हैं। जब एक साथ अनेक प्रेरणाओं का दबाव होता है तब मानसिक अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न हो जाता है। उसके निराकरण और समाधान के लिए चित्त को एक निर्णय पर पहुंचना होता है। जब चित्त निर्णय करने मे सफल हो जाता है तब मानसिक अन्तर्द्वन्द्व भी समाप्त हो जाता है। मन पर दबाव हट जाता है, उसको शक्ति मिल जाती है, क्रियान्विति के लिए रास्ता साफ हो जाता है। निर्णय के बाद भी यदि प्रमाद, आलस्य, लापरवाही या अन्य किसी अयोग्यता के कारण वह उसे क्रियान्वित नहीं कर पाता है तब उसे सफलता नहीं मिल पाती है। बार–बार इच्छा होने पर भी सफल न होने पर व्यक्ति निराश और हताश हो जाता है। कार्य के प्रति उत्साह नहीं रहता है। यह स्थिति उस समय और भी अधिक भयावह होती है जब व्यक्ति निर्णय नहीं ले पाता है तथा भीतर लम्बे समय तक अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है। उपरोक्त दोनों ही स्थितियों में व्यक्ति अन्दर से टूट जाता है। व्यक्तित्व खण्डित हो जाता है। इच्छा, निर्णय और क्रियान्विति में तालमेल, एकरूपता नहीं रह पाती है। इससे न केवल व्यक्तिगत स्तर पर हानि होती है किन्तु अनेक बार कुण्ठित और अवसाद ग्रस्त होने से सामाजिक संबंधों में सामंजस्य बनाये रखने में कठिनाई आती है। व्यक्ति मानसिक और भावनात्मक रूप से रुग्ण हो जाता है। यदि समय रहते ध्यान नहीं दिया गया तो अन्ततः व्यक्तित्व विघटित हो जाता है।

इस समस्या का प्रेक्षाध्यान में एक सरल समाधान यह है कि भीतर से आने वाली प्रेरणाओं और इच्छाओं का दबाव कम हो। यह अत्यधिक दबाव भीतर से आने वाली अशुभ लेश्याओं के कारण होता है। इच्छाओं के संयम हेतु अणुव्रतों को स्वीकार करने तथा शुभ लेश्याओं (चमकते हुए रंगों) के ध्यान से दबाव कम होता है। दबाव कम होने से अन्तर्द्वन्द्व, अवसाद आदि समाहित हो जाते हैं। व्यक्ति निर्णय लेने में सक्षम हो जाता है। शुभ लेश्याओं के ध्यान से व्यक्ति में शक्ति का विकास होता है। इससे व्यक्ति अपने निर्णय को क्रियान्वित कर सफलता के शिखर पर आरोहण करने में समर्थ हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.2 प्रेक्षाध्यान : अखण्ड व्यक्तित्व का विकास

सामान्यतया व्यक्ति में जागरुकता का स्तर स्थूल और बाह्य जगत् तक ही सीमित रहता है। अतः वह केवल बाह्य जगत् का ही बोध कर पाता है। भीतर से आने वाले अशुभ संस्कारों के प्रभावों से वह अप्रभावित नहीं रह पाता है। यदि हमें अपने भीतर के अशुभ संस्कारों से स्वतंत्र होना है तो हमें अपनी जागरुकता को भी स्थूल से सूक्ष्म जगत् तक विस्तृत करना होगा। प्रेक्षाध्यान के अभ्यास से हम अपनी जागरुकता को स्थूल शरीर से फैलाते हुए व्यक्तित्व के केन्द्र आत्मा तक विस्तृत कर सकते हैं। हम अपने चैतन्य के प्रति जागरुक रह सकते हैं। यदि चेतना और पदार्थ को दो मापक इकाईयां मान लें तो प्रेक्षाध्यान द्वारा जागरुक के विस्तार को चित्र (2.7) से समझा जा

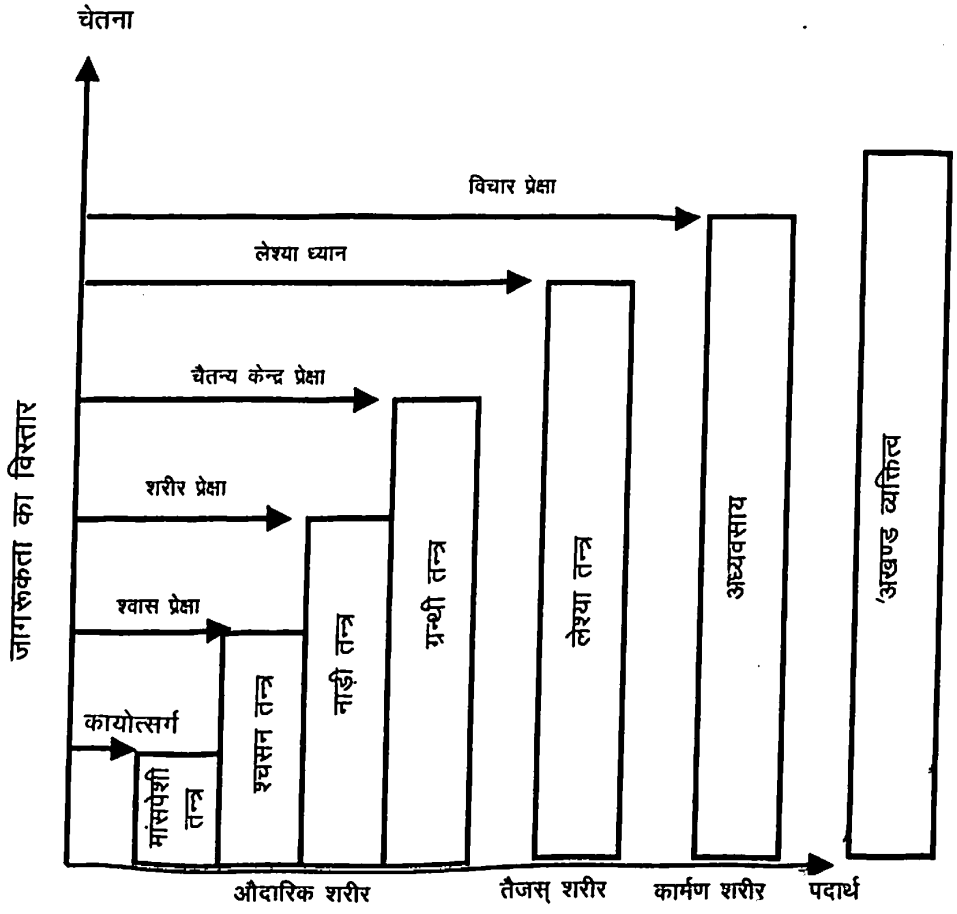

चित्र 2.7 प्रेक्षाध्यान द्वारा जागरूकता का विस्तार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सकता है। प्रेक्षाध्यान के अभ्यास से यह माना जाता है एवं अनुभव किया गया है कि इससे स्थूल शरीर से लेकर अपने अस्तित्व तक परिपूर्ण जागरुकता का विकास संभव होता है।

व्यक्तित्व विकास में अनेक बाधाएं हैं। जैसें–नकारात्मक भाव (Negative Emotion) शारीरिक तनाव, वाचिक असंयम और मानसिक व्यग्रता। प्रेक्षाध्यान के एक प्रयोग कायोत्सर्ग द्वारा स्थूल शरीर की

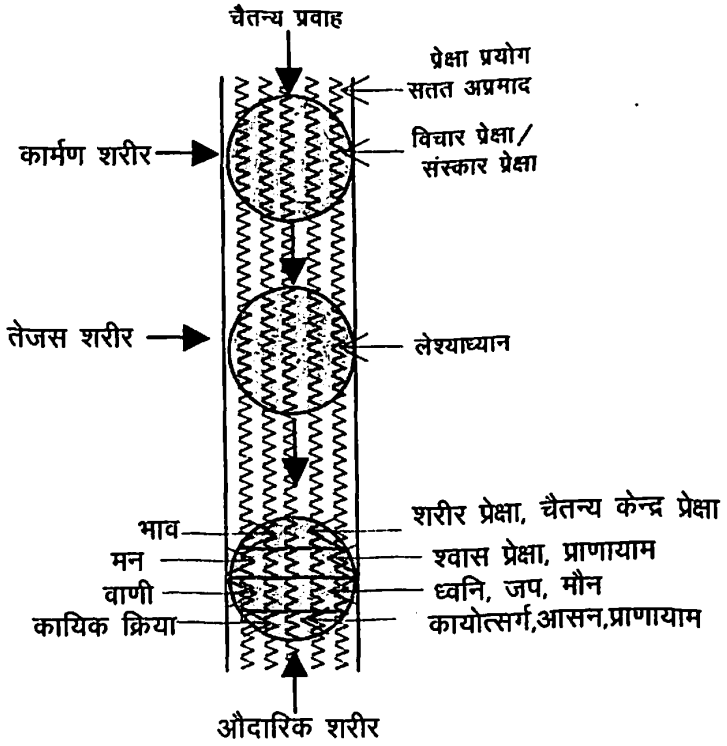

चित्र 2.8 प्रेक्षाध्यान से अखण्ड व्यक्तित्व विकास

मांसपेशियों में आये हुए तनाव को दूर किया जाता है। आसन भी तनाव को दूर करने में सहायक बनते हैं। वाणी के असंयम को ध्वनि, जप एवं मौन के प्रयोग द्वारा अनुशासित व प्रशिक्षित किया जाता है। मानसिक एकाग्रता के विकास के लिए श्वास प्रेक्षा एवं प्राणायाम के प्रयोग लाभकारी सिद्ध हुए हैं। इससे श्वास मंद एवं शान्त होता है। मन की चंचलता कम होती है। शरीर प्रेक्षा द्वारा पूरे शरीर में प्राण का संतुलन होता है। इससे समता भाव का विकास होता है। चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा से ग्रन्थि तंत्र संतुलित होता है तथा नकरात्मक भाव दूर होते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सकारात्मक भाव पुष्ट होते हैं। लेश्याध्यान द्वारा अशुभ लेश्याओं का दबाव कम होता है। विचार प्रेक्षा से अशुभ संस्कारों को देखने और उससे अप्रभावित रहने की क्षमता का विकास होता है। वर्तमान क्षण की प्रेक्षा द्वारा स्वयं के प्रति सतत जागरुक रहने का अभ्यास करते हैं। जो स्वयं को जान लेता है वह भेद में अभेद को समझ लेता है। अनेकता में एकता का बोध करने में समर्थ हो जाता है। वह स्वयं, को दूसरों को और प्रकृति को भी अधिक अच्छे ढंग से समझ सकता है। शान्ति, सौहार्द व सामंजस्य के साथ जी सकता है। इसकी परिणति सार्वभौम मैत्री भाव व स्वयं का अखण्ड व्यक्तित्व का विकास है।

4.0 प्रेक्षाध्यान की विशेषताएं

4.1 अनुभव परक

आज अत्यधिक विकसित और उच्च प्रौद्योगिकी से सम्पन्न समाज में व्याप्त असंतोष और अतृप्ति का कारण तकनीकी की कमी नहीं बल्कि स्वयं के प्रति जागरुकता के विकास की कमी है। प्रेक्षाध्यान प्राचीन प्रज्ञा की विरासत और आधुनिक विज्ञान की व्याख्याओं से परिपूर्ण और परिष्कृत व्यवस्थित पद्धति है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने प्रलम्बकाल तक साधना और अनुभव के आधार पर विशेष रूप से स्वयं के प्रति जागरुकता के विकास के लिए इसको मूर्त्त रूप दिया है। यह आज के आधुनिक मानव की समस्याओं और असंतोष से निपटने में बहुत उपयुक्त है। इसके अभ्यास के लिए न विशेष पूंजी निवेश की आवश्यकता है और न ही गृहस्थ जीवन को त्याग कर संन्यासी बनने की अनिवार्यता है। केवल आवश्यकता है तो इच्छा शक्ति की कि हम अपने आप को जानने के लिए गहराई में उतरें और भीतर के रहस्यमय खजाने को अनावृत कर उसे प्राप्त करें।

4.2 विज्ञान सम्मत

प्रेक्षाध्यान के परिणामों की जांच–पड़ताल के लिए अनेक वैज्ञानिक अनुसंधान किये गये। इसके अन्तर्गत न केवल मनोवैज्ञानिक तथ्यों का आंकलन हुआ किन्तु शरीरगत व्यापक सकारात्मक परिणाम भी सामने आये। इससे उच्च रक्तचाप में कमी, हृदयगति में सुधार, श्वसन दर में कमी, त्वचा की प्रतिरोधक क्षमता में विकास आदि आश्चर्यजनक परिणाम भी स्पष्ट रूप से सामने आये हैं। उदाहरण के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

लिए अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, दिल्ली के हृदयरोग विभाग के तत्कालीन विभागाध्यक्ष डॉ. मनचन्दा ने हृदयरोग में प्रेक्षाध्यान विषय पर अनुसंधान किया। इस ध्यान पद्धति को हृदय रोग की चिकित्सा में अत्यन्त लाभकारी पाया। ऐसे ही परिणाम अन्य क्षेत्रों से भी प्राप्त हुए हैं। ये परिणाम इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं कि इनसे रोगियों को न्यूनतम आर्थिक व्यय में तथा बिना किसी पीड़ा के स्वास्थ्य में लाभ होता है।

4.3 सीखने में सरल

जैन विश्व भारती व अन्य संस्थानों में इस बात को अनुभव किया गया कि प्रेक्षाध्यान को अल्पावधि में और सरलता से सीखा जा सकता है। एक बार सीखने के बाद यह आध्यात्मिक और मानसिक विकास में तो सहायक बनता है साथ ही जीवन के सभी क्षेत्रों में यह उपयोगी होता है। चेतना के प्रति जागरुकता और उसकी शक्तियों का उपयोग वर्तमान युग की सबसे बड़ी आवश्यकता है। आज एक नये विज्ञान चेतना के विज्ञान की आवश्यकता है जिससे व्यक्ति अधिक से अधिक स्वयं को समझ सके और मानवीय पीड़ाओं को दूर करने में अपनी सेवा दे सकें। आज एक ऐसी नई पीढ़ी की आवश्यकता है जिसमें सत्य की खोज के लिए वैज्ञानिक दृष्टि हो तथा सब जीवों के प्रति मैत्री भाव के विकास के लिए आध्यात्मिक अनुभूति भी हो। विश्वशान्ति और पर्यावरणपरक जीवनशैली के लिए आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण अब एक ऐसी आवश्यकता बन चुकी है जिसे अधिक टाला नहीं जा सकता।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. समय प्रबन्धन

रूपरेखा

1.1 समय प्रबन्धन : महत्त्व
1.2 सुसंगठित व सार्थक व्यक्तित्व
1.3 सफल जीवन
2.1 समय प्रबन्धन : लक्ष्य निर्माण
2.2 प्राथमिकताओं का निर्धारण
2.3 समय विश्लेषण
2.4 कार्य विभाजन और निरीक्षण
3.1 आत्म विकास
3.2 स्वयं के लिए समय
3.3 आत्म निरीक्षण
4.0 समय प्रबन्धन का प्रयोग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

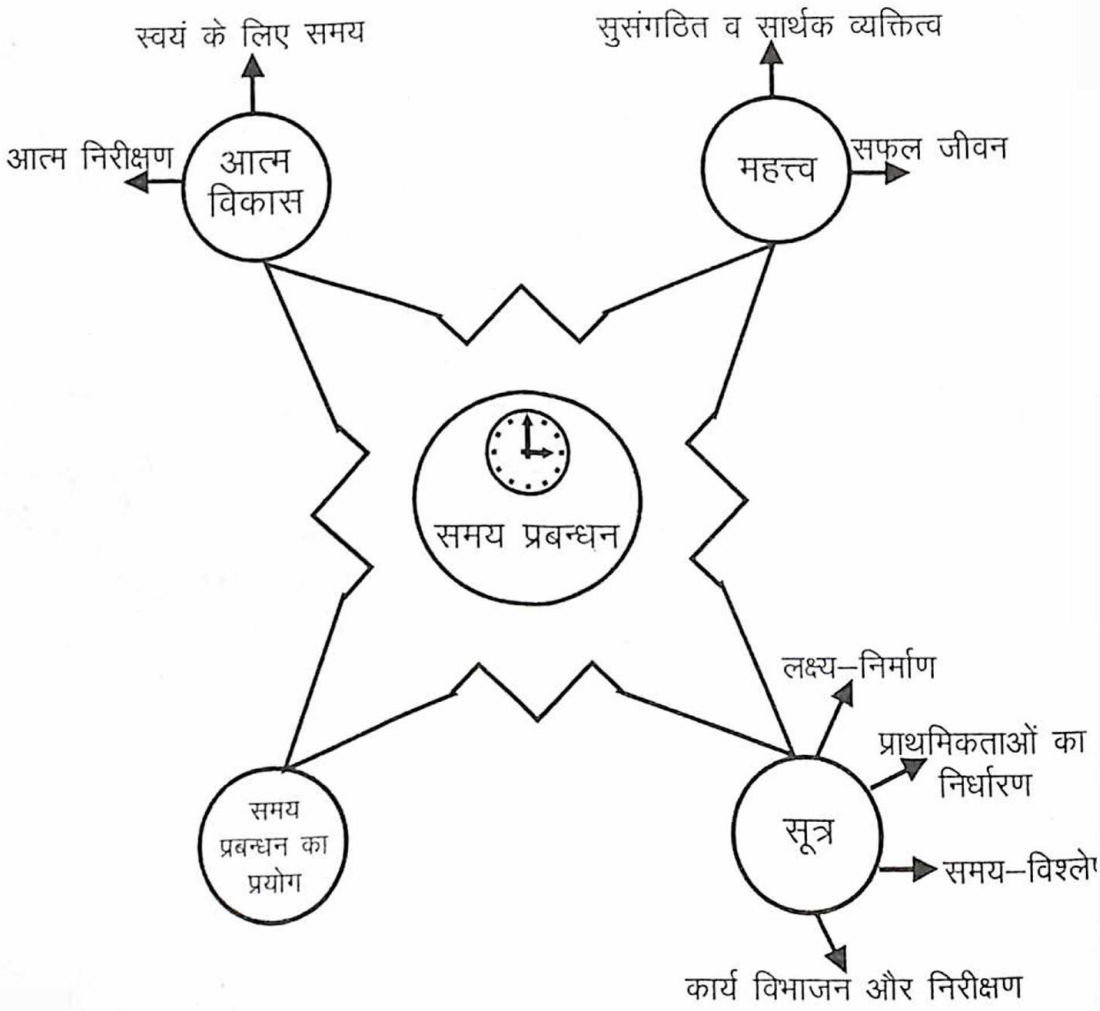

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. समय प्रबन्धन

1.1 समय प्रबन्धन का महत्त्व

क्या आप कार्य का अत्यधिक दबाव अनुभव करते हैं ?

क्या आपके पास कार्य ज्यादा व समय कम है ?

क्या आप इससे झुंझलाहट व तनाव का अनुभव करते है ?

क्या आप कार्य को भूल जाते हैं ?

क्या आपको निर्णय लेने में कठिनाई होती है ?

यदि हां ! तो समय प्रबन्धन इन समस्याओं के समाधान में सहयोगी सिद्ध हो सकता है।

वस्तुतः देश के प्रधानमंत्री से लेकर गांव के सरपंच तक, सामान्य दुकानदार से लेकर बड़े उद्योगपति तक, प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक से लेकर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर तक सभी को एक दिन में 24 घण्टे का ही समय मिलता है। तब क्यों कुछ व्यक्ति अपने पास बहुत दायित्व और कार्य होने पर भी समय की कमी का अनुभव नहीं करते हैं? दूसरी ओर कुछ व्यक्ति अपने पास कार्य की अधिकता न होने पर भी समय की कमी का अनुभव क्यों करते हैं ? यथार्थ में यह समस्या समय की कमी की नहीं, समय के प्रबन्धन की कमी को दर्शाता है।

1.2 सुसंगठित व सार्थक व्यक्तित्व

समय प्रबन्धन व्यक्तित्व विकास का वह सूत्र है जिसके होने पर शेष सारे उपाय कारगर होते हैं अन्यथा कोई उपाय काम नहीं करता। कचरा निकालने की बुहारी अनेक तिनकों से बनी होती है। उसके ऊपर जब तक रस्सी का बंधन होता है तब तक वह मिट्टी, धूल, कचरे की सफाई में सहयोगी बनती है। यदि रस्सी खुल जाये तो सारे तिनके बिखर जाते हैं। कचरा निकालने वाली बुहारी स्वयं कचरा बन जाती है। समय प्रबन्धन भी उस रस्सी के समान है जो तिनकों की तरह बिखरे हुए व्यक्तित्व के अनेक गुणों को बांध कर उसे सार्थक व सुसंगठित व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करती है। समय प्रबंधन वस्तुतः दूसरों के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

द्वारा नहीं अपितु स्वयं द्वारा स्वयं का बन्धन है। यह आत्मसंयम का सूत्र है – निज पर शासन।

1.3 सफल जीवन

व्यक्ति का जीवन बहुआयामी होता है। उसे पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, वैयक्तिक व धार्मिक सभी स्तरों पर अपनी जिम्मेदारियों को कुशलतापूर्वक निर्वहन करना होता है तभी उसे जीवन में सफलता व संतोष का अनुभव होता है। जीवन में सफलता व संतोष के लिए सभी क्षेत्रों में परस्पर समन्वय व संतुलन बनाने की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से सभी क्षेत्रों में समय का सही नियोजन नितान्त जरूरी है, अन्यथा सभी क्षेत्रों से समय–समय पर आने वाली अपेक्षाएं, आवश्यकताएं, जिम्मेदारियां सही समय पर पूरी नहीं हो सकती। जो अन्ततः असंतोष, अशान्ति और असफलता का कारण बनती है। इस बहु आयामी जीवन में आनन्द से सारे कार्यों को निपटाने के लिए समय प्रबंधन बहुत उपयोगी बनता है।

2.1 समय प्रबन्धन : लक्ष्य निर्माण

कुछ लोग ऊंचे से ऊंचे पद पर पहुंच जाने पर भी बड़े से बड़े दायित्व का निर्वाह करते हुए भी कभी भी समय की कमी का अनुभव नहीं करते। ऐसा क्यों होता है ? इसका रहस्य खोजा जाये तो पायेंगे कि ऐसे व्यक्तियों के जीवन में कोई न कोई बड़ा लक्ष्य होता है। समय प्रबंधन का रहस्यमय व प्रथम सूत्र है – अपने जीवन में एक बड़े लक्ष्य का निर्माण करना। जिसने अपने जीवन में एक बड़ा, महान, पवित्र, परोपकारी व कल्याणकारी लक्ष्य बना लिया उसका समय प्रबंधन सहज रूप से स्वतः होता चला जाता है। उसकी अन्तःप्रेरणा जागृत होती है। वह अन्तःप्रेरणा उसे अनावश्यक अथवा लक्ष्य से विपरीत अथवा कम महत्त्वपूर्ण कार्यों में खर्च होने वाले समय से स्वतः बचा लेती है। जिसे अपने जीवन को सार्थक बनाना है, अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना है, एक–एक क्षण को उपयोगी बनाना है। वह अपने जीवन में एक ऊंचा लक्ष्य बनाये। इससे उसके भीतर से शक्ति का स्रोत खुल जायेगा। समय की कोई कमी नहीं रहेगी। विपरीत परिस्थितियों से जूझने की क्षमता आ जायेगी, सफलता को पाने की ललक पैदा हो जायेगी। धैर्य भी आ जायेगा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2.2 प्राथमिकताओं का निर्धारण

क्या लक्ष्य निर्माण बिना समय प्रबंधन नहीं हो सकता ? हो सकता है किन्तु उनको विशेष लाभ मिलता है जिनका लक्ष्य स्पष्ट एवं तीव्र होता है। उनके जीवन में प्राथमिकताएं भी स्वतः सहज रूप से निर्धारित होती चली जाती हैं। अनावश्यक कार्य छूटते चले जाते हैं। यद्यपि अनेक लोगों के जीवन में बहुत बड़ा लक्ष्य नहीं होता है किन्तु प्रत्येक व्यक्ति के सामने अनेक कार्य अवश्य होते हैं। उनकी अपनी आकांक्षाएं और इच्छाएं होती हैं। उनके ऊपर अनेक प्रकार की जिम्मेदारियां होती हैं। उनको भी पूरा करने के लिए व्यवस्थित जीवन जीने के आवश्यकता होती है अन्यथा कर्तव्य व दायित्व भार लगने लगते हैं। यह आनन्द दायक जीवन उस भार के तले दुःखदायक बन जाता है। निरन्तर दबाव व तनाव का अनुभव होता है। व्यवस्थित जीवन के लिए आवश्यक है– समय प्रबंधन। इसका दूसरा सूत्र है– प्राथमिकताओं का निर्धारण करना। इसके लिए आप शान्ति से बैठकर अपने वर्तमान जीवन के सभी कार्यों का अवलोकन करें। अपेक्षाओं, दायित्वों और आकांक्षाओं को एक डायरी में नोट कर लें फिर उन्हें, अत्यावश्यक, आवश्यक, विचारणीय तीन श्रेणियों में चिन्हित कर विभाजित कर लें। उनमें भी जो अत्यावश्यक है। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, उनको प्राथमिकता देते हुए उनकी सूची तैयार कर लें। इसका प्रतिदिन अवलोकन करें। आवश्यकतानुसार पुनर्निर्धारण भी करते रहें। इससे आपको कार्य की सार्थकता व स्पष्टता दिखने लगेगी। समय का अच्छा उपयोग कर पायेंगे। जीवन में आनन्द व प्रसन्नता का अनुभव करेंगे, हल्केपन का अनुभव करेंगे।

2.3 समय विश्लेषण

समय प्रबंधन का तीसरा सूत्र है– समय का विश्लेषण करना। अर्थात् अपने पास उपलब्ध समय की जांच–पड़ताल करना। किस कार्य में कितना समय लग रहा है ? समय का कितना सदुपयोग हो रहा है ? जब आपकी प्राथमिकताएं स्पष्ट हो गई तो समय का नियोजन करना भी आसान हो जायेगा। किस कार्य में समय को अधिक लगाना है ? या कम करना है ? यह आपके लिए सरल हो जायेगा। इससे अनावश्यक कार्यों में होने वाले समय के अपव्यय में स्वतः कमी होती चली जायेगी। यह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सब एक दिन में नहीं हो जायेगा। इसका भी धैर्य से अभ्यास करते रहना है। स्वयं के प्रति जागरुक रहकर स्वयं का निरीक्षण करने व नियंत्रण करते रहने से समय प्रबंधन में दक्षता भी बढ़ती चली जायेगी। आप अपनी भावनाओं कल्पनाओं और योजनाओं को भी मूर्त्त रूप देने हेतु सक्षम होते चले जायेंगे।

2.4 कार्य विभाजन और निरीक्षण

हम सबमें एक चमत्कारिक शक्ति है। जिसका हम संभवतः उपयोग नहीं कर पाते हैं अपने सहयोगियों, संबंधियों व पारिवारिक जनों की श्रेष्ठ योग्यताओं, गुप्त शक्तियों और सुप्त क्षमताओं को प्रोत्साहित करंना। कार्य विभाजन कर उन्हें अवसर देना। उनका मार्गदर्शन करना, उनका निरीक्षण करना। ऐसा करके न केवल हम अपने आपको हल्का रखेंगे बल्कि साथियों को भी अपनी क्षमताओं का बोध करा पायेंगे। उनके जीवन में भी आनन्द व उल्लास जगा पायेंगे। हमारे पास समय की भी कोई कमी नहीं रहेगी। यदि सभी कार्यों को स्वयं ही करने का आग्रह रखेंगे तो आप पर कार्यभार तो बढ़ेगा ही साथ ही नये विकास के लिए समय नहीं बच पायेगा। अतः इस जादुई चिराग का उपयोग करें, दूसरों की क्षमताओं को परखें, उनकी प्रशंसा करें, उन्हें प्रोत्साहित करें, मार्गदर्शन करें, कार्य का दायित्व सौंपें। निरीक्षण करना न भूलें, जब तक आश्वस्त न हो जायें तब तक निरीक्षण व मार्गदर्शन करते रहें।

3.1 आत्म–विकास

समय प्रबंधन का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पहलू है – स्वयं के विकास पर ध्यान देना। समय प्रबंधन के लिए लक्ष्य बनाना, प्राथमिकताओं को निर्धारित करना, समय का विश्लेषण करना जितना आवश्यक है उससे भी अधिक इन सबको क्रियान्वित करने वाला जो कर्ता है, आप स्वयं हैं उसके विकास पर ध्यान देना। हमने अपने स्वास्थ्य पर समय का नियोजन किया या नहीं ? आन्तरिक क्षमताओं के विकास पर शक्ति लगाई या नहीं? इन बातों पर विचार करना भी आवश्यक है।

एक गृहीणी प्रतिदिन चाकू से काम लेती है। वह जानती है कि जब तक चाकू की धार तेज है तब तक ही इससे आसानी से काम

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

लिया जा सकता है। चाकू के भोंथरा होने पर उससे काम लेना कष्टदायक और समय का अपव्यय है। इसी प्रकार शरीर, वाणी और मन ये हमारे सभी कार्यों को सम्पादित करने वाले उपकरण हैं। इनकी धार को तेज करने के लिए समय का नियोजन करना समय–प्रबंधन व जीवन में सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

अनेक बार व्यक्ति सफलता के शिखरों को चूमता चला जाता है। स्वयं के शरीर और मन पर ध्यान ही नहीं देता है। एक बहुत सफल प्रबंधक एक दिन डॉक्टर के पास चेक–अप कराने पहुंचा। डाक्टर ने गंभीरता से निरीक्षण किया तो पाया कि उसको रक्त कैंसर है। उस व्यक्ति ने जब यह सूना तों उसे तीव्र मानसिक आधात लगा। उसको अपना भविष्य अंधकारमय दिखने लगा, मौत दिखने लगी। डॉक्टर से वार्ता के दौरान पता चला कि शरीर और मन को विश्राम व उचित पोषण नहीं मिला। कार्य का दबाव व मानसिक तनाव झेलते–झेलते उसके पास स्वयं के शरीर की देखभाल करने, उचित समय पर खान–पान, नींद और विश्राम के लिए भी समय नहीं था। परिणामस्वरूप वह भयंकर आत्मघाती व्याधि से ग्रसित हो गया।

3.2 स्वयं के लिए समय

एक कहावत प्रचलित है– अट्ठावन घड़ी काम की, दो घड़ी राम की। अर्थात् दिन भर में दो घड़ी (48 मिनट) एक मुहूर्त्त, राम के लिए, अपनी आत्मा के लिए, स्वयं के विकास के लिए सुरक्षित रखें। भगवान महावीर ने अच्छे जीवन के लिए, स्वयं के विकास के लिए दिन भर में कम से कम एक मुहूर्त्त (48 मिनट), का समय लगाकर प्रयोग करने की बात कही। जीवन में समता (सामायिक) और संतुलन के अभ्यास की बात कही। स्वयं पर स्वयं के नियन्त्रण के प्रयोग की बात कही। जिस व्यक्ति के पास अपने स्वास्थ्य की देखभाल के लिए समय नहीं है, अपनी शक्तियों के विकास के लिए समय नहीं है, ऐसे व्यक्तियों के जीवन में एक समय ऐसा आता है, पानी बांध के ऊपर से निकलने लगता है फिर बहुत चाह कर भी वे कुछ नहीं कर पाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि व्यक्ति स्वयं के विकास, आत्म–विकास के लिए भी दो घड़ी (48 मिनट) का समय निकालें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मनोबल, एकाग्रता, आत्म–विश्वास, मानसिक शान्ति, अन्तर्दृष्टि के जागरण आदि के लिए लगने वाला समय बहुत उपयोगी है। यह परलोक सुधार के लिए ही नहीं किन्तु वर्तमान जीवन को आनन्ददायक व सफल बनाने के लिए है। शक्तियों के विकास से कार्यक्षमता बढ़ेगी। एकाग्रता के अभाव में जो कार्य पहले 10 घण्टे में होता था, वही कार्य एकाग्रता के कारण 5 घण्टे से कम समय में ही पूरा हो जायेगा। निर्णय लेने में जहां अनेक दिन व महीने भी बीत जाते हैं वहीं अन्तर्दृष्टि के विकास से चन्द मिनटों में सही निर्णय सम्पन्न हो जाते हैं। अतः आप अपनी आन्तरिक क्षमता को गौण नहीं करें। अपने भीतर के वैभव को पहचानें। जीवन में सफलता एवं सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास के लिए उसका पूरा उपयोग करें। यदि आप अपने भीतर की सम्पदा को, शक्ति को गौण करेंगे तो उसका अर्थ होगा कि आप ईंधन की परवाह किये बिना वाहन चलाना चाहते हैं। आखिर गाड़ी कितने दिन चलेगी ?

3.3 आत्म–निरीक्षण

आत्म विकास के लिए एकान्त स्थान में, मौन व शान्त बैठकर समता (सामायिक) का अभ्यास करें। हमारे जीवन में निरन्तर काम आने वाले उपकरण शरीर, मन व भावों का निरीक्षण करें। निरीक्षण से उनको शक्ति मिलती है। अनावश्यक तत्व दूर होते हैं। जीवन को प्रभावित करने वाले श्वास, प्राण व कर्म (प्रवृत्ति) का निरीक्षण करें। चैतन्य स्वरूप आत्मा का निरीक्षण करें। स्वयं के शुद्ध स्वरूप का चिन्तन करें।

शुद्ध चैतन्य, आत्मा का मौलिक गुण है – देखना, अवलोकन करना, निरीक्षण करना। आत्म निरीक्षण से हमारे भीतर ऐसा संतुलन पैदा होता है कि हम विपरीत परिस्थिति में भी अप्रभावित रह सकते हैं। हमारा संकल्प अटूट बन जाता है। हमारी दृष्टि विचलित नहीं होती। हमारा ज्ञान अवरुद्ध नहीं होता है। विवेक और प्रज्ञा का जागरण हो जाता है। आत्म–नियंत्रण आ जाता है। हमारे ऊपर दूसरे के नियंत्रण की कोई जरूरत नहीं रहती। हमारा स्वतंत्रता की दिशा में तीव्र विकास होता है। यह समता का प्रयोग भीतर के प्रकाश को पैदा करने के लिए है जिससे सम्पूर्ण जीवन का यात्रा–पथ आलोकित हो जाये।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4.0 समय प्रबन्धन का प्रयोग

समय प्रबंधन के सिद्धान्त व सूत्रों के ज्ञान के साथ–साथ उसके प्रायोगिक अभ्यास की आदत बनायें। समय–प्रबन्धन का न्यूनतम प्रायोगिक अभ्यास है – आत्म–निरीक्षण। स्वयं द्वारा स्वयं की दैनिक चर्या का प्रतिदिन अवलोकन। इस अवलोकन से सहज पता लगेगा कि –''मैंने क्या किया है ? क्या अवशिष्ट रह गया है ? क्या कर सकता था किन्तु नहीं कर पाया ? दिन भर में मेरे से कौन–कौन सी गलतियां हुई हैं ? वे कौनसी गलतियां हैं जिसे मैं चाह कर भी नहीं छोड़ पा रहा हूं ? आदि–आदि। इनके बोध से आपका जीवन व्यवस्थित होने लगेगा। आपकी अच्छाइयों को पोषण मिलेगा। उनका विकास होगा। आपकी स्मरण शक्ति तीव्र हो जायेगी। आपके अपने अन्तर्मन (अवचेतन मन) से, अपने भीतर के गुरु से सम्पर्क हो जायेगा। आपको स्वतः भीतर से मार्ग दर्शन मिलने लगेगा कि क्या करना है ? क्या नहीं करना है ? आदि। आपको सही समय पर सही कार्य याद आने लगेगा। आपको अपने कार्यों व समय के समुचित समन्वय में अद्‌भुत सफलता मिलेगी। आपके विकास की गति तीव्र हो जायेगी। इससे हमारे व्यक्तित्व की सभी बिखरी हुई शक्तियां संगठित होकर निखर जायेगी।

आत्म निरीक्षण का प्रयोग प्रतिदिन दिन में दो बार पांच–पांच मिनट के लिए करें। रात को सोते समय एवं प्रातः उठते समय। सोते समय करने से हमने क्या किया है ? और क्या करना शेष है ? इसके प्रति जागरुकता बढ़ती है। प्रातः इसलिए करें कि जो करना शेष रह गया है, उसके प्रति हमारी पूरी मानसिक तैयारी हो जाए।

सोने से पूर्व प्रयोग को एकान्त और शान्त स्थान में प्रारम्भ करें। घड़ी में समय देख लें। सुविधाजनक आसन में बैठें। आंखें कोमलता से बन्द करें। अपने ईष्ट और गुरु का स्मरण करें। अनुभव करें कि एक घण्टा पूर्व, मैं क्या कर रहा था ? इसी प्रकार क्रमशः प्रातः उठने तक एक–एक घण्टा पीछे चले जाएं। पुनः प्रातः से प्रारम्भ कर वर्तमान समय तक आ जायें। पुनः अपने ईष्ट व गुरु का स्मरण करते हुए प्रयोग सम्पन्न करें।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. स्मृति–विकास

रूपरेखा

1.0 स्मृति और विस्मृति
  1.1 स्मृति का महत्त्व
  1.2 विस्मृति के कारण
2.0 स्मृति–प्रशिक्षण
  2.1 रूचि
  2.2 एकाग्रता
  2.3 सम्बन्ध संयोजना
  2.4 पुनरावर्तन
3.0 सुदृढ़ स्मृति और अध्ययन शैली
  3.1 सर्वावलोकन
  3.2 पूर्वावलोकन
  3.3 अन्तरावलोकन
  3.4 पुनरावलोकन
4.0 मस्तिष्क की क्षमता और प्रेक्षाध्यान
  4.1 स्मृति विकासक प्रयोग : महाप्राण ध्वनि
  4.2 ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का ध्यान

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

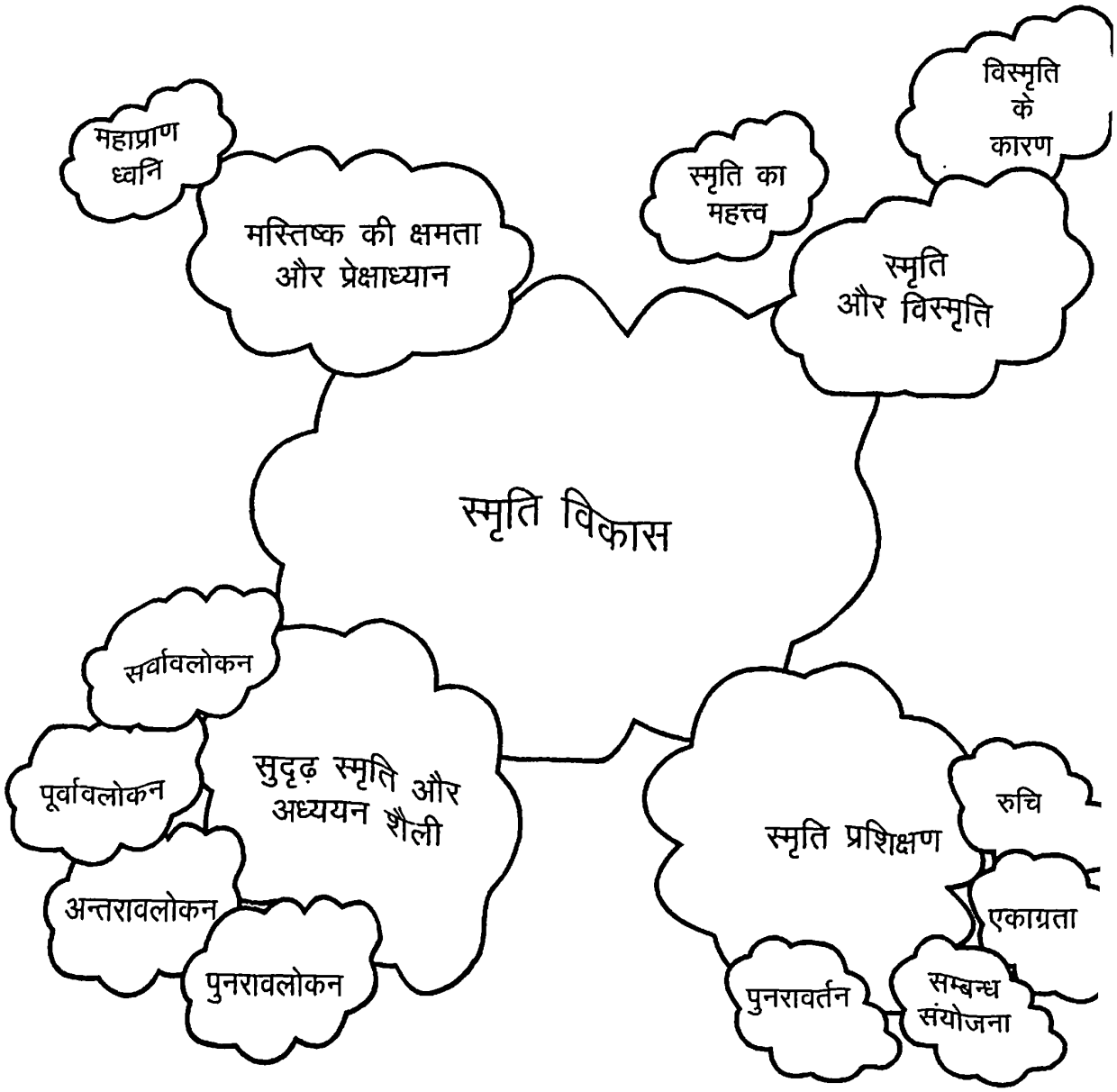

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. स्मृति विकास

क्या आप जल्दी भूल जाते हैं ?

क्या आपको पढ़ी हुई बातें परीक्षा में याद नहीं आती है ?

क्या आपका पढ़ने में मन कम लगता है ?

क्या आप पढ़ते समय एकाग्र और शान्त नहीं रह पाते हैं ?

क्या पढ़ते समय आपको चंचलता परेशान करती है ?

क्या आपकी रूचि पढ़ने में कम है ?

यदि हां तो आप विस्मृति की समस्या से ग्रस्त हैं। विस्मृति को कम करना और स्मृति को सुदृढ़ करने के लिए स्मृति प्रशिक्षण बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है।

1.1 स्मृति का महत्त्व

व्यक्तित्व विकास का एक महत्त्वपूर्ण घटक है – सुदृढ़ स्मृति। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता के लिए इसकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्यार्थियों में अच्छी स्मृति होने का परिणाम है – अच्छे अंकों की प्राप्ति। युवाओं में अच्छी स्मृति का तात्पर्य है – अपने कार्यक्षेत्र में सफलता। प्रौढ़ों में अच्छी स्मृति का तात्पर्य है – संबंधों की सुदृढ़ता। वृद्धों में अच्छी स्मृति होने का परिणाम है – जीवन में उत्साह व उल्लास।

व्यक्तित्व–विकास का एक और महत्त्वपूर्ण पहलू है – अभिव्यक्ति कौशल का विकास। अच्छी अभिव्यक्ति के लिए सतत ज्ञानार्जन की आवश्यकता होती है। उसके लिए जितनी अच्छी स्मृति होती है अभिव्यक्ति में भी उतना ही निखार आता चला जाता है। ज्ञान को धारण करने व उसे अभिव्यक्त करने में स्मृति से सहायता मिल जाती है। जितनी विषय सामग्री आपको याद रहेगी, आपकी अभिव्यक्ति उतनी ही प्रभावी हो सकेगी।

जीवन में सफलता के लिए योजनाबद्ध व्यवस्थित कार्य करने का बहुत महत्त्व है। योजना बनाने, निर्णय करने और उसे क्रियान्विति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

के धरातल पर उतारने में अच्छी स्मृति का भी बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। योजना बनालें, कागज पर भी उतार लें, किन्तु सही समय पर कागज ही न मिले, कहां रखा है ? खोजते रहें तो योजना की क्रियान्विति सही समय पर कैसे होगी ?

1.1 विस्मृति के कारण

यह जो भूलने की समस्या है वह सभी उम्र के लोगों में दिखाई देती है। बचपन में भी दिखाई देती है एवं बड़ी उम्र के लोगों में भी। आखिर आदमी भूलता क्यों है ? उसे याद क्यों नहीं रहता है ? मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि जिसमें आपकी रूचि नहीं है उसे याद रखना कठिन होता है। जिसमें आपकी गहरी रूचि है उसको याद करने की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती है, स्वतः याद रह जाती है। क्रिकेट के शौकीन बच्चों से पूछो कि भारतीय क्रिकेट टीम के ग्यारह खिलाड़ी कौन–कौन से हैं ? तुरन्त बता देंगे। शायद कभी उन्होंने इसे बैठकर याद नहीं किया होगा। स्वतः याद हो गया। रूचि हो तो याद करना और उसे याद रखना आसान हो जाता है। रूचि न होने से एकाग्रता भी नहीं हो पाती है उससे याद करने में भी कठिनाई होती है।

2.0 स्मृति प्रशिक्षण

स्मृति के विकास के लिए स्मृति का तात्पर्य समझना उपयोगी रहेगा। स्मृति के चार चरण हैं :– 1. ग्रहण (Reception), 2. धारणा (Retention), 3. पहचान (Rcognition), 4. प्रत्यास्मरण (Recall)। किसी भी तथ्य को याद करने के लिए उसे रूचि एवं एकाग्रता से ग्रहण करना होता है। ग्रहण करने के बाद वे तथ्य हमारे मस्तिष्क में लम्बे समय तक क्षमतानुसार धारणा के रूप में संगृहित रहते हैं। जब पुनः वे तथ्य हमारे सामने आते हैं तो उनकी आंशिक या पूर्ण रूप से पहचान कर ली जाती है। आवश्यकतानुसार जब वे सहज ही चेतना में ऊभर आते हैं तो उसे प्रत्यास्मरण कहा जाता है। उसे हम अच्छी स्मृति या सुदृढ़ स्मृति भी कहते हैं।

धारणा की दृष्टि से स्मृति के दो प्रकार किये जाते हैं – अल्पकालिक स्मृति एवं दीर्घकालिक स्मृति। अल्पकालिक स्मृति उसे कहते हैं जो थोड़े समय के लिए याद रहती है। दीर्घकालिक स्मृति उसे

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कहते हैं जो लम्ब समय तक याद रह जाती है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अल्पकालिक स्मृति किसी की भी खराब नहीं होती है। केवल अन्तर पड़ता है दीर्घकालिक स्मृति में। वास्तव में अच्छी या बुरी स्मृति नाम की कोई चीज नहीं होती है। केवल होती है – प्रशिक्षित स्मृति या अप्रशिक्षित स्मृति। जिसने अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालिक स्मृति में बदलने का प्रशिक्षण प्राप्त-कर लिया उसकी स्मृति अच्छी व सुदृढ़ होती है। प्रश्न है कि अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालिक स्मृति में कैसे बदलें? अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालिक स्मृति में बदलने के लिए चार महत्त्वपूर्ण कारक तत्त्व हैं – 1. रूचि, 2. एकाग्रता, 3. सम्बन्ध संयोजना, 4. पुनरावर्तन। इन चार कारक तत्त्वों के उपयोग से स्मृति को प्रशिक्षित किया जाता है।

2.1 रूचि

अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालिक स्मृति में बदलने का सबसे पहला बिन्दु है – रूचि। जिस विषयवस्तु को याद रखना है उसमें रूचि का होना। अनेक बार कुछ विषय स्वतः रूचिकर होते हैं तो उन्हें याद रखना आसान होता है। कभी–कभी कुछ विषय ऐसे होते हैं, जिनमें रूचि तो नहीं होती किन्तु उन्हें याद रखना आवश्यक होता है। ऐसे विषयों में रूचि लेनी होती है। रूचि को बढ़ानी पड़ती है। रूचि को बढ़ाने का सरलतम उपाय है – उस विषय की उपयोगिता के बारे में बार–बार विचार करना। बार बार दोहराने से वह विचार हमारे अवचेतन मन तक बैठ जाता है। इससे स्वतः उस विषय के प्रति रूचि जागृत हो जाती है। जैसे किसी विद्यार्थी को गणित विषय कठिन लगता है, उसमें उसे आनन्द नहीं आता है, मन नहीं लगता है। दूसरी तरफ गणित विषय में उत्तीर्ण होना भी आवश्यक है। ऐसी परिस्थिति व मनःस्थिति में विद्यार्थी क्या करे ? अभिभावक अथवा शिक्षक इस विषय की उपयोगिता के बारे में बताएं। विद्यार्थी स्वयं अपना ध्यान केन्द्रित करे कि –"गणित मेरे लिए अत्यन्त उपयोगी एवं आवश्यक है, यह भविष्य में बहुत काम आयेगा। मैं इसे थोड़ी सी मेहनत से हल कर सकता हूं।" इस प्रकार इसे वह बार बार दोहराये जिससे वह उसके अवचेतन मन तक चला जाये। इससे गणित में उसकी रूचि स्वतः जागृत हो जायेगी। मनोरंजनात्मक विषय

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आधारित खेल व प्रभावकारी श्रव्य–दृश्य सामग्री से भी रूचि जागृत की जा सकती है।

2.2 एकाग्रता

स्मृति का दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक तत्व है – एकाग्रता। एकाग्रता का अर्थ है – एक ही आलम्बन/वस्तु/विषय पर मन का स्थिर रहना। स्मृति के संदर्भ में मन के एकाग्र होने से दो फलित घटित होते हैं – विषय–वस्तु के अन्तरंग सम्बन्धों का बोध तथा संस्कारों का दृढ़ता से ग्रहण। मन के एकाग्र होते ही विषयवस्तु का बोध सरल हो जाता है, इनके पारस्परिक सम्बन्धों का भी ज्ञान सहज रूप से विकसित होने लगता है। इससे विषयवस्तु का ग्रहण बहुत तीव्रता से एवं सघन रूप से होने में सहायता मिलती है। वह विषय वस्तु दीर्घकालिक स्मृति बन जाती है।

अध्ययन और पठन–पाठन के सन्दर्भ में एकाग्रता का बहुत अधिक महत्त्व है। अतः पढ़ने से पहले स्थान, समय, अवधि, आदि पर भी ध्यान देने से एकाग्रता को बनाये रखने में मदद मिलती है।

<u>अवधि</u> : किसी एक विषय पर सामान्यतया 20 से 40 मिनट तक ही एकाग्र रहा जाता है। उसके पश्चात् मस्तिष्क के तन्तु थकने लगते हैं। अतः एक विषय को एक साथ लगातार 40 मिनट से अधिक न पढ़ें। यदि लम्बा पढ़ना आवश्यक ही हो तो बीच–बीच में विषयान्तर कर लें। इससे एकाग्रता को बनाये रखने में मदद मिलेगी।

<u>समय</u> : अध्ययन के लिए समय का चुनाव भी सावधानी से करना चाहिए। जब मन प्रसन्न, भार व तनाव रहित हो वह समय सबसे अच्छा होता है। ऐसे समय में मन की ग्रहणशीलता सर्वाधिक होती है। प्रातः ब्रह्ममुहुर्त्त का समय इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

<u>स्थान</u> : स्थान भी ऐसा हो जहां व्यवधान की संभावना कम से कम हो। कमरे में टी.वी. रखा हो, परिवार के अन्य सदस्य उसे देख रहे हों, आप भी वहीं बैठकर पढ़ रहे हों तो यह सम्भावना अधिक है कि आपका मन पढ़ने में कम लगे। अतः वायु व प्रकाश पूरा हो तथा बाह्य ध्वनि रहित स्थान का प्रयोग करना हितकर होगा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इस प्रकार एकाग्रता को बढ़ाने एवं व्यवधान को कम से कम करने पर ध्यान देने से दीर्घकालिक स्मृति के विकास में बहुत मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त ध्यान के अनेक छोटे–छोटे अभ्यास (4.1 व 4.2) भी हैं जिनके द्वारा एकाग्रता और स्मृति का विकास किया जा सकता है।

2.3 सम्बन्ध संयोजना

बचपन में समृति बहुधा तीव्र होती है। फोटोग्राफी की तरह मस्तिष्क के कैमरे में वह दृश्य कैद हो जाता है। लम्बे समय तक वह दृश्य याद भी रहता है। किन्तु जैसे–जैसे बड़े होते हैं तो फोटोग्राफिक स्मृति कम होती चली जाती है। उस समय स्मृति अल्पकालीन से दीर्घकालीन बनाने का सर्वाधिक प्रचलित व सरलतम उपाय है – सम्बन्धों की संयोजना करना। ज्ञात से अज्ञात को जोड़ना। जैसे विद्यालय में पढ़ते समय सात रंगों को याद करने के लिए कहा जाता था। उस समय यह भी बताते थे कि इसको याद करने के लिए सभी रंगों के पहले अक्षरों को (अंग्रजी के) का सम्बन्ध कर लो तब एक शब्द बनता है – VIBGYOR अर्थात् Violet (बैंगनी), Indigo (नीला), Blue (आसमानी) Green (हरा), Yellow (पीला), Orange (केसरिया), Red (लाल)। इस प्रकार एक शब्द में सातों रंग सरलता से याद हो जाते हैं। वह शब्द आज अनेक वर्षों के बाद भी याद है। इस प्रकार सम्बन्धों के संयोजन से अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालीन स्मृति में सरलता से बदला जा सकता है। यह संबंध संयोजना स्मृति प्रशिक्षण का हृदय है। इससे स्मृति प्रशिक्षण के दोनों कारक तत्व स्वतः जुड़ जाते हैं। स्मरण करना रूचिकर हो जाता है तथा मन भी वहां सहज रूप से एकाग्र हो जाता है।

इस संबंध–संयोजना का अपना पूरा विज्ञान भी है। उसे 'अवधान विद्या (Mnemonics) कहा जाता है। वह प्राचीनकाल में बहुत विकसित था। आज भी अनेक मुनिगण व गृहस्थ व्यक्ति भी स्मृति प्रशिक्षण व अभ्यास से आश्चर्यजनक प्रदर्शन करने में सक्षम हैं। इस स्मृति प्रदर्शन के अन्तर्गत 27 अंकों तक की लम्बी संख्या याद रख लेते हैं। सैंकड़ों वस्तुओं या तथ्यों को तुरन्त याद कर लेते हैं। अनेक श्लोंकों को तुरन्त याद कर लेते हैं–आदि अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत करते

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हैं तथा कार्यक्रम के अन्त में उन्हें हूबहू सुना भी देते हैं। स्मृति प्रशिक्षण में चेहरे को, नामों को याद रखने आदि अनेक स्मृतिगत समस्याओं के समाधान हेतु सम्बन्ध संयोजना सिद्धान्त का अलग अलग ढंग से उपयोग होता है। जिन्हें सीख कर कोई भी व्यक्ति स्मृति के कमजोर पक्षों को सरलता से विकसित कर सकता है।

2.4 पुनरावर्तन

पुनरावर्तन का तात्पर्य है – याद की हुई सामग्री को दोहराना। जिस सामग्री का लम्बे समय तक उपयोग नहीं होता वह सामग्री खराब होने लगती है। इसी प्रकार जिस विषय वस्तु को हमने याद किया है उसका भी समय समय पर किसी न किसी प्रकार से उपयोग नहीं होता है तो वह भी विस्मृत होने लगती है। अतः समय समय पर याद की हुई सामग्री का उपयोग अथवा पुनरावर्तन करते रहना अच्छी एवं सुदृढ़ स्मृति के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

हम अपनी रूचि के विषय को बार बार देखना, पढ़ना व सुनना चाहते हैं। अतः पढ़ने में एवं याद करने में रूचि लें। उसकी उपयोगिता पर बार–बार ध्यान दें। इससे पुनरावर्तन व उपयोग करने की क्षमता बढ़ेगी। उदाहरणतया जैसे कोई अपरिचित व्यक्ति आपसे मिले, उसने आपको नाम बताया। नाम सुनते ही उसको तीन चार बार अपने भीतर मन ही मन दोहरा लें। उसकी संबंध संयोजना कर लें। वार्ता के दौरान तीन चार बार उसको उसके नाम से संबोधित करने का प्रयत्न करें। अभ्यास करें । इससे आपको अपने दैनिक जीवन में नाम को याद करना व याद रखना आसान हो जायेगा।

3.0 सुदृढ़ स्मृति और अध्ययन शैली

विद्यार्थियों के अध्ययन के लिए संबंध–संयोजना की विशेष पद्धति का विकास हुआ है। इसे सीखकर प्रत्येक विद्यार्थी बहुत लाभ उठा सकता है। संबंध संयोजना के महत्त्व को एक और उदाहरण से समझें – मेडिकल स्टोर में सैंकड़ों प्रकार की दवाईयां होती हैं। दुकान का मालिक बिना किसी विशेष असुविधा के जब चाहे तब किसी भी दवाई को तुरन्त लाकर ग्राहक को दे देता है। क्या इसका रहस्य आप जानते है ? इसका रहस्य संबंध संयोजना है। दुकानदार प्रत्येक दवाई

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

के लिए एक स्थान सुनिश्चित करता है फिर वहीं उसे रखता है। अतः उसे रखने व लेने में कठिनाई नहीं होती है।

अध्ययन करते समय भी किससे किसको एवं कैसे जोड़ना ? संबंधों की संयोजना कैसे करना, यह सीखा दिया जाये तो ग्रहण, धारण, पहचान व प्रत्यास्मरण स्मृति के सभी पक्ष सुदृढ़ हो जायेंगे। उपरोक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए अध्ययन पद्धति को चार चरणों में बांटा गया है– 1. सर्वावलोकन, 2 पूर्वावलोकन, 3. अन्तरावलोकन, 4. पुनरावलोकन।

3.1 सर्वावलोकन (Over View)

अध्ययन की सामग्री को मस्तिष्क में धारण करने से पहले उसे किससे जोड़ा जाये ? जिससे वह लम्बे समय तक याद रहे एवं वह आसानी से समय पर याद भी आ जाए। इसके लिए हम अध्ययन से पूर्व पुस्तक का समग्र रूप से अवलोकन करें, उससे परिचित हो जाएं। उसकी भूमिका, उसका सारांश एवं उसकी अनुक्रमणिका (Index) को पढ़ें। विशेष रूप से अनुक्रमणिका के परस्पर संबंधों को समझने की कोशिश करें। यह अनुक्रमणिका ही वह Anchor या हुक है जिससे अध्ययन की पूरी सामग्री व्यवस्थित रूप से जुड़ी रहती है। मस्तिष्क में लम्बे समय तक जुड़ी रहेगी। इसे प्रत्येक बार हर विषय के अध्ययन से पूर्व एक बार अवश्य देख लें, उनके पारस्परिक संबंधों को ताजा कर लें। सामान रखने के लिए स्टोर में हुक, अलमारियां आदि जितनी अधिक और व्यवस्थित रहेगी सामान भी उतना ही अधिक और व्यवस्थित रखा जा सकेगा। अतः अनुक्रमणिका को समझने व प्रत्येक बार उसे देखने के महत्त्व को जानकर प्रत्येक विषय के अध्ययन से पूर्व अवश्य उपयोग करें।

3.2 पूर्वावलोकन/पुनरीक्षण (Review)

विषय के अध्ययन के अन्तर्गत जिस अध्याय को पढ़ना है, उसको भी किससे एवं कैसे जोड़ा जाए। अध्याय को जोड़ने के लिए सबसे उपयोगी साधन है –अध्याय के अन्त में दिए गये सारांश, अध्ययन के अन्त में दिये गये प्रश्न एवं पूर्व मे दी गई अध्याय की रूपरेखा। अतः अध्याय को प्रारम्भ करने से पहले उसके प्रश्नों को पढ़ें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पूर्व में दी गई रूपरेखा को पढ़ें एवं अध्याय के अन्तर्गत दिये गये शीर्षक, उपशीर्षक, तालिका, चित्र आदि को देखें। इससे अध्याय का सामान्य परिचय होगा। जिससे आपकी रूचि व एकाग्रता बढ़ेगी।

3.3 अन्तरावलोकन

सर्वावलोकन व पूर्वावलोकन से विषय के प्रति रूचि व एकाग्रता बढ़ने के अतिरिक्त अध्याय/पाठ के प्रति आपकी समझ को भी बढ़ायेगी। आपकी अन्तर्दृष्टि भी विकसित होगी। पाठ में क्या–क्या बातें महत्त्वपूर्ण व स्मरणीय है उनकी पकड़ भी आपमें मजबूत होगी।

अन्तरावलोकन के समय नियमित अध्ययन की भांति पूरे पाठ को पढ़ें किन्तु एक बात याद रखें, पाठ पढ़ते समय हाथ में कच्ची पेंसिल एवं रबड़ अवश्य रखें। पाठ को त्वरित गति से पढ़ें, पढ़ते समय पेन्सिल को पढ़ी जाने वाली पंक्ति पर त्वरित गति से आगे बढ़ाएं। स्मरणीय एवं महत्त्वपूर्ण अंशों को रेखांकित करें। कठिन अंशों को भी अंकित (Mark) करें। त्वरित गति से पूरे पाठ को पढ़ लें। एक बार पढ़ने के बाद कठिन अंशों एवं महत्त्वपूर्ण अंशों को दोबारा पढ़ लें। उपरोक्त प्रक्रिया के बाद अपने नोट्स कॉपी में बना लें। नोट्स बनाने की सामान्य प्रक्रिया के अतिरिक्त एक विशेष प्रक्रिया यह भी है जो पुनरावर्तन व दीर्घकालिक स्मृति के लिए बहुत सहायक सिद्ध होती है। सामान्य प्रक्रिया के अन्तर्गत सभी महत्त्वपूर्ण व स्मरणीय बातों को हम क्रमशः लिख लेते हैं। किन्तु विशेष प्रक्रिया के अन्तर्गत सम्पूर्ण अध्याय को हम केन्द्रीय सारभूत तथ्यों से जोड़कर वृक्षाकार रूप में विकसित करते हैं।

3.4 पुनरावलोकन

याद की गई सामग्री का जब बार बार उपयोग होता है तो वह विस्मृत नहीं होती है। लम्बे समय तक याद रहती है। कम समय में अधिक से अधिक सामग्री का पुनरावलोकन कैसे हो ? सर्वावलोकन तथा पूर्वावलोकन के पश्चात् अन्तरावलोकन में आपने जो स्मरणीय व महत्त्वपूर्ण अंशों को लिखा है उसे पुनः देख लें तथा समय–समय पर देखते रहें। यदि आपने साथ–साथ वृक्षाकार चित्रण व लेखन भी किया है तो वह आपके पुनरावर्तन की क्षमता को बहुत तीव्र व सटीक बना

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देगा। उसको देखते ही पाठ की महत्त्वपूर्ण बातें आपके मस्तिष्क में फिल्म की तरह घूम जायेगी। बहुत तीव्र गति से पाठ का पुनरावर्तन होगा। अभ्यास के बाद अध्ययन करना भी अपने आपमें मनोरंजक बन जायेगा। याद करना भी आनन्ददायक बन जायेगा।

4.0 मस्तिष्क की क्षमता और प्रेक्षाध्यान

मस्तिष्क की क्षमता असीम हैं। उसकी क्षमता का आधार जागृत ज्ञान तन्तु है। मस्तिष्क के दो भाग हिप्पोकेम्पस (Hippocampus) और अमीगडाला (Amygdala) दीर्घकालीन स्मृति के लिए विशेष उत्तरदायी होते हैं। इनका स्थान कनपटी के पास होता है। जब ये स्वस्थ, शक्तिशाली होते हैं, अर्थात् इनके तन्तु सक्रिय और जागृत होते हैं तो स्मृति के दीर्घकालीन व सुदृढ़ होने में बहुत सहयोग मिलता है। दोनों कनपटियों पर पीले रंग का ध्यान से वहां के ज्ञान तन्तुओं को सक्रिय और जागृत किया जा सकता है।

मानसिक क्षमता के विकास के साथ किसी तथ्य को ग्रहण करते समय उसी पर ध्यान को एकाग्र करना आवश्यक होता है अन्यथा वह तथ्य याद नहीं रह पायेगा। जब मस्तिष्क पहले से ही अत्यधिक विचारों की उथल पुथल में उलझा रहता है तो हमारे चारों ओर क्या हो रहा है? उसका भी ठीक से बोध नहीं होता है। अतः मस्तिष्क को विचारों से खाली करने और मन को एकाग्र करने का एक और सरल उपाय है – महाप्राण ध्वनि का अभ्यास।

4.1 स्मृति विकासक प्रयोग : महाप्राण ध्वनि :

सुखासन में बैठें। ज्ञान मुद्रा लगाएं। अर्थात् अंगूठे और तर्जनी के अग्रभागों को मिलाएं। शेष तीनों अंगुलियां सीधी रहे। दोनों हाथों को घुटनों पर स्थापित करें। आंखें बिना दबाव दिये कोमलता से बन्द रखें। रीढ़ व गर्दन सीधी रहे। लम्बा श्वास भरें एवं भंवरे की तरह मंद एवं मधुर गूंजन करें।

महत्त्व एवं लाभ :

1. महाप्राण ध्वनि ध्यान की पूर्व भूमिका का निर्माण करती है।
2. मस्तिष्क के स्नायुओं को सक्रिय करती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. मन की चंचलता को कम करती है।
4. एकाग्रता बढ़ाती है।
5. पढ़ने में मन लगता है।
6. श्वास–प्रश्वास मंद और लम्बा होता है।
7. इसके निरन्तर अभ्यास से स्मरण–शक्ति का विकास होता है।
8. मन शान्त और भाव निर्मल होते हैं।

4.2 ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का ध्यान

दाहिने हाथ की हथेली ज्ञान केन्द्र पर रखें। सूरजमुखी के फूल की भांति ज्ञान केन्द्र और दोनों कनपटियों पर पीले रंग का ध्यान करें।

शब्दावली को तीन बार दोहराएं – "मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु सक्रिय हो रहे हैं। स्मरणशक्ति का विकास हो रहा है।" (तीन बार मानसिक जप करें।)

अनुभव करें– "मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु सक्रिय हो गये हैं, स्मरण शक्ति का विकास हो गया है।"

तीन बार महाप्राण ध्वनि से प्रयोग सम्पन्न करें।

इस प्रकार व्यक्तित्व विकास का एक महत्त्वपूर्ण घटक तत्व हैं – स्मृति विकास। इसे स्मृति प्रशिक्षण व प्रयोग से विकसित किया जा सकता है तथा स्मृति से संबंधित समस्याओं का समाधान प्राप्त किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति इससे लाभान्वित हो सकता है।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5 तनाव–प्रबंधन

रूपरेखा

1.0 तनाव : क्या और क्यों ?

1.1 तनाव के कारण

1.2 तनाव के लक्षण

1.3 तनाव के प्रकार

2.0 शारीरिक तनाव

2.1 पेशीय संकुचन

2.2 रासायनिक घटनाएं

2.3 पेशी श्रान्ति

2.4 पेशी शिथिलन

3.0 मानसिक/भावनात्मक तनाव

3.1 दबाव तन्त्र

3.2 असामान्य परिवर्तन

4.0 तनाव के दुष्परिणाम

5.0 तनाव का उपचार : कायोत्सर्ग

5.1 कायोत्सर्ग का पुनः पुनः अभ्यास

5.2 मांसपेशीय स्वास्थ्य

6.0 तनाव–प्रबंधन – प्रयोग

6.1 प्रयोग–प्रविधि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

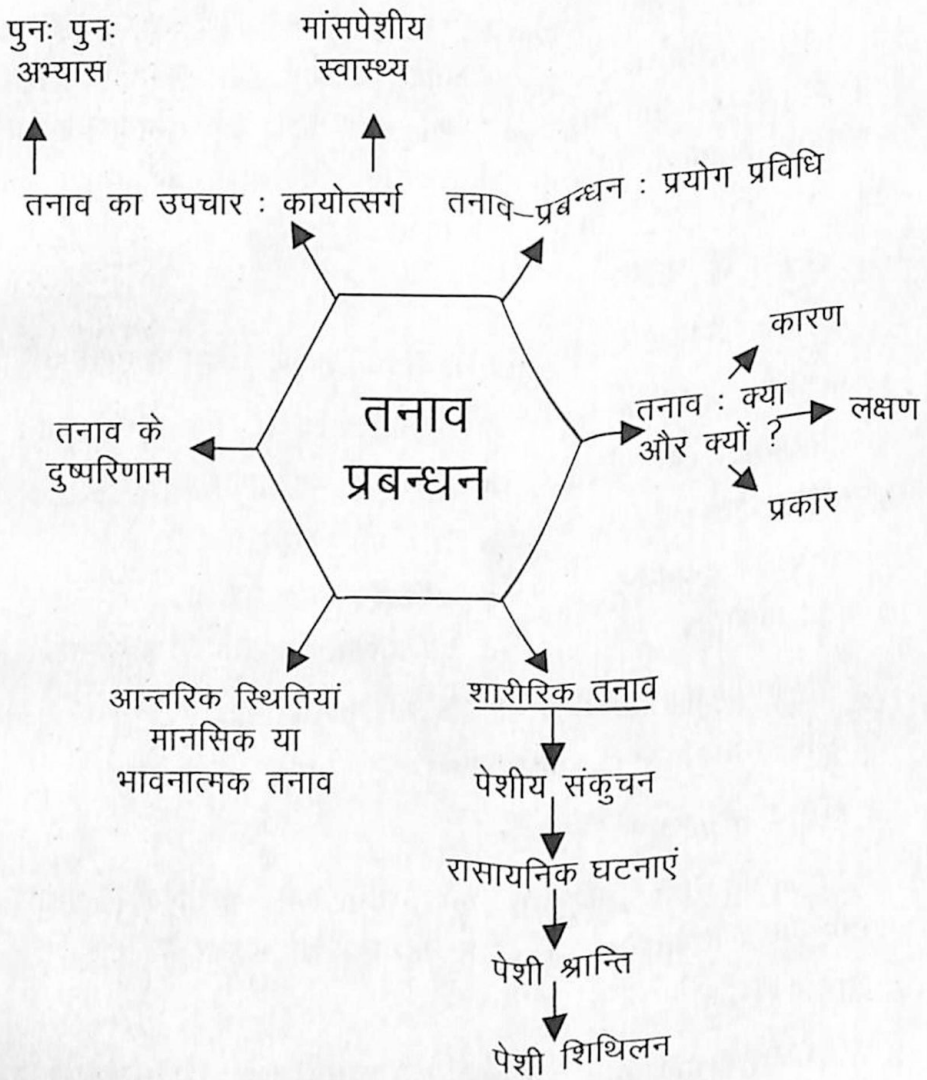

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. तनाव–प्रबंधन

1.0 तनाव : क्या और क्यों ?

विश्व में आज तनाव एक बड़ी समस्या बन गयी है। यह 21वीं शताब्दी के लिए खतरे की घंटी है। आम आदमी इसके रहते जीवन की चुनौतियो से निपटने में स्वयं को असहाय अनुभव कर रहा है। यह तनाव आज की अनेक बीमारियों का एक प्रमुख कारण बना हुआ है– अनिद्रा, उच्च–रक्तचाप, हृदयाघात, पाचनतंत्र की दुर्बलता, जोड़ों का दर्द, अस्थमा, सम्बन्धों में कटुता आदि। प्रतिवर्ष इस तनाव से करोड़ों कार्य–दिवसों का नुकसान राष्ट्र को होता है। यह तनाव प्रशासक, व्यवसायी, अध्यापक, विद्यार्थी, व्यवस्थापक,, कर्मचारी, बेरोजगार आदि सभी आयु, लिंग के व्यक्तियों को प्रभावित करता है।

1.1 तनाव के कारण

वर्तमान जीवनशैली में तनाव के अनेक कारण देखने में आते हैं –

1. अत्यधिक शारीरिक श्रम
2. अत्यधिक चिन्ता, क्रोध, ईर्ष्या आदि
3. सुविधावादी जीवनशैली
4. अत्यधिक महत्त्वाकांक्षाएं
5. गरिष्ठ भोजन
6. कार्य की अधिकता
7. समय का कुप्रबंधन
8. अनियमित जीवनशैली
9. एकल परिवार
10. पारिवारिक असंतोष व कड़वाहट
11. अनुकम्पी–परानुकम्पी नाड़ी तंत्र का असंतुलन
12. व्यवसायी–कर्मचारी संबंध आदि।

1.2 तनाव के लक्षण

तनाव की अधिकता को व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक व व्यवहारिक लक्षणों से पहचाना जा सकता है।

शारीरिक लक्षण

1. तनावग्रस्त मांसपेशियां
2. अव्यवस्थित श्वास/श्वास की संख्या में वृद्धि
3. मुंह सूखना
4. हथेलियों पर पसीना आना
5. हाथ–पैर ठण्डे होना
6. हाथों में कम्पन्न

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. बार–बार पेशाब आना 8. काम में मन नहीं लगना
9. पाचनतंत्र का कमजोर होना 10. यकृत का संचित भण्डार रिक्त होना
11. सिरदर्द 12. आंखों में पानी आना, लाल होना, सूजन आदि।
13. रक्तचान बढ़ना/घटना

मानसिक व भावनात्मक लक्षण

1. असामान्य व्यवहार 2. चिड़चिड़ापन
3. हीनभावना 4. क्रोधी स्वभाव बनना
5. चिन्ता 6. निराशा
7. असुरक्षा की भावना 8. अनिद्रा
9. दुस्वप्न 10. मनःस्थिति का बार–बार बदलना
11. रोना, चिल्लाना 12. बार–बार भूल जाना
13. जीवन में असफलता नजर आना।

व्यावहारिक लक्षण

1. नशे की आदत 2. अस्त–व्यस्त जीवनशैली
3. सामाजिकता में बदलाव 4. तनावग्रस्त मुद्राएं–जैसे दांतों से नाखुन काटना आदि

1.3 तनाव के प्रकार

तनाव को पहचानना और उससे छुटकारा पाना एक चुनौती है। मोटे तौर पर तनाव को तीन भागों में बांटा गया है– शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक तनाव। ये तीनों प्रकार के तनाव एक दूसरे में भी बदलते हैं। शारीरिक तनाव से मानसिक तनाव और भावनात्मक तनाव भी उत्पन्न हो जाता है। कभी–कभी मानसिक तनाव से शारीरिक और भावनात्मक तनाव उत्पन्न हो जाते हैं। अतः इनका पारस्परिक परिवर्तन सम्भव है। सातान्यतया शारीरिक तनाव अत्यधिक शारीरिक श्रम से पैदा होता है। इसे विश्रान्ति या थकान भी कहते हैं। यह तनाव विश्राम व नींद से दूर हो जाता है। मानसिक तनाव अत्यधिक चिन्तन या चिन्ता से होता है। भावनात्मक तनाव (निषेधात्मक) बुरे भाव (आर्त्त व रौद्रध्यान) से पैदा होता है। ये दोनों तनाव नींद में भी स्वप्न के रूप में अभिव्यक्त होते रहते हैं। इन दोनों से निदान पाना अधिक चुनौतीपूर्ण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। आधुनिक जीवनशैली में व्यक्ति इस चुनौती का सामना मादक पदार्थ या प्रशामक औषधियों के सेवन से कर रहा है। पर अनेक बार इस विधि का भारी मूल्य चुकाना पड़ता है। इससे अनेक असुविधाएं व जटिलताएं बढ़ जाती है। अन्य अतिरिक्त बीमारियों का सामना करना पड़ता है। अच्छा यह है कि हम ऐसे तनाव का मुकाबला प्राकृतिक तरीके से करें। तनाव से निपटने का प्राकृतिक, सहज व आन्तरिक तरीका है – कायोत्सर्ग। इसको विस्तार से समझेंगे – कायोत्सर्ग से तनाव कैसे दूर होता है ? क्या तनाव आवश्यक ही है ? शरीर में तनाव से क्या–क्या हानियां हो सकती हैं ? तनाव शरीर में कैसे पैदा होता है ? तनाव की स्थिति में मांसपेशियां कैसे कार्य करती हैं ? आदि प्रश्नों पर चर्चा करेंगे।

2.0 शारीरिक तनाव (**Physical Tension**)

शारीरिक तनाव को पूरी तरह से समझने के लिए मांसपेशीय संकुचन (Muscle Contraction) को समझना आवश्यक है। हमारे शरीर में दो प्रकार की पेशियां होती हैं – इच्छाचालित और स्वतःचालित। कंकाली संरचनाओं (हड्डियों) के साथ जुड़ी हुई पेशियों को कंकाली पेशियां भी कहते हैं। ये इच्छाचालित होती हैं। पेशी कोशिकाओं को पेशी तंतु कहते हैं। प्रत्येक प्रकार का पेशी तंतु छोटी–छोटी ईकाइयों का बना होता है जिन्हें मायोफाइब्रिल (Myofibril) कहते हैं।

2.1 पेशीय संकुचन

कंकाली पेशी में निम्नलिखित अतिसूक्ष्म संरचनात्मक और रासायनिक घटनाएं होती हैं, जिनसे संकुचन होता है।

डॉ. एच.ई. हक्सले ने तंतु फिसलन सिद्धान्त (Sliping filament theory) का प्रतिपादन किया। हक्सले ने इलेक्ट्रोन सूक्ष्मदर्शी से पेशी–तन्तुओं के पैटर्न (व्यवस्था) को विश्रामी अवस्था में, शिथिल अवस्था में तथा लघुत्तर होने के विभिन्न स्तरों पर देखा। उसने देखा कि जब पेशी लघु से लघुत्तर होती जाती है तब मोटे और पतले तंतु एक दूसरे पर फिसलते जाते हैं। लेकिन उनमें से कोई भी तंतु पेशी के लघुकरण के दौरान स्वयं छोटा नहीं होता।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

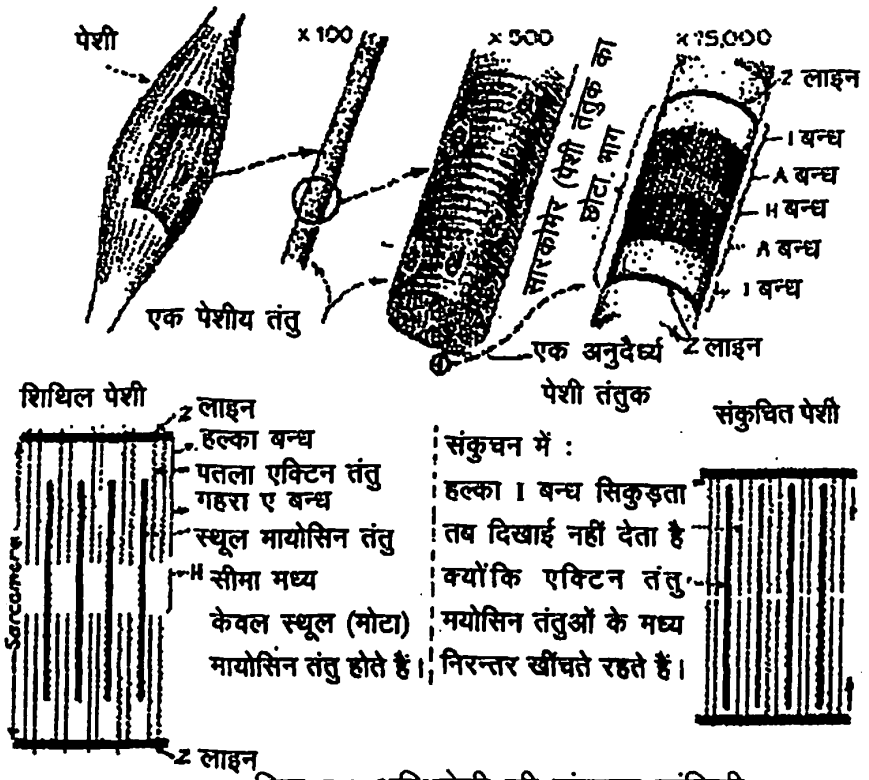

चित्र 5.1 अस्थिपेशी की संकुचन यांत्रिकी

2.2 रासायनिक घटनाएं

पेशी सकुचन में संबंधित रासायनिक घटनाओं का अध्ययन एलबर्ट सेन्ट जार्जियाई तथा अन्य वैज्ञानिकों ने किया है।

प्रेरक तंत्रिका में से तंत्रिका पेशी साइनेप्स अथवा प्रेरक अन्तिम प्लेट पर स्थित आशयों से ऐसीटाइलकोलीन निकलती है जो पेशी को उत्तेजित करती है। इससे अनेक रासायनिक क्रिया द्वारा ऊर्जा (E) निकलती है। वह पेशी के संकुचन में काम आती है।

2.3 पेशी–श्रान्ति (Muscle fatigue)

संकुचित अवस्था में पेशी तनाव कितने समय तक बना रह सकता है। यह इस बात पर निर्भर होता है कि पेशी में ऊर्जा आपूर्ति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

की कितनी क्षमता है ? पेशी में ऊर्जा की आपूर्ति घट जाने पर संकुचन का बल कम हो जाता है और अन्त में गिरकर शून्य हो जाता है। अधिक समय तक उत्तेजित करने के बाद संकुचन बल में आने वाली गिरावट को पेशी–श्रान्ति या थकान कहते हैं।

पेशी में ग्लाइकोजन भी काफी मात्रा में संचित रहता है। यह ग्लाइकोजन एक अभिक्रिया श्रृंखला के द्वारा लेक्टिक अम्ल में विघटित हो जाता है और ऊर्जा निकलती है। पेशी में लेक्टिक अम्ल एकत्रित हो जाने से पेशीश्रान्ति (थकान) आ जाती है। क्योंकि इसका ऊर्जा भण्डार समाप्त हो चुका होता है और श्रान्त–पेशी में दर्द महसूस होने लगता है। साधारण शारीरिक विश्राम की अपेक्षा अधिक कठिन व्यायाम के बाद पेशी में जल्दी श्रान्ति आ जाती है।

2.4 पेशी–शिथिलन

यदि पेशी से लगातार काम लेना है तो उसे एक के बाद एक संकुचित और शिथिल होते रहना होगा। अतः यह आवश्यक है कि उसे ए.टी.पी. के रूप में ऊर्जा भी लगातार मिलती रहे। संकुचन के लिए ऊर्जा उपलब्ध नहीं होती तब पेशी श्लथ व निष्क्रिय हो जाती है। तनाव की स्थिति में पेशी उत्तेजित और संकुचित रहने लगती है। इससे ऊर्जा का अनावश्यक व्यय होता है। थकान आती है। कायोत्सर्ग का अभ्यास तंत्रिका पेशी साइनेप्स पर उत्तेजना को शान्त कर देता है। ऊर्जा के अपव्यय को रोकता है जिससे मांसपेशियों का संकुचन दूर हो जाता है, वे शिथिल हो जाती हैं। उन्हें गहन विश्राम मिलता है।

3.0 मानसिक या भावनात्मक तनाव

मानसिक या भावनात्मक तनाव की समस्या मूलतः आन्तरिक और बाह्य दबाव से उत्पन्न होती है। अतः उसको सुलझाने के लिए "दबाव" को समझना भी जरूरी है। दैनिक जीवन में उन कारणों या परिस्थितियों को दबाव कहा जाता है जो हमारे भीतर असामान्य परिवर्तन ला देती है और मांसपेशियों में खिंचाव या तनाव उत्पन्न कर देती हैं। सहनीय क्षमता तक उत्पन्न तनाव स्वतः समाप्त होता रहता है, परन्तु जब परिस्थितियां विषम और अवांछनीय होती हैं तो क्षमता से अधिक तनाव हमारे जीवन को अस्त–व्यस्त कर देता है। तनाव उत्पन्न

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

करने वाली विषम और अवांछनीय स्थितियां बाह्य भी होती है एवं आन्तरिक भी। बाह्य परिस्थितियां जैसे सर्दी, गर्मी, मादक वस्तुओं का सेवन, भयकारक, चिन्ताजनक व प्रतिकूल परिस्थितियां आदि दबाव का कार्य करती है और इससे असहनीय तनाव भी उत्पन्न होता है। आन्तरिक स्थितियां – आवेश, भय, ईर्ष्या, शोक एवं हर्ष भी दबाव का कार्य करते हैं।

3.1 दबाव तन्त्र

इस प्रकार तनावोत्पादक स्थितियों से व्यक्ति का सामना होने पर व्यक्ति के भीतर स्थित कुछ अवयव तुरन्त सक्रिय हो जाते हैं। उन अवयवों को सामूहिक रूप से 'दबाव तन्त्र' (चित्र 5.2) कहा जाता है। इसमें मुख्यतः निम्नलिखित अवयव/अंग सक्रिय रूप से भाग लेते हैं–

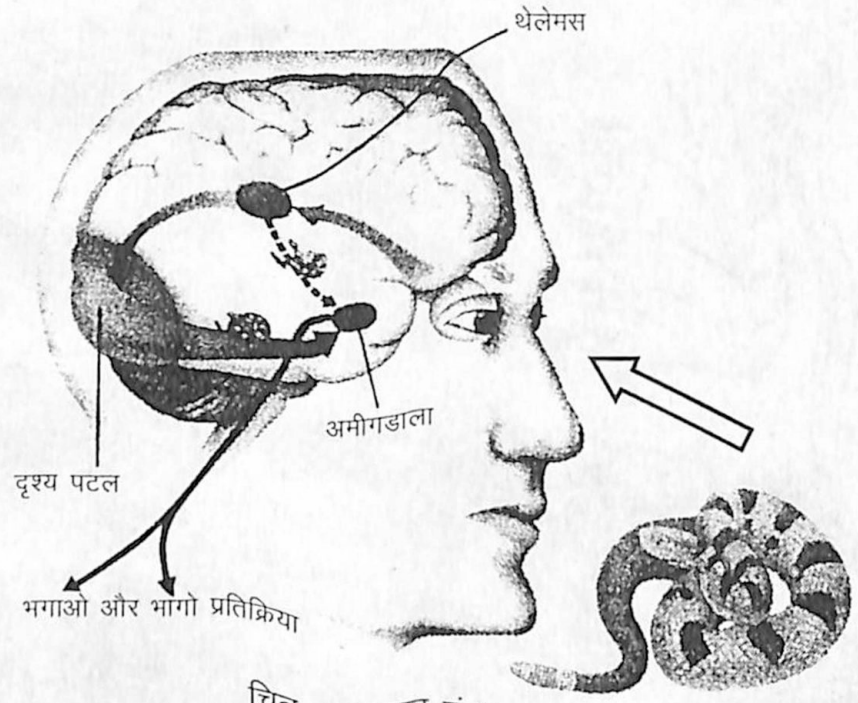

चित्र 5.2 दबाव तंत्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उदाहरण के लिए मानलो कोई व्यक्ति अकेले बगीचे में घूम रहा है। अचानक उसे अपने सामने आता हुआ भयंकर काला सर्प दिखाई दे जाये। तब उसकी सूचना आँखों के द्वारा सीधे हाइपोथेलेमस तक भी पहुंच जाती है। यह मस्तिष्क का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है। यह अंग खतरे को पहचान कर व्यक्ति की सांप से रक्षा के लिए सर्प को भगाने के लिए या स्वयं को भागने (fight or flight) के लिए तैयार करता है। हाइपोथेलेमस इसकी सूचना अन्तःस्रावी ग्रन्थि तन्त्र के नायक पिट्युटरी ग्रन्थि तन्त्र को देता है। वह आगे एड्रीनल ग्रन्थियों को सक्रिय कर देता है। एड्रीनल ग्रन्थियां स्वायत्त नाड़ी तन्त्र के अनुकम्पी विभाग को सक्रिय कर देता है। इतना सब कुछ ही क्षणों में घटित हो जाता है।

3.2 असामान्य परिवर्तन

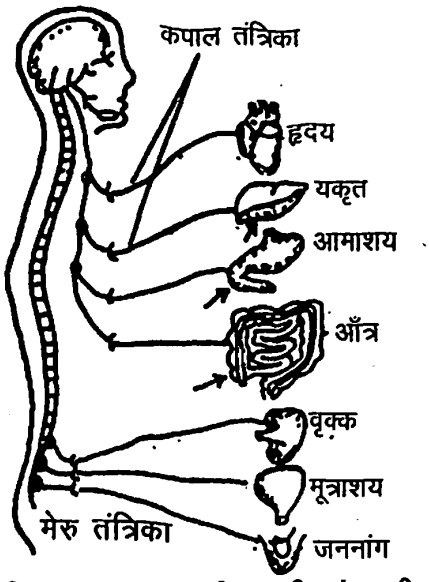

चित्र 5.3 अनुकम्पी नाड़ी तंत्र की अति सक्रियता से तीव्र परिवर्तन

ऐसे दबावों से निपटने के लिए अनुकम्पी विभाग हमारे शरीर में अचानक ही तीव्र और व्यापक अनेक असामान्य परिवर्तन घटित कर देता है। जैसे –

1. पाचन क्रिया मंद या बिल्कुल स्थगित हो जाती है।
2. लारग्रन्थियों के कार्य– स्थगन से मुंह सूख जाता है।
3. चयापचय की क्रिया में तेजी आ जाती है।
4. श्वास तेजी से चलने लगता है तथा हांफ बढ़ जाती है।
5. यकृत द्वारा संग्रहित शर्करा को अतिरिक्त रूप से रक्त प्रवाह में छोड़ा जाता है जिसे हाथ–पैर की मांसपेशियों तक पहुंचाया जाता है।
6. हृदय की धड़कन बढ़ जाती है जिससे शरीर के अपेक्षित भागों में अधिक रक्त को पहुंचाया जाता है।
7. रक्तचाप बढ़ जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इन परिवर्तनों के कारण दबावजनित परिस्थितियों से निपटने के लिए अत्यधिक मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है। इससे मांसपेशियां तनाव से भर जाती है। उपरोक्त उदाहरण में जैसे सांप के सामने आते ही शरीर में अचानक इतने परिवर्तन हो जाते हैं। सांप के चले जाने या वहां से व्यक्ति के दूर चले जाने के बाद धीरे–धीरे स्थितियां सामान्य हो जाती है।

4.0 तनाव के दुष्परिणाम

एक सीमा तक तनाव सुरक्षा, विकास एवं कार्यक्षमता में उपयोगी होता है। बाह्य घटनाएं घटित होती एवं समाप्त भी हो जाती हैं

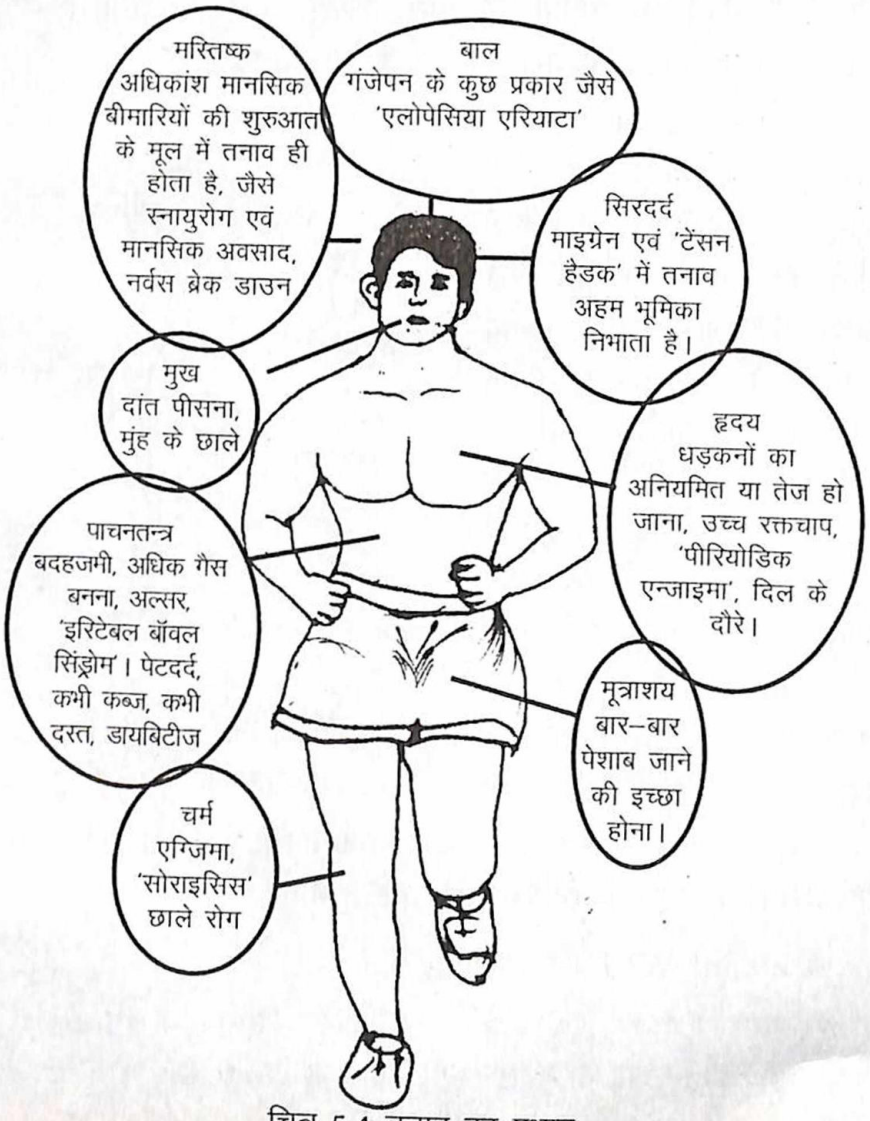

चित्र 5.4 तनाव का प्रभाव

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

किन्तु आन्तरिक चिन्ताएं, काल्पनिक भय व आशंकाएं जल्दी समाप्त नहीं हो पाते हैं। उससे तनाव अनेक बार व्यक्ति की सहन क्षमता को लांघ जाता है। बार बार एवं निरन्तर रहने लगता है तब वह घातक बन जाता है। इससे शरीर में होने वाले असामान्य परिवर्तन पुनः सामान्य अवस्था में नहीं आ पाते, कालान्तर में वे बीमारी का रूप भी ले लेते हैं।

शरीरगत असामान्य परिस्थितियों को सामान्य बनाने का कार्य परानुकम्पी नाड़ी तंत्र का होता है। अनुकम्पी नाड़ी तंत्र सक्रियता और ऊर्जा उत्पादन को तीव्र कर देता है, तो दूसरी तरफ दबावजनक परिस्थितियों के हट जाने पर शरीर को पुनः विश्राम व शक्ति को सुरक्षित रखने का कार्य परानुकम्पी नाड़ीतंत्र करता है। इन दोनों तंत्रों का संतुलन स्वस्थ, शान्त एवं प्रसन्न जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

दबावपूर्ण परिस्थितियां जब हावी होती हैं तो परानुकम्पी नाड़ीतंत्र को कार्य करने का अवसर ही नहीं मिल पाता। परिणामतः निरन्तर तनाव बना रहता है। इससे अनेक मनोकायिक बीमारियां पैदा हो जाती हैं। यदि वर्तमान जीवनशैली, शहरी आपाधापी एवं अपने चारों ओर की परिस्थितियों को नहीं बदल सकते हैं, जो मुख्य रूप से तनाव पैदा कर रही हैं, तो इस परिस्थिति में परानुकम्पी नाड़ीतंत्र को कैसे सक्रिय किया जा सकता है ? किस प्रकार तनाव और उसके दुष्परिणामों से बचा जा सकता है ?

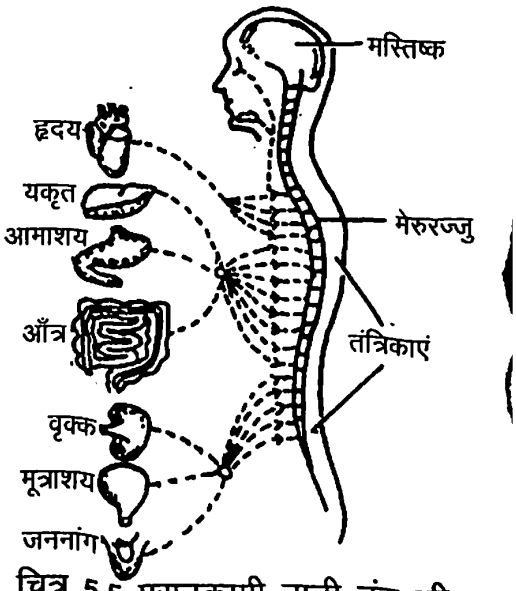

चित्र 5.5 परानुकम्पी नाड़ी तंत्र की सक्रियता से संतुलन

5.0 तनाव का उपचार : कायोत्सर्ग

हमारे भीतर ऐसी शक्ति है जिसे परानुकम्पी नाड़ीतंत्र को सक्रिय कर अनुकम्पी नाड़ी तंत्र की अति–सक्रियता को संतुलित किया जा सकता है। वैज्ञानिक इसे (Relaxation Response) कहते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अध्यात्म की भाषा में इसे कायोत्सर्ग कहा जाता है। कायोत्सर्ग में स्वतः सुझाव द्वारा मांसपेशीय अतिविद्युत के अपव्यय को रोककर एवं

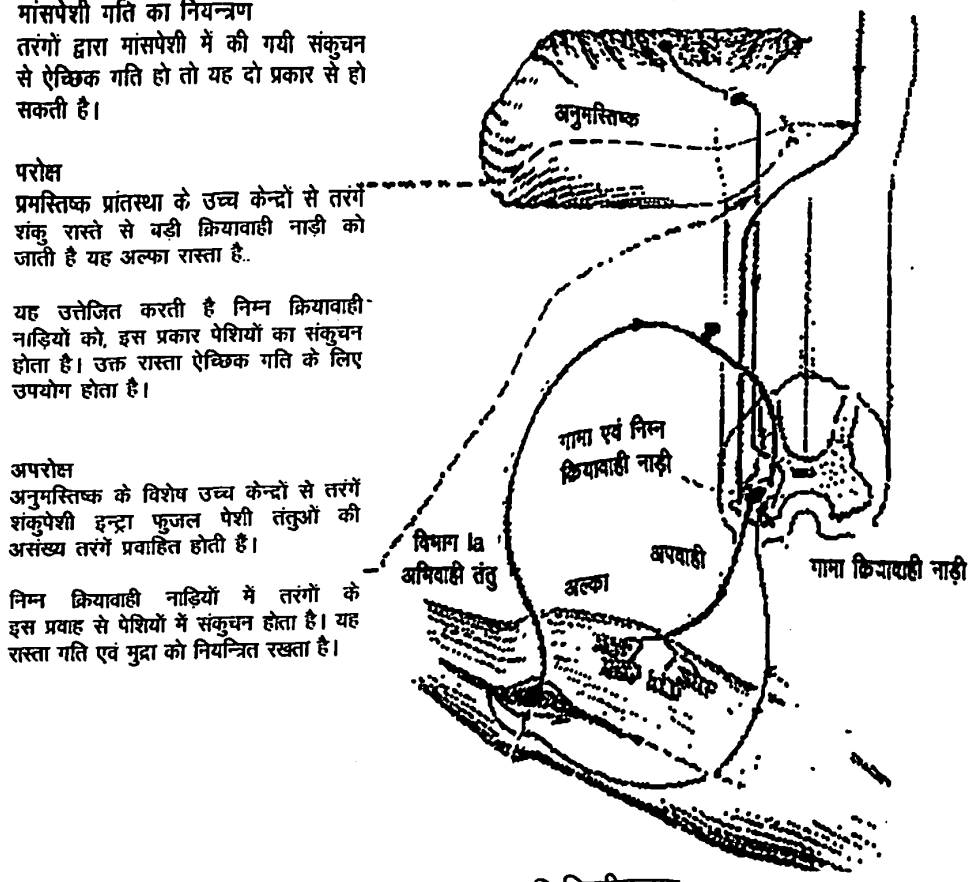

चित्र 5.6 स्वतः सुझाव और शिथिलीकरण

शिथिलता को प्राप्त कर परानुकम्पी नाड़ी तंत्र को सक्रिय कर लिया जाता है इससे तनाव के दुष्परिणामों से बच जाते हैं। प्रतिदिन 20 मिनट का कायोत्सर्ग का अभ्यास न केवल तनाव को दूर करता है बल्कि साथ–साथ बुद्धि की जड़ता को भी दूर करता है। एकाग्रता में वृद्धि करता है, कार्यक्षमता को बढ़ाता है। अन्तर्दृष्टि एवं प्रज्ञा को जागृत करता है। कालान्तर में अनेक मनोकायिक बीमारियों से मुक्त करता है।

5.1 कायोत्सर्ग का पुनः पुनः अभ्यास

दसवैकालिक सूत्र में मुनि के लिए भगवान् महावीर ने एक विशेषण का प्रयोग किया है– अभिक्खणं काउसग्गकारी, बार बार कायोत्सर्ग करने वाला मुनि। भगवान महावीर ने मुनि के लिए निर्देश भी किया है – असइं वोसट्ठचत्तदेहे। अर्थात् मुनि बार बार कायोत्सर्ग करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रत्येक कार्य के अन्त में कायोत्सर्ग करें। प्रारम्भ में भी कायोत्सर्ग करें। इस निर्देश की महत्ता आज के सन्दर्भ में खेल–विज्ञान को देखें तो सहज ही उभर कर सामने आ जाती है। बार बार कायोत्सर्ग करने से मांसपेशियों व तंत्रिकाओं को गहन विश्राम मिलता है एवं अगले कार्य को श्रेष्ठ ढंग से करने में मन व शरीर तैयार हो जाता है।

प्रत्येक खिलाड़ी अपने आप से श्रेष्ठ खेल की अपेक्षा रखता है। यह बिना प्रशिक्षण एवं अभ्यास के संभव नहीं है। खेल मनोविज्ञान के अनुसार खेल में श्रेष्ठ कार्यक्षमता की अभिव्यक्ति के लिए चार चरण उभर कर आते हैं –

1. खेल के पूर्व अपने आपको, अपनी मानसिकता को एवं अपनी मांसपेशियों को तैयार करना।
2. श्रेष्ठ खेल का प्रदर्शन करना।
3. खेल के बाद मांसपेशियों को सामान्य करना।
4. इसके बाद मन एवं शरीर को गहन विश्राम देना।

समर्पित एवं अच्छे खिलाड़ी खेल के पहले पूर्वाभ्यास करते हैं। फिर अपना खेल खेलते हैं। खेल के बाद वे अपने आपको एवं मांसपेशियों को सामान्य अवस्था में लाते हैं। इन तीन अवस्थाओं से गुजरने के बाद वे पूर्ण विश्राम करते हैं या अपनी रूचि के कार्य में लग जाते हैं।

इससे एक बात स्पष्ट होती है कि श्रेष्ठ कार्यक्षमता के विकास के लिए शरीर एवं मन को गहन विश्राम देना आवश्यक है जिससे वह अगली बार श्रेष्ठ कार्यक्षमता को अभिव्यक्त कर सके। जो व्यक्ति अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित हैं उन्हें इस क्रिया को बार बार दोहराना आवश्यक है।

जीवन एक खेल है, हम सब खिलाड़ी हैं। यदि अपने आपमें श्रेष्ठ कार्यक्षमता का विकास करना चाहते हैं तो हमें भी इसी क्रम व चक्र से गुजरना होगा। हममें से कितने लोग पूर्व तैयारी करते हैं, कितने लोग एक कार्य समाप्त कर दूसरा कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व स्वयं को सामान्य करते हैं, या बिना विश्राम या सामान्य हुए ही दूसरे कार्य में लग जाते हैं ? सामान्य हुए बिना ही किस प्रकार हम अपने जीवन में श्रेष्ठ कार्यक्षमता को अभिव्यक्त कर पायेंगे। महत्त्वपूर्ण बात है–गहन विश्राम या श्रेष्ठ कार्यक्षमता के विकास हेतु समय निकालना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दबाव व तनाव से निपटना अत्यन्त आवश्यक है। कार्य करना जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही श्रेष्ठ कार्यक्षमता हेतु गहन विश्राम। दैनिक जीवन के क्रियाकलापों को करते हुए होने वाले तनावों से कैसे निपटें ? इसका उत्तर हमारे भीतर है। हमारे दृष्टिकोण व विचारों में है। अपनी इच्छाशक्ति में है।

5.2 मांसपेशीय स्वास्थ्य

मांसपेशीय स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है मांसपेशी से जुड़ी तंत्रिका की विद्युत ऊर्जा का अपव्यय न हो और वहां एकत्रित लेक्टिक एसिड (दुग्धाम्ल) का विसर्जन होता रहे। यह तभी संभव है जब मांसपेशीय सक्रियता के बाद उन्हें शिथिल होने का अवसर मिले। यदि हम प्रत्येक क्रिया के बाद विश्राम या सलक्ष्य कायोत्सर्ग की आदत डालें तो मांसपेशियां स्वतः शान्त व शिथिल हो जायेगी। मांसपेशियों में एकत्रित दुग्धाम्ल विसर्जित हो जायेगा एवं पेशियों की अनावश्यक उत्तेजना स्तर में कमी आयेगी। उनकी स्वस्थता बढ़ेंगी। अतः आवश्यक है कि हम प्रत्येक कार्य के पहले व बाद में कुछ क्षण या मिनटों के कायोत्सर्ग की आदत बनाएं। इससे हम शान्ति, तनावमुक्ति, प्रसन्नता एवं स्वास्थ्य एवं श्रेष्ठ कार्यक्षमता को भी प्राप्त कर सकेंगे।

6.0 तनाव प्रबंधन – प्रयोग

शारीरिक एवं मानसिक लाभ के लिए कायोत्सर्ग का 5 सैकण्ड से 20 मिनट तक का अभ्यास करें। 5 सैकण्ड, 1 मिनट और 5 मिनट का कायोत्सर्ग दिन में अनेक बार करें। कार्य के प्रारम्भ में एक मिनट का कायोत्सर्ग करें। बीच–बीच में 5 सैकण्ड का कायोत्सर्ग करें। सांयकाल सम्पूर्ण कार्य निवृत्ति के पश्चात् 20 मिनट का कायोत्सर्ग करें। भावनात्मक विकास व लाभ के लिए 45 मिनट का कायोत्सर्ग प्रतिदिन 3 महीने तक निरन्तर करें। आध्यात्मिक विकास व लाभ के लिए 60 मिनट का कायोत्सर्ग प्रतिदिन 2 से 3 बार तक 6 महीने तक करें तथा निरन्तर जारी रखें।[1]

---

1. देखें – प्रेक्षाध्यान : प्रयोग पद्धति – आचार्य महाप्रज्ञ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6.1 प्रयोग–प्रविधि

1. पांच सैकण्ड के लिए पूरे शरीर पर चित्त को फैला कर एक बार स्वयं सुझाव दें "शिथिल" और उसका अनुभव करें।
2. एक मिनट के लिए पूरे शरीर पर चित्त को फैला कर एक बार स्वयं सुझाव दें – शिथिल हो जाए 3 बार, शिथिल हो रहा है 3 बार, अनुभव करें – शिथिल हो गया है।
3. 5 मिनट के लिए – पहले एक मिनट के लिए उपरोक्त विधि से सभी सुझाव दें। फिर शेष चार मिनट में पूरे शरीर को तीन भागों में बांट कर उपरोक्त विधि से सुझाव दें। अन्त में फिर पूरे शरीर को एक मिनट की तरह सुझाव दें।
4. 20 मिनट के लिए – पहले एक मिनट वाली प्रक्रिया दोहराएं। अन्त में भी। मध्य में पूरे शरीर को अठारह भागों में बांटकर उसी प्रकार सुझाव दें।
5. दायां पैर– टखने तक, घुटने तक, नितम्ब तक,
6. बायां पैर– टखने तक, घुटने तक, नितम्ब तक,
7. धड़ का भाग– पेट का भाग, छाती का भाग, पीठ का भाग,
8. दायां हाथ– अंगूठे से कलाई तक, कलाई से कोहनी तक, कोहनी से कंधे तक।
9. बायां हाथ– अंगूठे से कलाई तक, कलाई से कोहनी तक, कोहनी से कंधे तक।
10. सिर का भाग– ठुड्डी, होंठ, मुंह के भीतर का भाग, दायां कपोल, बायां कपोल, दायां कान, बायां कान।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. उच्च मानसिक शक्तियों का विकास

रूपरेखा

1.0 शक्ति का स्वरूप

1.1 शक्ति : आध्यात्मिक दृष्टिकोण

1.2 शक्ति : वैज्ञानिक दृष्टिकोण

2.0 उच्च मानसिक शक्तियां

2.1 तर्क शक्ति

2.2 अन्तर्दृष्टि

2.3 उच्च गणनाएं

3.0 उच्च मानसिक शक्ति का आधार

3.1 शक्ति का भण्डार

3.2 शक्ति का उपयोग

4.0 शक्ति का ऊर्ध्वारोहण

4.1 शक्ति का ऊर्ध्वारोहण और अन्तर्यात्रा

4.2 प्रयोग प्रविधि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

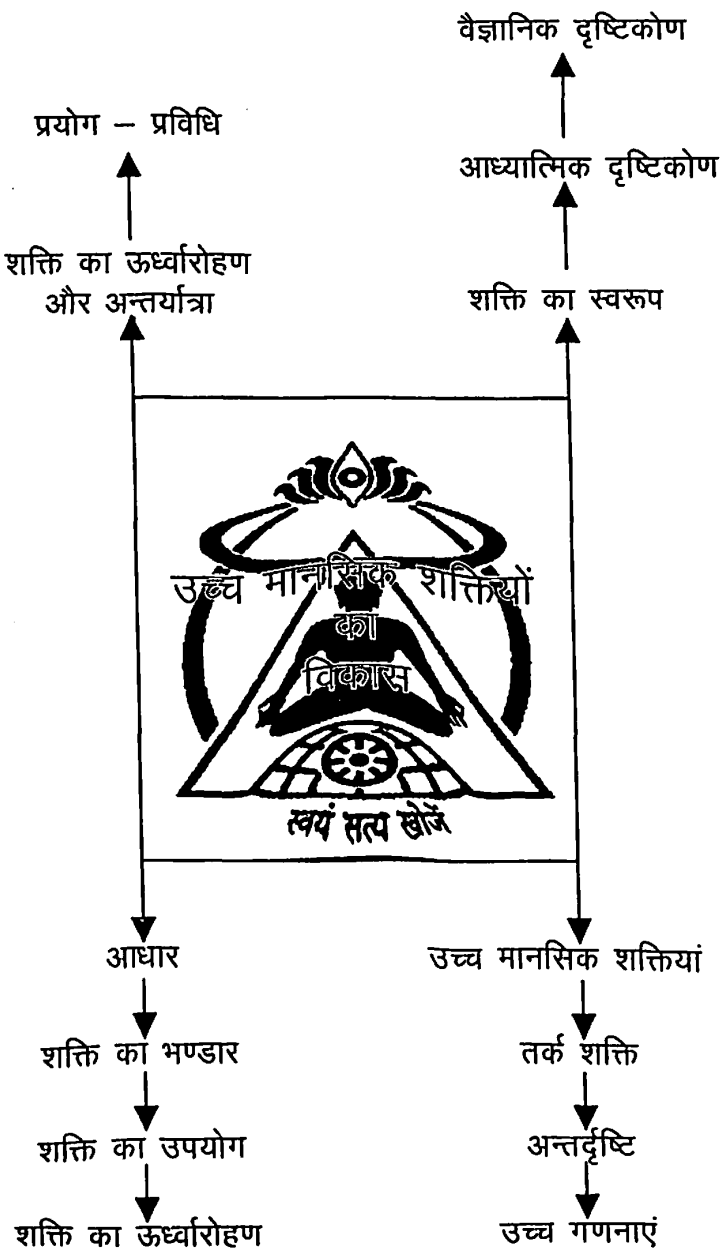

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. उच्च मानसिक शक्तियों का विकास

1.0 शक्ति का स्वरूप

व्यक्ति के पास यदि सब कुछ है लेकिन शक्ति नहीं है तो क्या होगा ? गाड़ी बहुत अच्छी है लेकिन पेट्रोल नहीं है तो क्या होगा ? रॉकेट बहुत बढ़िया है लेकिन ईंधन नहीं है तो क्या होगा ? आदमी बहुत सुन्दर है और भीतर में प्राण नहीं है तो क्या होगा? लोक कहेंगे ले जाओ इसकी अन्तिम क्रिया करवाओ। शक्ति विकास भी एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। व्यक्तित्व विकास का आधारभूत विषय है। अगर किसी को विकसित होना है तो शक्ति चाहिए। शक्ति के बिना विकास नहीं हो सकता।

जो लोग उपवास करते हैं। लम्बी तपस्या करते हैं। चार–पांच दिनों के बाद उनका शरीर एक बार तो एकदम सुस्त हो जाता है। फिर प्राण शरीर सक्रिय होता है तो फिर से उन्हें शक्ति का अनुभव होने लगता है। अथवा तपस्या के बाद जब भोजन करते हैं तो फिर शारीरिक शक्ति आ जाती है। यदि शक्ति है तो व्यक्ति कार्य कर सकता है, दौड़ सकता है, सोच सकता है, उत्साह व उमंग से जी सकता है। अगर शक्ति नहीं है तो व्यक्ति कुछ भी नहीं कर सकता।

हर व्यक्ति के अन्दर (भीतर) शक्ति का अनन्त सागर लहरा रहा है। प्रश्न यह है कि इन शक्तियों का हम विकास कैसे करें? उपयोग कैसे करें? जीवन में नई दिशाओं की खोज कैसे करें? जब तक जानकारी नहीं होगी उनका उपयोग नहीं किया जा सकता। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने भीतर के शक्तिस्रोतों को जानें और उनका उपयोग कैसे किया जाए? उनको जागृत कैसे किया जाए ? इसको हम जानें, समझें।

1.1 शक्ति : आध्यात्मिक दृष्टिकोण

योगशास्त्र के अनुसार हमारे शरीर में शक्ति प्राण के रूप में रहती है। आधुनिक युग में जो महत्त्व विद्युत ऊर्जा का है, वही महत्त्व अध्यात्म योग में प्राण ऊर्जा का है। प्राण के दो रूप सामने आते हैं–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

एक वह प्राण है जो अविभक्त रूप से सम्पूर्ण आकाश मण्डल में व्याप्त है। योगियों के अनुसार सम्पूर्ण आकाश मण्डल प्राण से परिपूर्ण है। दूसरा वह प्राण है जो ऊर्जा के सभी संभावित रूपों में अभिव्यक्त हुआ है। योगशास्त्र के अनुसार हमारे भीतर और बाहर जितने भी शक्ति के रूप हैं वे सभी प्राण की ही अभिव्यक्तियां हैं। जीवन के सन्दर्भ में देखा जाए तो आचार्यश्री तुलसी के अनुसार प्राण जीवनी शक्ति है। यह सम्पूर्ण जीवन को चलाने वाली ऊर्जा है। इसके संयोग से जीव जीवन अवस्था को प्राप्त होता है एवं वियोग से मरण अवस्था को। प्राण जीव का बाहरी लक्षण है। यह जीव जी रहा है, ऐसी प्रतीति प्राण से ही होती है।

इस प्रकार स्थूल शरीर में जो चैतन्य की अभिव्यक्ति है, वह प्राण द्वारा ही होती है। आकाश मण्डल में व्याप्त प्राण का आकर्षण एवं ग्रहण इस स्थूल शरीर के विभिन्न संस्थानों से होता है (चित्र 6.1)। वह अधिक मात्रा में होता है तो प्राण पुष्ट होता है। वह स्थूल शरीर से जुड़कर अनेक प्रकार के कार्यों में योगभूत बनता है एवं पुनः आकाश मण्डल में विसर्जित हो जाता है। प्राण का ग्रहण, परिणमन व विसर्जन का क्रम अनवरत रूप से चलता रहता है।

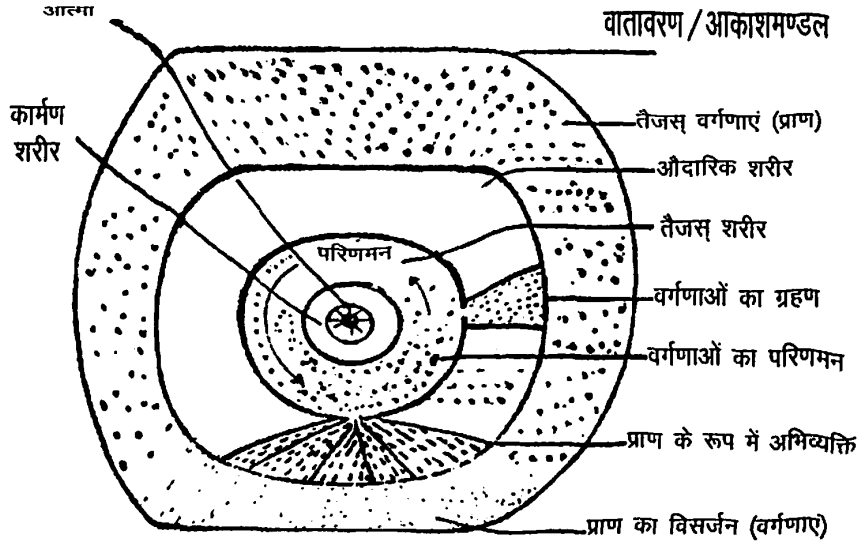

चित्र 6.1 प्राण का ग्रहण, परिणमन और उत्सर्जन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1.2 शक्ति : वैज्ञानिक दृष्टिकोण

विज्ञान की भाषा में शारीरिक ऊर्जा का उत्पादन कोशिका में होता है। कोशिका में ऊर्जा उत्पति के लिए मुख्यतः दो बाह्य घटक तत्वों की आवश्यकता होती है – शर्करा (ग्लुकोज) और ऑक्सीजन। शर्करा (ग्लुकोज) हमें भोजन से प्राप्त होती है एवं ऑक्सीजन बाहरी वायुमण्डल से। भोजन के पाचन में पाचन तंत्र का योगदान होता है एवं ऑक्सीजन को ग्रहण करने में श्वसन तंत्र का। शर्करा (ग्लुकोज) और ऑक्सीजन रक्त परिसंचरण द्वारा प्रत्येक कोशिका तक पहुंचाई जाती है। इससे प्रत्येक कोशिका के केन्द्र में अवस्थित माइटोकोण्ड्रिया द्वारा ऊर्जा का निर्माण होता है। विज्ञान की दृष्टि में यही हमारी शक्ति का मूल स्वरूप है।

मूल शक्ति एक है। वह कोशिका में ऊर्जा के रूप में उत्पन्न होती है। इसे प्राण भी कहा जा सकता है। यह प्राण ऊर्जा हमारे स्थूल

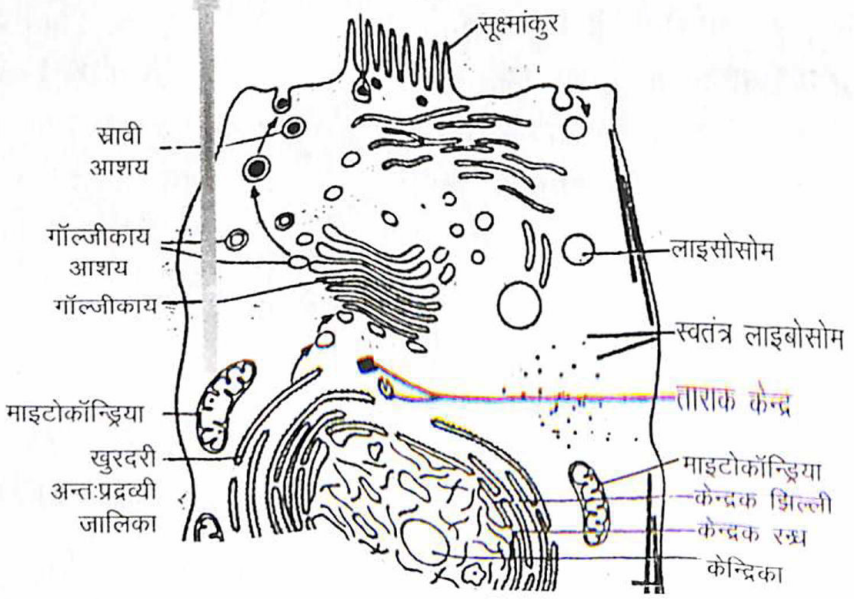

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जीवन में तीन प्रकार की शक्तियों के रूप में अभिव्यक्त होती है – शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति एवं भावनात्मक शक्ति। शारीरिक शक्ति से हम शारीरिक कार्य करते हैं। चलते हैं, दौड़ते हैं, खाते हैं, पीते हैं, वजन उठाते हैं इत्यादि। इन कार्यों में मुख्यतः मांसपेशीय कोशिका में निर्मित ऊर्जा की खपत सबसे अधिक होती है। मानसिक शक्ति से हम सोचते हैं, स्मरण करते हैं, कल्पना करते हैं, निर्णय करते हैं, इत्यादि। इन कार्यों में मुख्यतः नाड़ी तंत्र की कोशिका में निर्मित ऊर्जा की खपत सबसे अधिक होती है।

भावनात्मक शक्ति से हम प्रसन्नता, खेद, आक्रोश आदि सकारात्मक एवं नकारात्मक भावों को प्रकट करते हैं। इसमें ग्रन्थि तंत्र की कोशिकाओं में निर्मित ऊर्जा सबसे अधिक खर्च होती है। एक व्यक्ति मोटा–ताजा धीरे–धीरे आराम से चल रहा था, चलने में भी उसको दिक्कत आ रही थी, लेकिन उसके पीछे अगर कोई कुत्ता लग जाये या पीछे से सांप आ जाए तो वह क्या करेगा ? वह भय से भागेगा। जो चल भी नहीं पा रहा था, वह भागेगा। तो यह शक्ति कहां से आ गई ? यह अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की भावात्मक शक्ति है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की विशेषता यह है कि जिसका स्राव (हार्मोन) सीधा रक्त में मिल जाता है। ये अन्तःस्रावी ग्रन्थियां हमारे शरीर में मुख्यतः आठ हैं। हमारे मस्तिष्क में दो हैं – 1. पीनियल, 2. पिच्युटरी ग्रन्थि। गले में 3. थाइराइड ग्रन्थि, 4 पैराथाइराइड ग्रन्थि। एक हृदय के पास, 5. थाइमस ग्रन्थि। एक हमारी नाभी के पास 6. एड्रीनल ग्रन्थि और एक पेडू में गोनाड्स ग्रन्थि। इन ग्रन्थियों के विविध स्राव व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और भावात्मक तीनों स्तरों को जितना प्रभावित करते हैं उतना कोई अन्य रसायन नहीं करते हैं। आप लोगों ने देखा होगा कि 12–15 साल तक जो शरीर में परिवर्तन होता है, लम्बाई बढ़ती है, वजन बढ़ता है, पेन्ट टाइट हो जाती है और शर्ट छोटे पड़ जाते हैं उसका कारण हैं विशेष स्राव। इन रासायनिक स्रावों से शरीर में तेजी से परिवर्तन आ जाते हैं। यह हमारे भीतर ऊर्जा की सबसे सशक्त अभिव्यक्ति है।

2.0 उच्च मानसिक शक्तियाँ

हमारे भीतर दो प्रकार की मानसिक शक्तियां हैं – 1. उच्च मानसिक शक्तियां, 2. निम्न मानसिक शक्तियां। उच्च मानसिक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शक्तियों के अन्तर्गत मुख्य रूप से तर्क शक्ति, अन्तर्दृष्टि आदि का समावेश किया जाता है। निम्न मानसिक शक्तियों के अन्तर्गत साधारण स्मृति, समझ–पहचान, चिन्तन–कल्पना, आदि क्षमताओं को ग्रहण किया जाता है।

2.1 तर्क शक्ति

स्मृति सामान्य रूप से बच्चों में भी पाई जाती है। बच्चों में भी देखने की, सुनने की और समझने की शक्ति होती है। सामान्य गुणा–भाग आदि गणित करने की भी क्षमता होती है। उनमें सोचने और कल्पना करने की भी शक्ति होती है। लेकिन तर्क शक्ति उनमें विकसित नहीं होती है। वह विकसित होती है 12 साल के बाद से। 12 साल से 25 साल तक धीरे–धीरे तर्क शक्ति बढ़ती जाती है। बहुत सारी चीजों को देखकर, समझकर कारण और कार्य के आधार पर नियम बना लिये जाते हैं कि यह ऐसा है तो ऐसा ही होगा। लेकिन बच्चे ऐसा नहीं करते। जिज्ञासा करना अलग है और तर्क अलग है। तर्क है नियम बनाना कि ऐसा होने से ऐसा ही होता है। यह शक्ति बच्चों में पूर्ण विकसित नहीं होती है। वह क्या है ये तो पूछ सकते हैं किन्तु ऐसा करने से ऐसा ही होगा, ऐसा नहीं करने से वैसा नहीं होगा। बच्चे इस प्रकार के नियम नहीं बना पाते। यह तर्क शक्ति (रिजनिंग) है। यह उच्च मानसिक अवस्था में संभव होता है।

बड़े–बड़े संस्थानों में जो विशेषज्ञ होते हैं वे तर्क कर सकते हैं, भविष्यवाणी कर सकते हैं कि इतने सारे कारण चल रहे हैं तो निश्चित ही आने वाले समय में ऐसा कार्य होगा। यह जो निष्कर्ष निकालना है वह उच्च मानसिक शक्ति से ही निकलता है। डॉक्टर लक्षणों को देखकर तुरन्त निर्णय पर पहुंच जाता है कि इसको यह रोग है। यह क्या है ? यह भी उच्च मानसिक शक्तियों का विकास है जहां व्यक्ति उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर इस निर्णय पर पहुंच जाए कि ऐसा ही होने वाला है। यह रिजनिंग है।

2.2 अन्तर्दृष्टि

रिजनिंग से भी आगे अन्तर्दृष्टि (इनट्युशन पावर) है। इसमें आदमी अधिक सोचता नहीं है लेकिन उसे समझ में आ जाता है कि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ऐसा ही होगा। समस्या का हल हो जायेगा। अन्तर्दृष्टि से निर्णय (इनट्युशन लर्निंग) और समाधान के बारे में एक उदाहरण मनोविज्ञान की किताब में मिलता है कि एक चिंपाजी बन्दर को कमरे में बन्द कर दिया गया। उस कमरे के बीचों बीच केले लटका दिये। कहा जाता है कि चिम्पाजी बन्दर को केले खाने का बहुत शौक होता है। किन्तु वह केले इतनी उंचाई पर थे कि उसका हाथ नहीं पहुंचता है। अब इधर उधर कमरे में घूमता रहता है कभी ऊपर कूदता है लेकिन वे केले हाथ नहीं आते हैं। वह थोड़ी देर बाद थक कर बैठ जाता है और फिर देखता है कि पास में डण्डा पड़ा हुआ है। वह डण्डा ले लेता है अब डण्डे से उस केले तक पहुंचने का प्रयास करता है। फिर भी डण्डा वहां तक नहीं पहुंचता है। फिर वह थोड़ी देर मेहनत करके बैठ जाता है। फिर वह इधर उधर देखता है। अचानक दिमाग में आता है कि पास में टेबल पड़ी हुई है। वह टेबल को घसीटता हुआ वहां ले आता है। टेबल पर खड़े होकर के केलों तक पहुंच जाता है। इसको कहते हैं अन्तर्दृष्टि (इनट्युशन पावर)। जहां पहले से दिमाग में ऐसा समाधान नहीं होता कि मुझे यह करना है। नई स्थिति है उसमें क्या करना है ? उस समय अन्तर्दृष्टि (इनट्युशन) कार्य करती है। अनेक चीजों को मिला दिया। व्यक्ति की रचनात्मकता और सृजनात्मकता (क्रियेटिविटी) में अन्तर्दृष्टि की भूमिका प्रमुख रूप से होती है। विपरीत परिस्थितियों में अनेक समस्याएं हमारे सामने होती है। जीवन में नई–नई समस्याएं पैदा होती रहती हैं। इन समस्याओं का क्या समाधान निकाला जाना चाहिए ? इसमें अन्तर्दृष्टि का बहुत बड़ा योगदान होता है। "ऐसा करने से ऐसा होगा" यह निर्णय अन्तर्दृष्टि से होता है।

2.3 उच्च गणनाएं

बहुत कठिन बातों को याद रखना भी उच्च मानसिक क्षमता है। सामान्य चीजें तो याद रह सकती है लेकिन बहुत जटिल गणित के सूत्रों को याद रखना सामान्य स्मृति के स्तर पर संभव नहीं होता। इंजीनियरिंग में काल और क्षेत्र के बोध से अनेक जटिल समस्याओं का समाधान किया जाता है। जैसे – यह पता लगाना है कि एक बड़े कमरे में कितनी कुर्सियां आयेगी ? व्यक्ति क्या करेगा ? या तो पहले सब कुर्सियों को जमा दें फिर वह बता सकेगा। किन्तु जो कल्पना कर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सकता है, सोच सकता है। वह अपने दिमाग से गणित लगायेगा कि एक कुर्सी के लिए कितनी जगह लगेगी ? एक कुर्सी से दूसरी कुर्सी के बीच की दूरी कितनी रहनी चाहिए ? इसका हिसाब लगाकर देखेगा कि जगह कितनी है ? और मन ही मन विचार करके बता देगा कि इसमें इतनी कुर्सियां आराम से आ सकती है। यह क्या है ? यह हायर मेन्टल पावर है। यदि उच्च मानसिक शक्तियों का विकास नहीं है तो पहले पचास कुर्सियां लाओ फिर उनको कमरे में जमाओ और देखो कि कितनी कुर्सियां आयेगी। लेकिन अब कुर्सियां लाने की जरूरत ही नहीं है। इसमें अपने आप बता देगा कि कितनी कुर्सियां आयेगी। यह सब उच्च मानसिक शक्तियों से सम्भव है। सामान्य व्यक्ति ऐसा निर्णय नहीं ले सकता।

जीवन में, अपने व्यवसाय मे, अपने कार्यक्षेत्र में, अपने कौशल में सफल होने के लिए अपने भीतर में इन सब शक्तियों को विकसित करना बहुत जरूरी है। क्योंकि हर कार्य क्षेत्र में तुरन्त निर्णय करना पड़ता है। एक दिन की भी देरी होने से बहुत सारा काम पिछड़ जाता है। निर्णय यदि गलत होता है, तो वह हमारे अहित में जाता है। प्रतिकूल परिणाम आते हैं। सही निर्णय सही समय पर तभी संभव है जब व्यक्ति के भीतर दो विशिष्ट क्षमताओं – एक तर्क–शक्ति (रिजनिंग) और दूसरा अन्तर्दृष्टि (इनट्युशन) मजबूत हो। इनकी विद्यमानता में निर्णय सही होते हैं। विभिन्न कार्यों में तर्क शक्ति के द्वारा बलाबल को समझकर सर्वाधिक उपयुक्त निर्णय करना पड़ता है। अन्तर्दृष्टि हमारी ऐसी शक्ति है, जो यह भांप लेती है कि यह ऐसा ही होगा। दोनों शक्तियां आ जानें से व्यक्ति में आत्म विश्वास आ जाता है। मनोबल बढ़ जाता है और वह काम को आसानी से पार लगा देता है। हर व्यक्ति के लिए, चाहे वह विद्यार्थी हो या प्राफेसर या अन्य कोई भी काम करने वाला हो। सबके लिए उच्च मानसिक शक्तियों का विकास बहुत लाभदायक है। अब प्रश्न यह है कि उच्च मानसिक शक्तियां कहां हैं ?

3.0 उच्च मानसिक शक्ति का आधार

जैसा कि हमने पूर्व में पढ़ा कि मानसिक शक्ति का संबंध नाड़ी तंत्र के साथ है। नाड़ी तंत्र के दो भाग हैं– मस्तिष्क और

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सुषुम्ना। उच्च मानसिक शक्तियों के सभी केन्द्र मस्तिष्क में स्थित हैं। हमारी स्मरण शक्ति, चिन्तन शक्ति, तर्क शक्ति,, निर्णय शक्ति, कल्पना शक्ति, समझ शक्ति, अभिव्यक्ति क्षमता, अन्तर्दृष्टि आदि अनेक शक्तियों के केन्द्र मस्तिष्क में हैं। मस्तिष्क का वजन शरीर के अनुपात में दो प्रतिशत हैं पर इसको लगभग 20 प्रतिशत पोषण की जरूरत होती है। इसी प्रकार 17 प्रतिशत शर्करा (ग्लुकोज) की आवश्यकता होती है। सामान्यतया यह ऊर्जा, ईंधन या शक्ति हमें आहार एवं श्वास से मिलती है। ये हमारी सामान्य शक्ति को ही जागृत करती हैं। मस्तिष्क की अतिरिक्त एवं विशिष्ट शक्तियों को जागृत करने के लिए अतिरिक्त शक्ति की आवश्यकता होती है। यह अतिरिक्त शक्ति हमें शक्ति–केन्द्र से मिल सकती है।

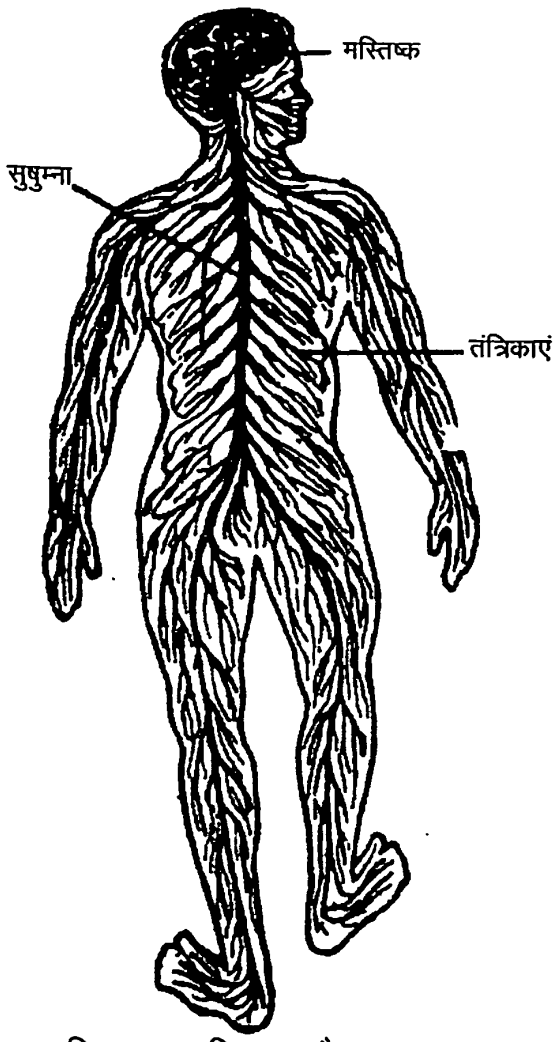

चित्र 6.3 मस्तिष्क और सुषुम्ना

3.1 शक्ति का भण्डार

मानसिक शक्तियों का संबंध हमारे मस्तिष्क से है। वे शक्तियां तब ही विकसित होंगी जब उनको पूरी मात्रा में प्राण ऊर्जा का सिंचन मिलता रहेगा, अन्यथा उनका पूरा विकास नहीं हो पायेगा। उनके पूर्ण विकास के बिना व्यक्ति के लिए योजना बनाना और उसे सही ढंग से

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

क्रियान्वित करना बहुत कठिन हो जाता है। योगशास्त्रों के अनुसार शक्ति का भण्डार रीढ़ की हड्डी के नीचे अवस्थित शक्ति–केन्द्र में है। किन्तु शक्ति–केन्द्र में अवस्थित शक्ति भण्डार का उपयोग दैनिक क्रियाकलापों में नहीं होता है। शक्ति वही काम आती है जो ज्ञान केन्द्र (मस्तिष्क के ऊपरी भाग पर स्थित) के पास उपलब्ध होती है। जैसे कुएं में पानी बहुत है, पर दैनिक जीवन के क्रियाकलापों के लिए बार–बार कुएं पर नहीं जाया जा सकता। पानी वही काम आता है जो कुएं से लाकर घर मे भर दिया जाता है। उसे ही आवश्यकतानुसार थोड़ा–थोड़ा, बार–बार काम में लिया जाता है।

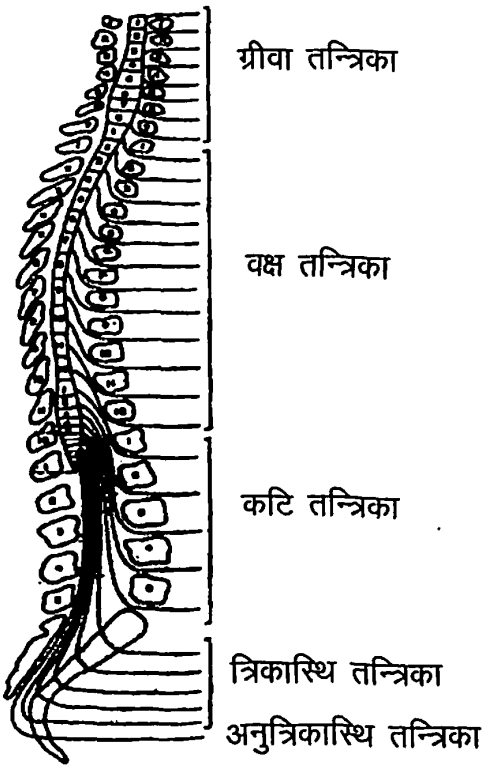

चित्र 6.4 सुषुम्ना

प्राण–शक्ति

सामान्यतया हमारे भीतर शरीर के मुख्य भागों पर अपने ढंग से कार्य करती है। जब तक प्राण–शक्ति की गति पर हमारा नियंत्रण नहीं हो जाता तब तक वह न शुद्ध हो सकती है और न ही स्वेच्छा से संचालित। प्राणशक्ति को शक्तिकेन्द्र से ज्ञान केन्द्र में ले जाना –यही हमारी प्राण–साधना या प्राण–प्रशिक्षण का अर्थ है। यह हमारे व्यक्तित्व में उच्च मानसिक शक्तियों के विकास का प्रबल आधार है। प्राण धारा के दो मार्ग हैं – बाह्य और आन्तरिक। बाह्य मार्ग से जो प्राणशक्ति जाती है वह प्रत्येक कोशिका को सक्रिय बनाती है। (जैसा कि शक्ति के वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत हमने पढ़ा)। उससे सामान्य मानसिक शक्तियां – स्मृति, पहचान, सीखना आदि उत्पन्न होती है। यह जीवन यात्रा को चलाने में सहायक होती हैं। इससे विशिष्टता उत्पन्न नहीं होती। आन्तरिक मार्ग से प्रवाहित होने वाली प्राणशक्ति से विशिष्ट शक्तियां जागृत हो जाती हैं। यह आन्तरिक मार्ग – सुषुम्ना का मार्ग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। जब हम प्राणशक्ति के प्रवाहित होने वाले मार्ग को बदल देते हैं, सुषुम्ना के मार्ग से प्राण शक्ति को ज्ञान केन्द्र में ले जाने का प्रयोग करते हैं तो हमारे व्यक्तित्व में उच्च मानसिक क्षमताओं के विकास की प्रबल संभावनाएं प्रकट होती है।

3.2 शक्ति का उपयोग

उच्च मानसिक शक्तियों का विकास कैसे किया जाए ? एक तरफ उच्च मानसिक शक्तियों का स्थान हमारा मस्तिष्क है और दूसरी ओर शक्ति का भण्डार नीचे शक्ति केन्द्र है। दोनों में लगभग आधा मीटर की दूरी है। दोनों के बीच में बहुत सारे स्टेशन आ जाते हैं। अन्तिम स्टेशन तक माल पहुंच नहीं पाता, उससे पहले ही माल समाप्त हो जाता है। कहते हैं कि सरकार गरीबों के लिए एक रुपया भेजती है लेकिन गरीबों तक पहुंचते–पहुंचते दस पैसा भी नहीं रहता। वह बीच में ही साफ हो जाता है। इस समस्या का समाधान कैसे किया जाए ? जो दरिद्रता है, कमी है। इसका मूल कारण है कि हमारी शक्ति नीचे ही खत्म हो रही है। ऊपर तक तो वह पहुंच ही नहीं पाती है। वहां तक कैसे ले जाया जाए ? कौनसे ऐसे कारण हैं जिससे शक्ति का ह्रास हो रहा है ? इसमें दो प्रमुख कारण हैं। हमारे दो केन्द्र जो नीचे अवस्थित हैं – एक हैं स्वास्थ्य केन्द्र और दूसरा है तैजस् केन्द्र। स्वास्थ्य केन्द्र वासनाओं का केन्द्र है और तैजस् केन्द्र हमारी वृत्तियों का केन्द्र है। वृत्तियां जैसे – क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या आदि। इन नकारात्मक भावों (नेगेटिव इमोशन्स) का मूल स्थान हमारी नाभि है। और वासना का स्थान है नाभि के नीचे स्वास्थ्य केन्द्र का स्थान। हमारी अधिकतम शक्ति ऊपर जाने से पहले वासनाओं और वृत्तियों की पूर्ति में ही समाप्त हो जाती है। ये दोनों केन्द्र शक्ति को अवशोषित कर लेते हैं। आगे जाने ही नहीं देते हैं। इसका परिणाम क्या होता है ? ऊपर की उच्च मानसिक शक्तियां सुप्त रह जाती हैं। जागृत ही नहीं हो पाती हैं। यह बड़ी समस्या है कि शक्ति का केन्द्र नीचे और उच्च मानसिक शक्तियों का केन्द्र ऊपर है। इन दोनों में कैसे तालमेल बैठाया जाए ?

शक्ति केन्द्र से उस शक्ति को ऊपर के केन्द्र तक पहुंचाना होगा। अगर हम ऊपर ज्ञान केन्द्र तक शक्ति को नहीं पहुंचा पाते हैं तो फिर हम उच्च मानसिक शक्तियों का विकास अच्छी तरह से नहीं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कर सकते। जितना सहज रूप से होगा उतना ही हो पायेगा। अपनी अपेक्षा और आवश्यकतानुसार उसका विकास नहीं हो पायेगा। यदि हमारी यह इच्छा है कि हमें उच्च मानसिक शक्तियों का विकास करना है तो रिजनिंग पावर को बढ़ाना है, इनट्युशन पावर को बढ़ाना है और मेमोरी को बढ़ाना है। फिर हमें अपनी शक्ति का ऊर्ध्वारोहण करना होगा। जो हमारी शक्ति नीचे ही समाप्त हो रही है। उस शक्ति को उठाकर ऊपर के केन्द्र तक पहुंचाना होगा। यह कैसे संभव है ? शक्ति कैसे पहुंचेगी ?

4.0 शक्ति का ऊर्ध्वारोहण

शक्ति को ऊपर पहुंचाने के लिए हमें एक नियम को जानना पड़ेगा कि जहां–जहां मन वहां–वहां प्राण। यत्र–यत्र मनस्तत्र तत्र प्राणः। यह नियम है। जहां आपका मन जायेगा, वहां आपका प्राण चला जायेगा। यदि हम मन को या चित्त को नीचे से ऊपर यात्रा करायेंगे तो साथ–साथ प्राण भी नीचे से ऊपर यात्रा करेगा। इसी गति से हम नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे चित्त की यात्रा करेंगे तो साथ–साथ प्राण भी उसी गति से यात्रा करने लगेगा। इसके आने जाने का मार्ग पूर्णतः शुद्ध नहीं है। अवरोध से भरा पड़ा है। चित्त की यात्रा से मार्ग शुद्ध होगा। जैसे मान लो एक नाली बनी हुई है, उसमें कचरा इक्कठा हो गया है, पानी रुक गया है, कोई व्यक्ति उसको खोद कर निकाल सकता है अथवा आगे से पीछे, पीछे से आगे पानी का बहाव तेज हो तो वह एकदम साफ हो जायेगा। ऐसे ही हमारी प्राण की यात्रा से प्राणपथ में आये हुए अवरोधक दूर होने लगेंगे और साथ–साथ प्राण ऊपर की दिशा में गतिशील हो जायेगा।

4.1 अन्तर्यात्रा

प्राणशक्ति को ऊपर की ओर ले जाने का एक सरल उपाय है – अन्तर्यात्रा। हमारी सुषुम्ना रीढ़ की हड्डी के मध्य में है। उस पर ध्यान केन्द्रित करते हुए ऊपर से नीचे की ओर आ जाएं एवं पुनः नीचे से ऊपर की ओर जाएं। इस प्रक्रिया से हम पांच मिनट से दस मिनट तक अभ्यास करें। भावना करें कि मेरी उच्च मानसिक शक्तियां विकसित हो रही हैं। कल्पना शक्ति का विकास हो रहा है। तर्क शक्ति का विकास हो रहा है। अन्तर्दृष्टि का विकास हो रहा है– इन भावनाओं के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

साथ अगर हम अभ्यास करते रहेंगे तो उनसे जुड़े हुए प्रकोष्ठ जागृत हो जायेंगे। इससे बहुत जल्दी परिणाम हमें प्राप्त होंगे। इसमे बहुत अधिक समय नहीं लगेगा। आपको अभ्यास करते ही लगेगा कि आपका मस्तिष्क सक्रिय हो रहा है। उसमें झनझनाहट सी पैदा हो रही है। जैसे विद्युत उपकरण पर हाथ रखने से प्रकम्पन्नों का अनुभव होता है वैसे ही मस्तिष्क में तरंग और प्रकम्पन्न होने लग जायेंगे।

यह एक छोटा सा प्रयोग है किन्तु बहुत शक्तिशाली प्रयोग है। इसे प्रारम्भ में बहुत लम्बे समय तक नहीं करना चाहिए। पांच मिनट से दस मिनट तक, इससे अधिक नहीं करना चाहिए। इससे गर्मी भी बढ़ती है। शरीर में शक्ति उत्पन्न होगी। वह एक दिशा में जायेगी तब गर्मी जैसा लगेगा। मस्तिष्क कभी कभी भारी भी लगने लगेगा। मस्तिष्क के तंतु कमजोर होंगे और शक्ति अधिक जायेगी तो खतरा हो जायेगा। वोल्टेज हाई हो तब फ्यूज उड़ जाता है। ऐसी ही हमारी भी स्थिति है। हमारे भीतर के तंतु मजबूत नहीं है तो फिर हमारे भीतर एक साथ इतनी शक्ति झेलने की क्षमता नहीं होगी। इसलिए रोज थोड़ा अभ्यास करें। पांच मिनट से शुरू करें, फिर दस मिनट से पन्द्रह मिनट और फिर धीरे–धीरे इसको बढ़ाया जाये। धीरे–धीरे हमारे भीतर की सहनशक्ति भी बढ़ जायेगी। एक छोटा सा प्रयोग पांच मिनट के लिए करके देखें।

4.2 प्रयोग प्रविधि

किसी सुविधाजनक आसन में बैठें, आंखें कोमलता से बन्द करें।

1. महाप्राण ध्वनि – तीन बार। पूरा श्वास भरें। श्वास को छोड़ते हुए भंवरे की तरह गुंजन की ध्वनि करें।
2. कायोत्सर्ग की स्थिति – पैर के अंगूठे से लेकर सिर तक पूरे शरीर को ढीला छोड़ दें। शिथिलता का सुझाव दें, शिथिल हो जाएं – तीन बार। अनुभव करें – शिथिल हो रहा है, तीन बार। अनुभव करें पूरा शरीर शिथिल हो गया है, तीन बार।
3. अब चित्त को रीढ़ की हड्डी के अन्तिम छोर पर केन्द्रित करें, वहां से धीरे–धीरे सुषुम्ना मार्ग से चित्त को मस्तिष्क तक ले जाएं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ऐसा अनुभव करें कि पूरा मस्तिष्क शक्ति से भर रहा है। जैसे कुएं का पानी बाल्टी से खींच कर बाहर खाली करते हैं वैसे ही अनुभव करें कि बाल्टी नीचे से ऊपर जा रही है। वापस धीरे–धीरे नीचे आ रही है। ऊपर ले जाते समय मूलबंध का भी प्रयोग करें। नीचे आते समय उसको खोल दें। (मूलबंध – अपने गुदा द्वार को श्वास छोडते हुए ऊपर की ओर खींचे, संकुचित करें फिर धीरे–धीरे मूलबंध खोलें और श्वास भरते हुए नीचे आएं) श्वास को छोड़ते हुए चित्त को सुषुम्ना मार्ग से ही ज्ञान केन्द्र (ऊपर) तक ले जाएं इसी प्रकार चित्त को भी नीचे की ओर लाते समय मूलबंध खोल दें और ऊपर जाते समय मूल बंध लगा लें। नीचे से ऊपर, ऊपर से नीचे सुषुम्ना में चित्त की यात्रा करें। कल्पना करें कि नीचे से शक्ति को ऊपर ले जा रहे हैं और ऊपर जाकर खाली कर रहे हैं। वापस नीचे की तरफ खाली बाल्टी लेकर आ रहे हैं। फिर उसको भरें, ऊपर की ओर उठाएं, मस्तिष्क तक ले जाएं और खाली कर दें। साथ–साथ सुझाव दें, स्मरण शक्ति, तर्क शक्ति, अन्तर्दृष्टि और कल्पना शक्ति का विकास हो रहा है। नौ बार अनुभव करें।

4. अब तीन बार महाप्राण ध्वनि के साथ प्रयोग सम्पन्न करेंगे।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. कार्यक्षमता का विकास

रूपरेखा

1.0 कार्य क्षमता

1.1 दायित्व वृद्धि : क्षमता में कमी

2.0 कार्य क्षमता का आधार

2.1 ज्ञान

2.2 एकाग्रता

3.0 मानसिक प्रशिक्षण

3.1 मानसिक एकाग्रता

3.2 मानसिक एकाग्रता का उपाय : श्वास प्रेक्षा

3.3 श्वास प्रेक्षा एवं श्वसन तंत्र

3.4 वैज्ञानिक दृष्टि से श्वास

4.0 एकाग्रता का अभ्यास

4.1 ज्ञान और अभ्यास

4.2 अभ्यास से असंभव भी संभव

4.3 अभ्यास और निरन्तरता

4.4 अभ्यास और संकल्प

5.0 प्रयोग–प्रविधि

5.1 दीर्घ श्वास प्रेक्षा

5.2 लयबद्ध श्वास प्रेक्षा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

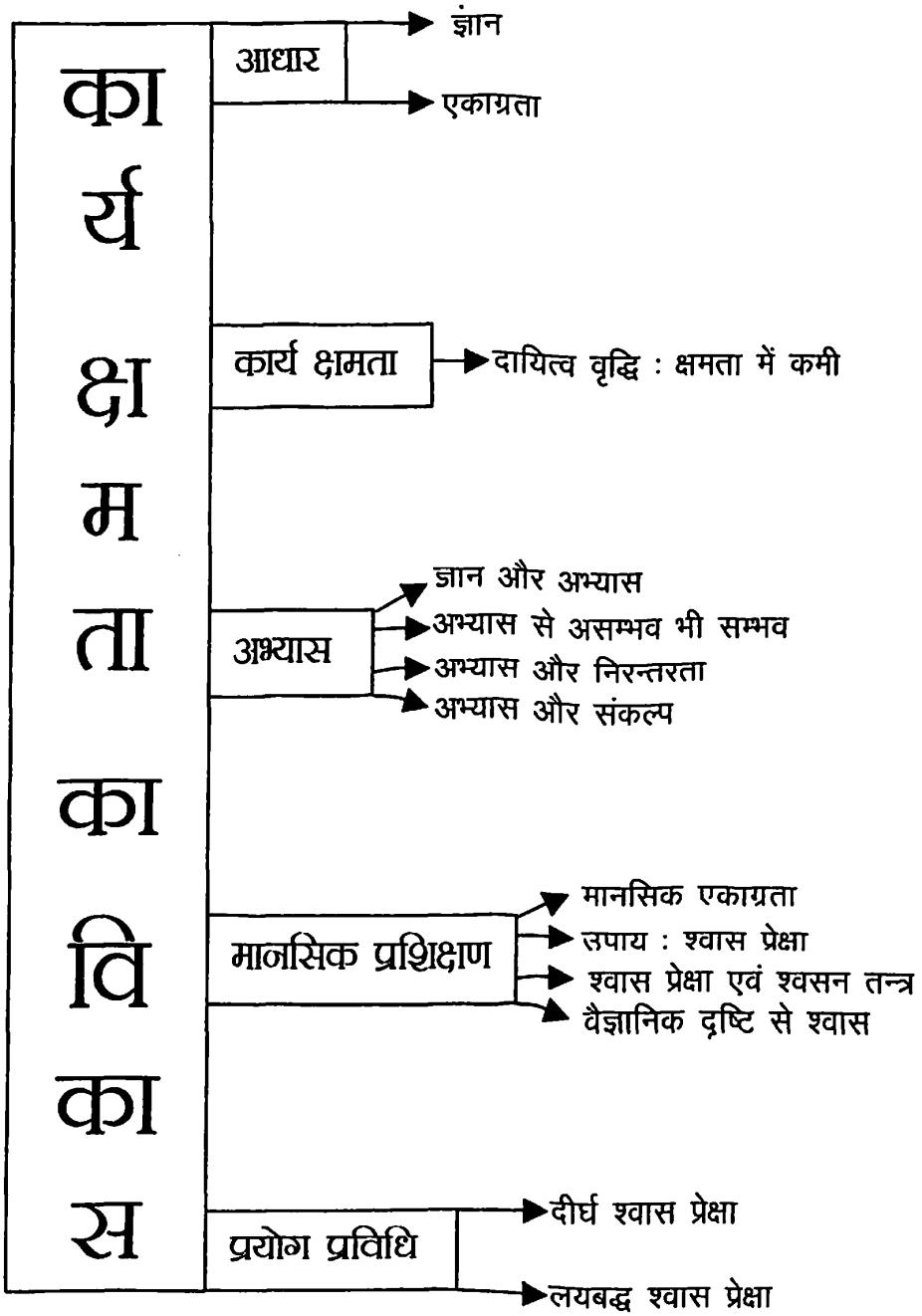

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. कार्यक्षमता का विकास

1.0 कार्य क्षमता

एक उच्च अधिकारी सन्तों के दर्शनार्थ आये। बात–चीत के दौरान उन्होंने कहा कि मुनिश्री ! पहले हम काम को बहुत जल्दी निपटा देते थे। अब स्थिति उल्टी हो रही है। पहले हमारे पास फाइलें कम होती थीं। एकाग्रता अच्छी रहती। हम शीघ्र ही काम निपटा देते थे। अब जितनी फाइलें एक दिन में निपटाते हैं, दूसरे दिन फिर उतनी ही फाइलें नई आ जाती हैं। पदोन्नति के साथ अन्य कार्य और जिम्मेदारियां भी बढ़ रही हैं। ऐसी स्थिति में एकाग्रता और कार्यक्षमता में कमी आ रही है। इसको कैसे रोका जाए ? कार्य क्षमता को किस प्रकार बढ़ाया जाए ? ये प्रश्न सभी प्रकार के व्यक्तियों के सामने उपस्थित होते हैं। कुछ लोग इस कमी को पहचान लेते हैं। रोकने का प्रयत्न करते हैं। कुछ लोग इसको पहचान नहीं पाते हैं। जैसा चल रहा है वैसा चलता रहता है। उनकी बैचेनी और परेशानियां बढ़ती जाती है। प्रश्न है इसको कैसे रोका जाए ?

1.1 दायित्व वृद्धि : क्षमता में कमी

जीवन में सफलता के लिए कार्यक्षमता का विकास अत्यन्त आवश्यक है। इसका कर्मजा शक्ति/कार्यदायित्व/कार्य–कौशल या सतत पुरुषार्थ से बहुत गहरा संबंध है। वर्तमान में बौद्धिक क्षमता पर जितना ध्यान दिया जाता है उसका शतांश भी कार्यक्षमता के विकास पर ध्यान नहीं दिया जाता है। उम्र बढ़ने के साथ युवा अवस्था तक व्यक्ति पर पारिवारिक, सामाजिक, व्यावसायिक दायित्व भी बढ़ते जाते हैं। जिस अनुपात में दायित्व बढ़ते हैं उस अनुपात में कार्यक्षमता नहीं बढ़ती है। यौवन ढलने के साथ शारीरिक, मानसिक शक्तियां भी ढलने लगती है। व्यक्ति जब बच्चा होता है तो उसके पास पढ़ने–लिखने, खाने–पीने, खेलने–कूदने आदि के अलावा और अन्य कोई विशेष जिम्मेदारी नहीं होती है। पढ़ाई पूरी करने के बाद पहला दायित्व होता है स्वावलम्बी बनने का। यदि विवाह हो गया है तो परिवार के पालन–पोषण की जिम्मेदारी भी बढ़ जाती है। जैसे–जैसे आयु बढ़ती है

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नई–नई चुनौतियां और कार्य सामने आने लगते हैं। कार्य क्षमता का पर्याप्त विकास होने पर व्यक्ति को सब कुछ सहज लगता है और वह आसानी से चुनौतियों का सामना करते हुए आगे बढ़ता जाता है। कार्य क्षमता के विकास के अभाव में व्यक्ति तनाव, व्यग्रता, बैचेनी, कुण्ठा या अवसाद जैसी समस्याओं से घिरता चला जाता है फलस्वरूप वह अपने आपको बोझिल अनुभव करता है। इन सब स्थितियों में व्यक्ति की कार्यक्षमता प्रभावित न हो, कार्यक्षमता बढ़ती रहे, क्या यह संभव है ?

2.0 कार्यक्षमता का आधार

कार्य का परिणाम या उत्पादन–क्षमता व्यक्ति की कार्यक्षमता पर निर्भर है। यदि कार्यक्षमता अधिक है तो कम समय में सुन्दर व अधिक काम होगा। उत्पादन क्षमता (Operational Efficiency) अधिक होगी। कार्य क्षमता कम है तो अधिक समय लगाने पर भी काम कम होगा, जो होगा वह भी अच्छा नहीं हो सकेगा। आज के व्यावहारिक जीवन और व्यावसायिक क्षेत्र में सफलता के लिए कार्यक्षमता को अत्यन्त आवश्यक माना गया है।

व्यक्ति की कार्यक्षमता मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर है – (1) संबंधित क्षेत्र का नवीनतम ज्ञान, (2) एकाग्रता।

2.1. ज्ञान

कार्यक्षमता में विकास के लिए जिस क्षेत्र में व्यक्ति काम कर रहा है उस क्षेत्र का उसको नवीनतम (Latest) ज्ञान अपेक्षित होता है। जैसे कोई कम्प्युटर इंजीनियर है तो उसको अपने क्षेत्र की नवीनतम जानकारी की जरूरत होगी। अगर कोई चार्टड एकाउण्टेण्ट है तो उसको अपने क्षेत्र में हो रहे नित्य नवीन नियमों व नीतिगत परिवर्तनों से परिचित रहना होगा। यदि कोई डॉक्टर–सर्जन है तो उसे अपने क्षेत्र की नवीनतम तकनीक व शोधों को जानते रहना होगा। अन्यथा वह पिछड़ जायेगा। उसकी कार्यक्षमता प्रभावित होगी। सही निर्णय में भी कठिनाइयां आयेगी।

2.2. एकाग्रता

किसी भी कार्यक्षमता के विकास का मूलभूत आधार मानसिक एकाग्रता है। इस एकाग्रता के आधार से ही व्यक्ति किसी भी कार्य की

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कार्य–प्रणाली का बोध एवं क्रियान्वयन सुगमता से कर लेता है। डॉक्टर, वकील, प्रोफेसर, कर्मचारी, प्रबन्ध निदेशक या गृहिणी भी क्यों न हो, सबको अपने कार्य को कुशलता से करने के लिए मानसिक एकाग्रता की अत्यन्त आवश्यकता होती है। ज्ञान तो अनेक लोगों को होता है कि क्या करना चाहिए ? वस्तुतः उसको क्रियान्वित करने में अनेक समस्याएं आ जाती हैं। यदि मानसिक एकाग्रता बिल्कुल नहीं है, साथ–साथ बैचेनी है, तनाव है, चिन्ता है, भय है तो काम में भी मन नहीं लगता है। अनेक लोग ऐसे भी होते हैं जो काम करने के लिए जाते जरूर हैं, पर कहते हैं कि काम में मेरा मन नहीं लगता। उनके भीतर मन में जो कुछ हो रहा है वह उसकी सम्पूर्ण कार्यक्षमता को प्रभावित कर देता है। कहावत है "मन के हारे हार है और मन के जीते जीत"। जिसका मन टूट गया, मनोबल गिर गया, मानसिक परेशानियां जिस पर हावी हो गई फिर वह जो भी कार्य प्रारम्भ करेगा, वह या तो सही नहीं होगा या फिर कार्य पूरा ही नहीं करेगा, बीच मे ही छोड़ देगा। वह अन्यान्य कार्यों से भी बचने की कोशिश करेगा।

एक क्रिकेट का खिलाड़ी पूरी एकाग्रता से खेलता है। दूसरे खिलाड़ी की एकाग्रता भंग हो जाती है। दोनों में क्या अन्तर है ? पहला खिलाड़ी लम्बे समय तक सफलता से खेलने में समर्थ हो जाता है जबकि दूसरा एक–दो बॉल में ही पेवेलियन का रास्ता नाप लेता है। जहां एकाग्रता में कमी आती है, वहां पर ज्ञान व क्षमता होने पर भी कार्य कुशलतापूर्वक सम्पन्न नहीं हो पाता है। जो कार्य कर रहे हैं उसमें पूरी मानसिक शक्ति लगे। अतः आवश्यक है कि हम मन को प्रशिक्षित करें।

3.0 मानसिक प्रशिक्षण

मानसिक प्रशिक्षण का अर्थ है कि हम जिस कार्य को कर रहे हैं 'मन' उसी कार्य में लगा रहे, अन्य बातें उस समय दिमाग में नहीं आये, इस हेतु मन को प्रशिक्षित करना। जैसे – खाना खाएं तो मन केवल खाना खाने में रहे, चलें तो मन केवल चलने पर टिका रहे, बोलें तो केवल बोलने पर ध्यान रहे, सुनें तो केवल सुनने पर ही ध्यान जाए। यह मानसिक प्रशिक्षण है। इसे भाव क्रिया भी कहते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो 'हर क्रिया में मन का योग हो, वर्तमान क्षण का बोध रहे, कार्य को जानते हुए करें तथा सतत अप्रमत्त बने रहें। जो क्रिया चल रही है,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हमारा पूरा भाव उसके साथ जुड़ा रहे।' अगर मन और भाव इधर उधर भटक रहें हैं, कार्य हो रहा है और मन कहीं दूसरी ओर है, भावनाएं कहीं ओर हैं तो जो भी कार्य होगा वह अस्त–व्यस्त हो जायेगा। किस प्रकार मन को व्यवस्थित किया जाए ? किस प्रकार मन को संतुलित और एकाग्र किया जाये ? इसका समाधान केवल मानसिक प्रशिक्षण द्वारा ही संभव है। यदि हम इस बात को गौण कर देते हैं, इसको कोई महत्त्व नहीं देते हैं तो इस स्थिति में केवल 20 प्रतिशत मानसिक शक्ति का ही सही उपयोग होगा शेष 80 प्रतिशत मानसिक शक्ति का अपव्यय मानसिक भटकाव में। ऐसी स्थिति में जो कार्य किया जायेगा वह कुशलता से सम्पन्न नहीं हो_पायेगा, आपकी पूर्ण क्षमता उसमें नहीं लगेगी, आपकी कार्यदक्षता भी नहीं बढ़ेगी। यदि हम अस्थिरता, व्यग्रता, चंचलता, अधीरता पर नियंत्रण नहीं कर रहे हैं तो अपनी बहुत बड़ी हानि कर रहे हैं। केवल 20 प्रतिशत शक्ति से काम चला रहे हैं। 80 प्रतिशत शक्ति को अनावश्यक खर्च कर रहे हैं। इस स्थिति को बदलना है। 80 प्रतिशत शक्ति का भी सही उपयोग करना है। मन को यदि प्रशिक्षित कर लें तो यह भी संभव है। मानसिक प्रशिक्षण दो बातों पर निर्भर करता है (1) मानसिक एकाग्रता के उपाय का ज्ञान और (2) उसका निरन्तर अभ्यास।

3.1 मानसिक एकाग्रता

प्रश्न है मन को एकाग्र कैसे किया जाये ? मन दिखाई नहीं देता है। मन एक बेलगाम घोड़े की तरह भागता रहता है। मन की लगाम कहां है ? मन रूपी घोड़े की पूंछ पकड़ने से तो वह लात ही मारेगा। मन को बलात्/हठात् पकड़ने की कोशिश करेंगे तो वह और अधिक उग्र हो जायेगा। अतः मन को कैसे पकड़ें ? कैसे नियंत्रित करें?

अध्यात्म शास्त्र का सिद्धान्त है कि मन का श्वास के साथ सीधा संबंध है। "मन चंचल है तो श्वास भी चंचल होगा"। इस सिद्धान्त के अनुसार यदि हम श्वास की चंचलता को कम कर लें तो मन की चंचलता कम हो जायेगी। तात्पर्य यह है कि श्वास की गति को कम करना सीख लें तो मन की चंचलता नियन्त्रित हो जायेगी। श्वास की गति को कम कैसे करें ? श्वास की गति का अर्थ है एक मिनट में आने वाले श्वास की संख्या। यह संख्या प्रायः एक मिनट में 15 से 20 श्वास तक होती है। एक मिनट में श्वास की संख्या जो 18 है, उसको 6 पर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

लेकर आना है। तिगुना कम कर दें। इस संख्या को कम करने से श्वास की गति कम, चंचलता कम होगी। मन की चंचलता भी कम होगी। स्थिरता व एकाग्रता का विकास होगा।

3.2 मानसिक एकाग्रता का उपाय : श्वास प्रेक्षा

इसका उपाय है – वैज्ञानिक ढंग से श्वास लेना, पूरा श्वास लेना। श्वास का अनुभव करने से, देखने से श्वास की गति कम होती है। संख्या कम होती है। श्वास प्रेक्षा का प्रयोग वैज्ञानिक ढंग से श्वास लेने का प्रयोग है। यह मन की एकाग्रता को बढ़ाने का सरल एवं सक्षम प्रयोग है। इस प्रयोग में साधक अपने चित्त को, जो क्रिया वर्तमान में चल रही है, उसी के ऊपर एकाग्र (Concentrate) होने का प्रशिक्षण प्रदान करता है। मानसिक एकाग्रता का तात्पर्य है वर्तमान में चलने वाली क्रिया पर ध्यान केन्द्रित करना। न अतीत की स्मृति, न भविष्य की कल्पना। जैसे प्रत्येक श्वास केवल वर्तमान की क्रिया है – न अतीत की स्मृति , न भविष्य की कल्पना है। साधक उसी को देखने में तन्मय हो जाता है, वैसे ही व्यावसायिक क्षेत्र में भी दूसरे अनेक कार्य को छोड़कर केवल वर्तमान के काम पर पूरा ध्यान देना और वैसा करने की आदत डालना यह मानसिक एकाग्रता का प्रशिक्षण है।

3.3 श्वास प्रेक्षा एवं श्वसन तन्त्र

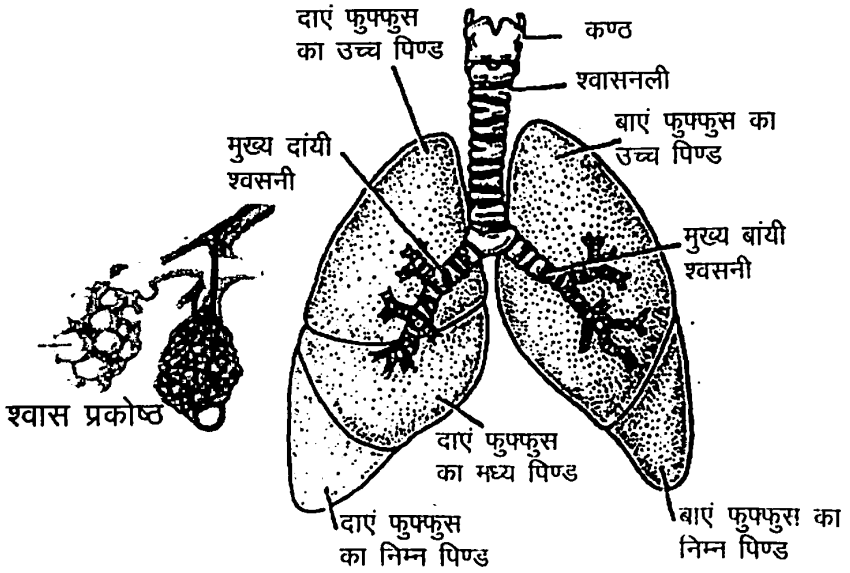

चित्र 7.1 श्वसन तन्त्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

श्वास प्रेक्षा को समझने के लिए श्वसन तन्त्र एवं उसकी कार्य–प्रणाली को समझना उपयोगी होगा। (देखें चित्र सं. 7.1) हम श्वास लेते हैं, वह श्वास नाक से छनकर फेफड़ों में पहुंचता है। फेफड़ों में छोटे–छोटे श्वास प्रकोष्ठ (Alveoli) होते हैं। उनकी संख्या 30 करोड़ से 65 करोड़ तक होती है। प्रत्येक श्वास प्रकोष्ठ के चारों ओर रक्त नलिकाओं (केशिकाओं) का जाल होता है। इन केशिकाओं से कार्बन–डाई–ऑक्साइड नाक के माध्यम से शरीर के बाहर निकाल दी जाती है और ऑक्सीजन पूरे शरीर की ऊत्तक व कोशिकाओं (देखें चित्र संख्या 7.2) तक पहुंचाया जाता है, उससे शारीरिक ऊर्जा बनती है। हमारी शारीरिक ऊर्जा का एक आधार ऑक्सीजन है। इसका शरीर में अधिकतम उपयोग हमारे स्वास्थ्य की कुंजी है। हमारे फेफड़ों की फुफ्फुसीय प्राण क्षमता (Lung Vital Capacity) औसतन रूप में लगभग 6 लीटर जितनी है। किन्तु आम तौर पर इस क्षमता का पूरा उपयोग नहीं किया जाता। अधिकांश लोग केवल आधा से एक लीटर वायु का आदान–प्रदान कर पाते हैं। इससे हमारा श्वास छोटा, गति तेज एवं संख्या अधिक होती है। अधिकांश व्यक्ति छोटे–छोटे टुकड़ों में छिछला श्वास लेते हैं। आवेग की स्थिति में यह संख्या और अधिक बढ़ जाती है। उनकी श्वास संख्या लगभग 20, 25, 30, 35 एवं 40 प्रति मिनट हो जाती है। इससे श्वास प्रकोष्ठ में हवा मात्र 1 से 3 सेकेण्ड तक रह पाती है।

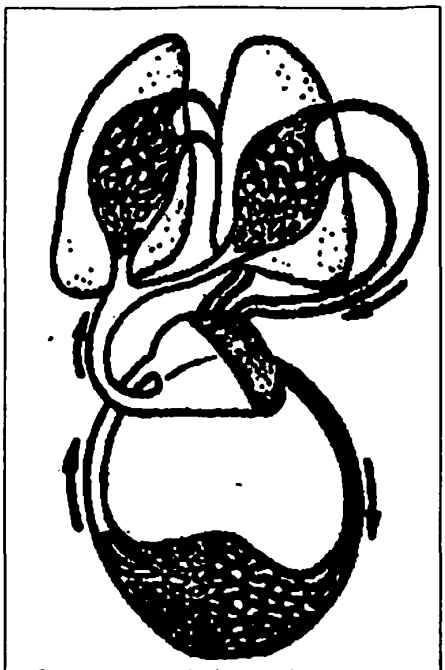

चित्र 7.2 उत्तकों में वायुओं का विनिमय

3.4 वैज्ञानिक दृष्टि से श्वास

वैज्ञानिक दृष्टि से सम्यक् श्वास वह है जिसमें –

(1) फेफड़ों की क्षमता का अधिकतम उपयोग हो।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(2) श्वास प्रकोष्ठ में हवा अधिकतम समय (10 से 12 सेकण्ड) तक रहे।

कोशिका के सुचारू रूप से संचालन तथा क्षमता वृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन मिले। वैज्ञानिकों के अनुसार फेफड़ों में वायु का आदान–प्रदान भली भांति तभी हो सकता है जब हवा श्वास प्रकोष्ठ में 10 से 12 सेकण्ड तक रहे। इससे ऑक्सीजन और कार्बन–डाइ–ऑक्साइड का अधिकतम विनिमय होता है। अतः पूर्ण श्वास लेना बहुत जरूरी और महत्त्वपूर्ण है। फेफड़ों की क्षमता के अधिकमतम उपयोग के लिए उसे फैलने का पूरा अवकाश मिलना चाहिए। फेफड़े अपने आप में मांसपेशी रहित है। अतः श्वसन प्रक्रिया में आवश्यक यांत्रिक क्रिया में उनका सीधा योगदान नहीं मिलता अर्थात वह अपने आप फैल या सिकुड़ नहीं सकते। उसको फैलने के लिए पूरी जगह मिलनी चाहिए। यह जगह अवकाश यांत्रिक बल तीन प्रकार से उपलब्ध हो सकता है– 1. तनुपट को ऊपर–नीचे खिसका कर, 2. अन्तर्पर्शुकीय मांसपेशियों के संकुचन–विस्तरण के द्वारा, 3. हंसली को ऊपर–नीचे खिसका कर।

श्वास को सही ढ़ंग से लेने की प्रक्रिया यह है कि हम तनुपट, पसली एवं हंसली की मांसपेशियों का पूरा उपयोग करें। यह तब संभव है जब हम श्वास को पूरा खाली करें। कार्बन–डाइ–ऑक्साइड को अधिकतम बाहर निकाल दें, फिर धीरे–धीरे श्वास लें। सम्यक् श्वास लेने का नियम यह है कि श्वास लेते समय पेट फूले एवं श्वास छोड़ते समय पेट भीतर जाए। इससे तनुपट को नीचे फैलने के लिए पूरा अवसर मिलेगा, पसली एवं हंसली की मांसपेशियों का भी पूरा उपयोग होगा। श्वास की संख्या कम होगी। मन की चंचलता और विचार भी कम होंगे। मानसिक एकाग्रता का विकास होगा।

4.0 एकाग्रता का अभ्यास

औद्योगिक, वाणिज्यिक और व्यापारिक क्षेत्र के बड़े–बड़े संस्थान अपने वरिष्ठ प्रबंधकों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए उनके प्रशिक्षण में प्रतिवर्ष लाखों रुपये खर्च करते हैं। प्रशिक्षण देने वाले संस्थान बहुधा सेमिनार के रूप में ये कार्यक्रम चलाते हैं। यह कार्य मात्र सैद्धान्तिक ही रह जाता है। वस्तुतः कार्यक्षमता के विकास का मूल मंत्र है मानसिक एकाग्रता का अभ्यास। प्रेक्षा प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने एकाग्रता के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विकास के लिए एक सरल तरीका प्रेक्षाध्यान में बताया है। वह है– श्वास प्रेक्षा। बच्चे से बुढ़े तक आसानी से उसका अभ्यास कर सकते हैं। इससे अपनी कार्यक्षमता को बढ़ा सकते हैं। अपने व्यक्तित्व व जीवन को संतुलित बनाकर सफल व सन्तुष्ट जीवन की दिशा में प्रस्थान कर सकते हैं।

4.1 ज्ञान और अभ्यास

मानसिक प्रशिक्षण के लिए दूसरी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है – मानसिक एकाग्रता के उपाय का निरन्तर अभ्यास। हमें यदि अपनी कार्यक्षमता को बढ़ाना है तो मन को इतना शक्तिशाली बना दें कि वह जो भी काम करे उसमें पूर्ण रूप से लगा रहे। अन्य कोई चिन्तन, स्मृति अथवा कल्पना उसे विचलित न कर सके। जिस कार्य में मन लगा है आवश्यकतानुसार उस समय उसी की स्मृति, उसी का चिन्तन एवं उसी की कल्पना रहे। यह सब सम्भव है। एक ही बात की आवश्यकता है। वह है अभ्यास, अभ्यास और अभ्यास। यदि हम अभ्यास कर लेते हैं तो निश्चित रूप से वह क्षमता प्राप्त कर सकते हैं जिसकी आज हम सबको आवश्यकता है। ऐसा क्यों नहीं कर पा रहे हैं ? पहला कारण है कि हमें उसका ज्ञान नहीं है। दूसरा कारण है ज्ञान होने पर भी अभ्यास नहीं कर पा रहे हैं।

4.2 अभ्यास से असम्भव भी सम्भव

अभ्यास में वह शक्ति है कि असंभव दिखने वाले कार्य संभव हो जाते हैं। अभ्यास करते करते व्यक्ति एक साथ 30 कि.मी. दौड़ जाता है। पर यह सब एक दिन में नहीं हो सकता। निरन्तर अभ्यास करने से सम्भव हो जाता है। जैसे दौड़ने के लिए मांसपेशियों को प्रशिक्षित किया जा सकता है वैसे ही मन को भी प्रशिक्षित किया जा सकता है। जिस काम में वह नियोजित है उसी में रहे, इधर–उधर नहीं भटके। प्रश्न केवल अभ्यास करने का है। अभ्यास से प्रत्येक कार्य सम्भव हो जाता है। कोई भी व्यक्ति एक ही बार में साइकल चलाना नहीं सीख सकता है। उसको बार बार अभ्यास करना पड़ता है। एक व्यक्ति तैरना सीखना चाहता है। वह एक ही दिन में तैरना नहीं सीख सकता। उसको बार–बार अभ्यास करना पड़ेगा। एक ही दिन में अच्छा गायक नहीं बन सकता। अनेक कार्य ऐसे है जो केवल अभ्यास से ही संभव होते हैं। यदि हम मन को सही अभ्यास दे दें तो मन भी एकाग्र रह सकता है। जैसे प्रशिक्षण के द्वारा स्मृति का विकास

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

किया जा सकता है वैसे ही मानसिक एकाग्रता का भी विकास किया जा सकता है।

एक व्यक्ति ने संकल्प किया कि मुझे एक पूर्ण वयस्क सांड (वृषभ) को उठाना है। क्या कोई सांड़ को उठा सकता है? कितना बड़ा होता है। वजन भी कितना अधिक होता है अनेक बार वह आक्रामक भी हो जाता है। फिर आदमी सांड़ को कैसे उठा सकता है? लोगों ने उसे बहुत समझाया; बहुत कुछ कहा। फिर भी उसने कहा कि मुझे तो उठाना ही है। वह अपने गुरू के पास गया। और कहा–गुरूदेव! मैं एक चमत्कार करना चाहता हूं। मैं एक वयस्क सांड़ को उठाना चाहता हूं। क्या कोई उपाय है? गुरु बहुत ज्ञानी और अनुभवी थे। उन्होंने अनेकान्त की भाषा में कहा कि उपाय बहुत सरल है पर अभ्यास कठिन है। आज ही अपनी गौशाला में बछड़े का जन्म हुआ है, आज से ही उसे उठाने का अभ्यास प्रारम्भ कर दो। तब तक धैर्य से अभ्यास करते रहो जब तक वह बछड़ा वयस्क सांड न बन जाये। शिष्य ने गुरु को प्रणाम किया। धैर्य से निरन्तर अभ्यास में लग गया। एक दिन ऐसा आया कि उसने व्यस्क सांड को उठाकर सबको आश्चर्य चकित कर दिया। अभ्यास से असम्भव भी सम्भव बन गया।

4.3 अभ्यास और निरन्तरता

निरन्तरता में बहुत बड़ी शक्ति होती है। पानी की एक–एक बूंद गिरती रहे, निरन्तर गिरती रहे तो बड़े से बड़ा घड़ा भी भर जाता है। एक बूंद आज गिरी, एक बूंद कल, एक बूंद परसों गिरी तो सभी बूंदें सूख जायेगी, शेष कुछ भी नहीं रहेगा। अभ्यास यदि निरन्तर चलता रहे तो मन इतना प्रशिक्षित हो जायेगा कि जो भी काम करेंगे, मन उस समय उसी में लगा रहेगा। हम हमारे मन की 80 प्रतिशत क्षमता का उपयोग करने में सक्षम हो जायेंगे।

4.4 अभ्यास का संकल्प

कार्यक्षमता के विकास के लिए प्रयोग के अभ्यास की बात समझ में आती है, पर इसमें मूल समस्या क्या है ? मूल समस्या मन की ही है। वह आपको अभ्यास करने ही नहीं देगा। अभ्यास के प्रतिरोध में वह आकांक्षाएं, आलस्य और दुश्चिन्ताओं को उत्पन्न कर देगा। वह आपको विचलित करने का प्रयास करेगा। यदि आपका संकल्प बल दृढ़ है तो

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

फिर उसका दबाव भी निष्फल हो जायेगा। अतः आप संकल्प करें कि मैं छः महीने तक प्रतिदिन पांच मिनट लयबद्ध श्वास का अभ्यास करूंगा। यदि आपने छः महीने तक पांच मिनट के लिए मन को प्रशिक्षित कर दिया तो इसकी एक अच्छी आदत बन जायेगी। मन को जिस काम में भी लगायेंगे वह उसी कार्य में एकाग्र हो जायेगा। मन शान्त मिलेगा। संकल्प और अभ्यास से हमारा सम्पर्क अवचेतन मन से हो जाता है। विचार और आचार संस्कार का रूप ले लेते हैं। फिर उसको करने के लिए अधिक प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती। वह कार्य स्वतः और सहज हो जाता है।

5.0 प्रयोग–प्रविधि

5.1 दीर्घ श्वास प्रेक्षा

इसको हम एक मिनट तक की श्वास की गणना करके समझ सकते हैं। (1) सर्वप्रथम एक मिनट के लिए सामान्य श्वास की गणना करें। (लेने और छोड़ने को एक मानें) (2) इसके पश्चात् धीरे–धीरे श्वास छोंड़े एवं धीरे–धीरे श्वास लें। इससे आपकी श्वास की संख्या आधे से कम हो जाएगी। मानसिक एकाग्रता की अनुभूति होगी। (3) तीसरी बार ध्यान नाभि पर रखें। धीरे–धीरे पूरा पेट भीतर ले जाएं, धीरे–धीरे श्वास निकालें। धीरे–धीरे पूरा पेट फुलाएं। धीरे–धीरे श्वास भरें। एक मिनट तक प्रयोग करे। इस प्रयोग में श्वास की संख्या पहले से कम होगी। मानसिक एकाग्रता बढ़ेगी।

धीरे–धीरे श्वास छोड़ना एवं धीरे–धीरे लेना–यही दीर्घ–श्वास है। श्वास को लगातार देखने से, अनुभव करने से श्वास की गति और अधिक मन्द हो जाती है। मानसिक एकाग्रता में अभूतपूर्व वृद्धि होती है। यह श्वास को लेने की वैज्ञानिक प्रक्रिया है। मानसिक एकाग्रता का महत्त्वपूर्ण प्रयोग है।

5.2 लयबद्ध श्वास प्रेक्षा

कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए एकाग्रता की भी आदत बनानी होगी। इसको बनाने के लिए एक मिनट में छः श्वास छोड़ने एवं लेने का अभ्यास करना होगा। घड़ी देखकर पांच सैकण्ड में श्वास छोड़ना एवं श्वास लेने का अभ्यास करें। एकाग्रता को परखने के लिए उसी दौरान यह भी देखें कि अन्य विचार कितने आये? उनकी गिनती भी रखें। इस

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकार पांच मिनट तक अभ्यास करें। यह अभ्यास दिन में तीन बार करें। तीन बार न हो सके तो कम–से–कम दो बार अवश्य करें। अभ्यास क्रम निरन्तर छः महीने तक चले।

इस अभ्यासक्रम से लयबद्ध दीर्घश्वास की आदत बन जाएगी। मस्तिष्क में श्वसन–केन्द्र के द्वारा श्वास की गति का नियमन होता है। वहां पर एकाग्रता के लिए छः श्वास की प्रोग्रामिंग रिकार्ड हो जायेगी। इसका परिणाम यह होगा कि जब भी एकाग्रता की जरूरत होगी, श्वास की संख्या छः श्वास प्रति मिनट हो जायेगी। इससे मन एकाग्र हो जायेगा। एकाग्रता से पुनः श्वास की संख्या छः पर बनी रह सकेगी। यह एक एकाग्रता का चक्र बन जायेगा। छः श्वास प्रति मिनट से एकाग्रता की पुष्टि और एकाग्रता से पुनः छः श्वास की पुष्टि। छः श्वास रूपी दीर्घश्वास के अभ्यास से हमारे मस्तिष्क व स्नायुओं को अधिक ऑक्सीजन पहुंचती है। इससे वे लम्बे समय तक बिना थके अपने कार्य में नियोजित रहते हैं। अपनी कार्यक्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि करते हैं। अतः अभ्यास के साथ – साथ प्रस्तुत तालिका 7.1 जैसी तालिका बनावें, उसमें सामान्य श्वास, दीर्घश्वास व लयबद्ध श्वास में विचारों की संख्या लिखते रहें। इससे आप स्वयं परिणामों को देख भी सकेंगे। एकाग्रता में वृद्धि व अनावश्यक विचारों में कमी का साक्षात् अनुभव करेंगे।

तालिका 7.1

क्र.सं.	दिनांक	सामान्य श्वास प्रति मिनट	दीर्घश्वास प्रति मिनट	लयबद्ध श्वास में विचारों की संख्या प्रति मिनट
1.				
2.				
3.				
4.				
5.				
6.				
7.				

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. स्वास्थ्य प्रबंधन

रूपरेखा

1.0 स्वास्थ्य

1.1 शरीर की संरचना

2.0 स्वास्थ्य की व्यवस्था

2.1 व्यवस्था में अव्यवस्था

2.2 दर्द रूपी घन्टी

2.3 दर्द सहने की क्षमता

2.4 दर्द की अनुभूति

3.0 स्वास्थ्य प्रबंधन और प्रेक्षाध्यान

3.1 प्रेक्षाध्यान : शरीर प्रेक्षा

3.2 शरीर प्रेक्षा के परिणाम

3.3 स्वास्थ्य की अनुप्रेक्षा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

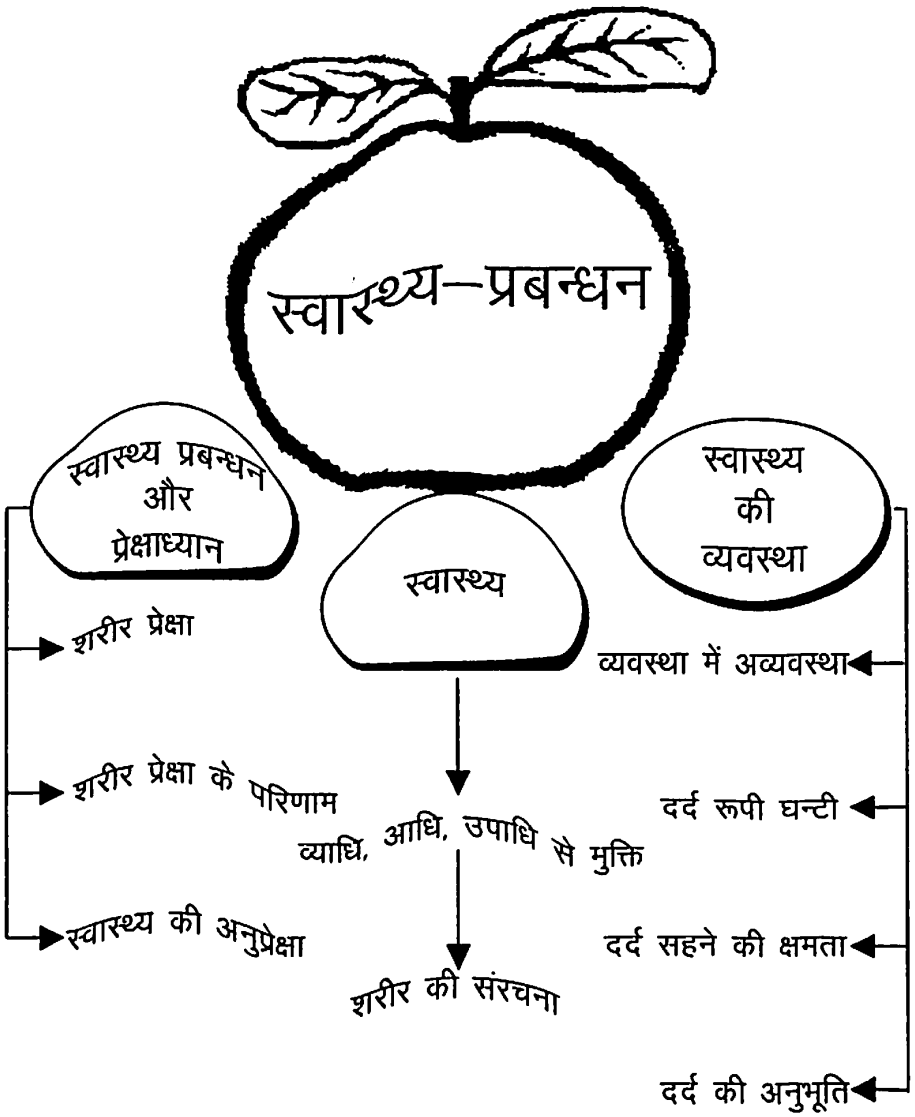

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. स्वास्थ्य-प्रबन्धन

"आरोग्ग बोही लाभं समाहिवरमुत्तमं दिन्तु"

1.0 स्वास्थ्य

एक व्यक्ति आया। उसने कहा – "मुझे बीमारी हुई। डॉक्टरों को दिखाया। दवाई ली। पर अब भी मन में उत्साह नहीं है, उमंग नहीं है, बुझा–बुझा सा रहता हूं। शान्ति नहीं है।"

अशान्ति जीवन में अभिशाप है। शान्ति एवं समाधि जीवन में अमृत है। इस अमृत की खोज सदियों से हो रही है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने प्रेक्षाध्यान में समाधि का सूत्र प्रस्तुत किया है। जीवन को उपाधि (भावात्मक रोग), आधि (मानसिक रोग), व्याधि (शारीरिक रोग) से मुक्त करना समाधि है। प्रेक्षाध्यान इस समाधि तक पहुंचने का मार्ग है। स्वास्थ्य का अर्थ भी यही है स्वस्थ अवस्था। स्वस्थ अर्थात् स्व में स्थित रहना। जो व्यक्ति उपाधि ग्रस्त है। आधि से पीड़ित है। व्याधि से आक्रांत है वह स्व में नहीं रह सकता। स्वास्थ्य को प्राप्त करने के लिए समग्र एवं सर्वांगीण दृष्टिकोण को अपनाना जरूरी है। केवल शरीर या केवल मन या केवल भावों की शुद्धि की बात करना एकांगी रास्ता होगा। वर्तमान में यह एकांगी दृष्टि बहुत चल रही है। अतः समस्या का समाधान करना आसान नहीं रह गया है। व्यक्ति अनेक दवाइयां खाने के बाद भी बहुधा स्वयं को स्वस्थ अनुभव नहीं करता।

1.1 शरीर की संरचना

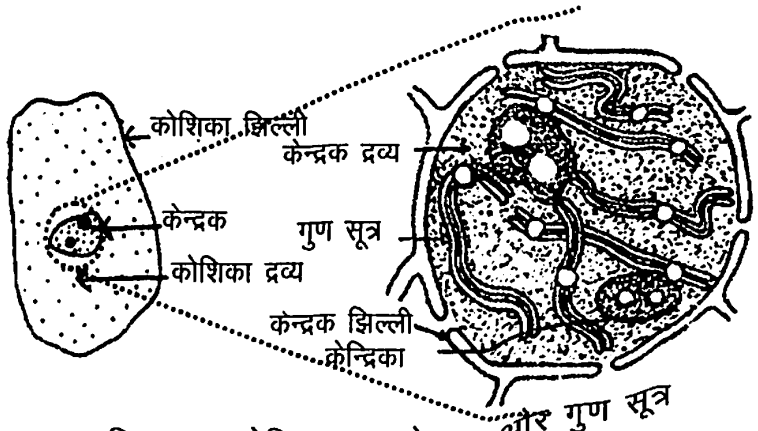

चित्र 8.1 कोशिका का केन्द्रक और गुण सूत्र

हमारा शरीर एकांगी व्यवस्था को स्वीकार नहीं कर सकता। इस शरीर का निर्माण जो एक कोशिका के विभाजन से प्रारम्भ होता है,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वह लगभग 600 खरब कोशिकाओं से परिपूर्ण होता है। प्रथम कोशिका के केन्द्र में गुण सूत्र (Cromosome) होते हैं। 23 गुण सूत्र माता से तथा 23 पिता से प्राप्त होते हैं। प्रत्येक गुणसूत्र में संस्कार सूत्र (Genes) होते हैं। ये डी.एन.ए. से बने होते हैं। ये डी.एन.ए. हमारे शरीर निर्माण में इंजीनियर का काम करते हैं। इनके पास पूरे शरीर का नक्शा होता है जिसमें छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी जानकारियां होती हैं। इसी के अनुसार कोशिका का विभाजन होता है। कोशिका से उत्तक एवं उत्तकों से अवयव बनते हैं। इन अवयवों से शरीर में संस्थान बनते हैं। हमारे शरीर में मुख्यतः दस संस्थान होते हैं। संक्षेप में उनके मुख्य कार्य इस प्रकार हैं–

1. कंकाल तन्त्र – ढांचा
2. मांसपेशी तन्त्र – गति
3. नाड़ी तन्त्र – नियंत्रण
4. रक्त परिसंचरण तन्त्र – वाहक
5. श्वसन तन्त्र–ऑक्सीजन आपूर्ति
6. पाचन तन्त्र – पाचन
7. ग्रन्थि तन्त्र– नियंत्रण
8. प्रजनन तन्त्र – प्रजनन
9. प्रतिरक्षा तन्त्र – सुरक्षा
10. उत्सर्जन तन्त्र – विजातीय तत्वों का निष्कासन।

ये संस्थान एकांगी कार्य नहीं करते। सब मिलकर शरीर का संचालन करते हैं। शरीर को स्वस्थ रखते हैं। एक अकेला अवयव शरीर को स्वस्थ नहीं रख सकता। आज अंग का उपचार होता है, अंगी का नहीं। खण्ड का उपचार होता है, अखण्ड का नहीं।

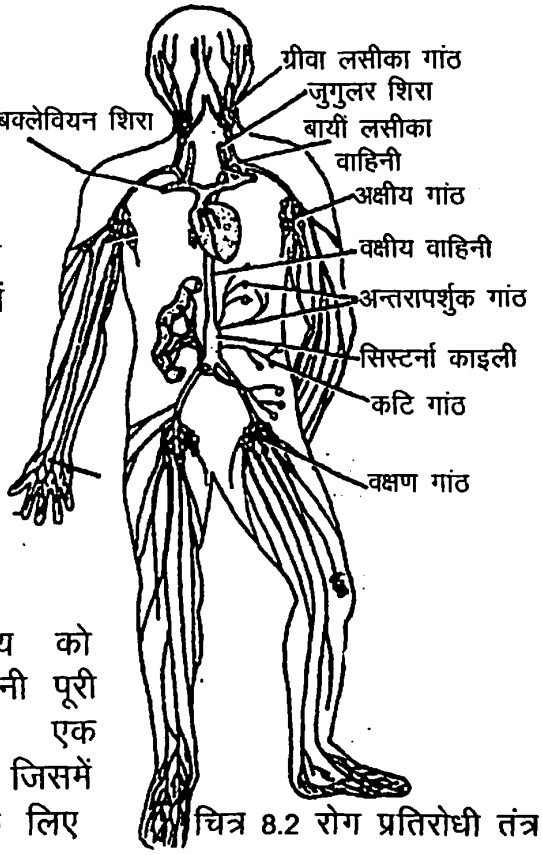

चित्र 8.2 रोग प्रतिरोधी तंत्र

2.0 स्वास्थ्य की व्यवस्था

शरीर में स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए अपनी पूरी व्यवस्था होती है। एक रोग–प्रतिरोधी तंत्र होता है जिसमें रोग का प्रतिरोध करने के लिए

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

श्वेत रक्त कणिकाओं के रूप में एक बड़ी फौज होती है। वह फौज किसी भी बाह्य आक्रान्ता से निपटने के लिए पूरे शरीर में गश्त लगाती रहती है। वह प्रत्येक बाह्य आक्रमण से निपटने में सक्षम होती है। इसी के बलबूते शरीर भी स्वस्थ बना रहता है। इसके अतिरिक्त भी शरीर में हजारों रसायन बनते हैं। ऐसा कोई भी रसायन नहीं है, ऐसी कोई दवाई नहीं है, जो बाहर बनती हो, और शरीर नही बना सकता हो। शरीर की सामान्य प्रक्रिया यह है कि जब भी कोई घाव या टूट–फुट होती है, तो स्वतः भीतरी नक्शे के अनुसार कुछ ही समय में ठीक कर लिया जाता है। पर जब भीतरी नक्शा ही त्रुटिपूर्ण बना लिया जाता है, तो स्वस्थ रहना आसान नहीं होता।

2.1 व्यवस्था में अव्यवस्था

हम अज्ञानतावश भीतर के नक्शे को दूषित कर लेते है। गलत सूचनाओं को नक्शे में स्थान दे देते हैं। नक्शे के रिकॉर्ड्स बदल जाते हैं। यह परिवर्तन होता है–हमारे क्रूर व्यवहार, दूषित आचरण, गलत विचार और नकारात्मक भावों के कारण। प्राकृतिक नियमों के उल्लंघन, असात्विक खान–पान, दुर्व्यसनों का आसेवन, असंयत रहन–सहन, प्रदूषित वातावरण भी आग में घी का काम करते हैं। इससे एक ओर भीतर के नक्शे में परिवर्तन होता है, शरीर की साम्यावस्था विषम बनती है, रोग–प्रतिरोधात्मक शक्ति कमजोर पड़ती है। इसके अतिरिक्त शरीर के दुर्बल अवयवों पर अत्यधिक दबाव पड़ता है। वे श्लथ होकर अस्वस्थ हो जाते हैं। इन्द्रियां असमय में क्षीण होने लगती हैं। यौवन ढल जाता है, व्यक्ति असमय में ही वृद्ध दिखने लगता है।

2.2 दर्द रूपी घन्टी

चेतना हमारे अस्तित्व का केन्द्रीय तत्व है। जब भी शरीर में अव्यवस्था होती है उस समय दर्द रूपी घण्टी बजती है। व्यवस्था की पुकार होती है। चेतना का बरबस ही ध्यान उस ओर खींचा चला जाता है। पर सामान्यतया उसको देखा–अनदेखा कर लिया जाता है। मूल कारण की गहराई से खोज किये बिना ही उसको दबाने की कोशिश की जाती है। दवाइयों के आड़ में उस पर पर्दा डाल देते हैं। वाकई में लगता है कि कुछ हुआ ही नहीं। पर कुछ दिनों बाद वही खतरे की घण्टी किसी दूसरे किनारे से और तेजी से बजने लगती है। अपेक्षा यह है कि इन संकेतों को समझना सीखें। कारण की गहराई में जाएं। आत्मविश्लेषण करें। अपने आचार, व्यवहार और चिन्तन में अपेक्षित परिवर्तन करें। स्वास्थ्य के मूल कारण स्वस्थ जीवनशैली को अपना कर पुनः व्यवस्था को स्थापित करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2.3 दर्द सहने की क्षमता

दर्द सहने की क्षमता प्रत्येक व्यक्ति में अलग–अलग होती है। निरन्तर दर्द सहते–सहते दर्द को सहन करने की क्षमता भी बढ़ जाती है। आधुनिक अनुसंधानों के अनुसार हंसतें, खेलते और प्रसन्नचित्त रहने से शरीर में एण्डोरफिन्स् नामक कणों की मात्रा बढ़ जाती है। वह शरीर को सहज रूप से दर्द को सहन करने योग्य बनाता है। क्रोनिक पेन (Chronic Pain) के रोगियों को चाहिए कि वे अपनी दिनचर्या और जीवनशैली में आवश्यक सुधार लाएं। तनावमुक्त जीवन जीने के अतिरिक्त योग और ध्यान की क्रियाओं में लीन रह कर एण्डोरफिन्स् कणों की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। कुछ लोगों का पूरा जीवन दर्द के साथ गुजरता है। कमर दर्द, गठिया, केन्सर और माइग्रेन जैसी बहुत सी ऐसी बीमारियां हैं जिनका दर्द उम्र भर भुगतना पड़ता है। लेकिन यदि दर्द से दोस्ती कर ली जाए तो पीड़ा दुःखदायी नहीं रहती।[1]

2.4 दर्द की अनुभूति

दर्द एक ऐसा अनुभव है जो लगभग हर रोग के साथ अपनी उपस्थिति दर्शाता है। वास्तव में दर्द एक जटिल मनोकायिक अनुभव है जो नाड़ी तन्तु व सम्पूर्ण तन्त्रिका तन्त्र का प्रयोग कर पहले शारीरिक वेदना द्वारा और उसके बाद रोगी की भावनात्मक प्रतिक्रिया के रूप में दोहरी पीड़ा उत्पन्न करता है। उदाहरणार्थ केन्सर जैसे मामलों में रोगी के मन में गहराया हुआ निराशा भाव और लगातार निकट आती मृत्यु का भय उसकी समूची पीड़ा में और भी बढ़ोतरी कर देते हैं।

शारीरिक दर्द के अनेक कारण होते हैं। जब उन कारणों द्वारा शरीर को संवेदना मिलती है तब शरीर प्रकाश के वेग की गति से हरकत करता है। (देखें चित्र 8.3)

1. उद्दीपन – शरीर के हर भाग में तन्त्रिकाएं होती हैं। चोट लगते ही तन्त्रिकाएं हरकत में आती है और विद्युत–रासायनिक (जैव–विद्युत) संकेतों के माध्यम से संवेदनाएं आगे बढ़ने लगती हैं।

2. संकेत सम्प्रेषण – दर्द की संवेदनाएं विद्युत–रासायनिक संकेतों के माध्यम से स्पाइनल कोर्ड (सुषुम्ना) के माध्यम से एक तंत्रिका कोशिका से दूसरी तन्त्रिका कोशिका से होते हुए मस्तिष्क के एक निश्चित भाग थेलेमस तक पहुंचती है। जब तक व्यक्ति का चित्त उस सूचना से नहीं जुड़ता तब तक उसका बोध भी नहीं होता है। दर्द से जब व्यक्ति की

---

[1] राजस्थान पत्रिका, 18 मई, 2003, जोधपुर पृष्ठ–9

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जागरूकता उस तरफ बरबस खींची जाती है, चित्त जुड़ता है तब उसका बोध होता है।

3. प्रतिक्रिया – जब मस्तिष्क दर्द की संवेदना प्राप्त करता है तो सबसे पहले वह उसकी तीव्रता का आकलन करता है फिर चोटग्रस्त हिस्से को खोजता हुआ मस्तिष्क को उसे शान्त करने का उपाय करने को निर्देशित करता है। यह क्रिया प्रकाश की गति से भी तीव्र गति से संचालित की जाती है।

4. वियोजन – दर्द के प्रति संवेद भेजने के बाद मस्तिष्क से निकलने वाले रासायनिक संकेत संवेदना संप्रेषण की प्रक्रिया को अवरूद्ध कर देते हैं।

दर्द की शारीरिक प्रतिक्रिया के साथ–साथ भावात्मक प्रतिक्रिया भी प्रारम्भ हो जाती है। व्यक्ति की भावात्मक प्रतिक्रिया से वियोजन क्रिया में बाधा पहुंचती है। इससे दर्द की संवेदना पहुंचाने वाले रसायन न्यूरोट्रांसमीटरों का स्राव बढ़ जाता है। इससे व्यक्ति को दर्द की अनुभूति तीव्र से तीव्रतर होती जाती है। भावात्मक प्रतिक्रिया से मुक्त होकर इन संवेदनों को देखने से मस्तिष्क को संवेदना सम्प्रेषण प्रक्रिया को अवरूद्ध करने में सहयता मिलती है। इससे दर्द शामक न्यूरोट्रांसमीटर "एण्डोरफिन्स" नामक रसायन का स्राव होता है। वह दर्द की संवेदना सम्प्रेषण प्रक्रिया को रोक देता है। तब वैसे ही व्यक्ति को दर्द की अनुभूति नहीं होती है। जैसा कि बाहर से दर्द शामक औषधियों को लेने से व्यक्ति अनुभव करता है।

दीर्घकाल तक दर्द के स्थान की प्रेक्षा (प्रतिक्रिया मुक्त देखना) से दर्द के अन्य आन्तरिक कारणों को दूर करने में भी मदद मिलती है। उस स्थान की कोशिकाओं के अन्दर और बाहर दबाव कम होता है। वहां अतिरिक्त रक्त पोषक तत्व और रोग प्रतिरोधी कोशिकाएं तेजी से पहुंचने लगती है। लम्बे अभ्यास से रोग एवं उसके कारण होने वाला दर्द दोनों समाप्त हो जाते हैं। रुग्ण कोशिकाओं के स्थान पर नई कोशिकाओं के सृजन द्वारा शरीर अपने आपको स्वस्थ कर लेता है।

3.0 स्वास्थ्य प्रबन्धन और प्रेक्षाध्यान

स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए प्रेक्षाध्यान में अनेक प्रयोग हैं। इनमें मुख्य रूप से यौगिक क्रियाएं, योगासन, मेरुदण्ड की क्रियाएं, प्राणायाम, कायोत्सर्ग, शरीर प्रेक्षा और अनुप्रेक्षा स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक जीवनशैली में अनेक दैनिक क्रियाकलाप हमारे स्वास्थ्य को आघात पहुंचाते हैं। उन आघातों से बचने के लिए स्वास्थ्य संवर्द्धक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

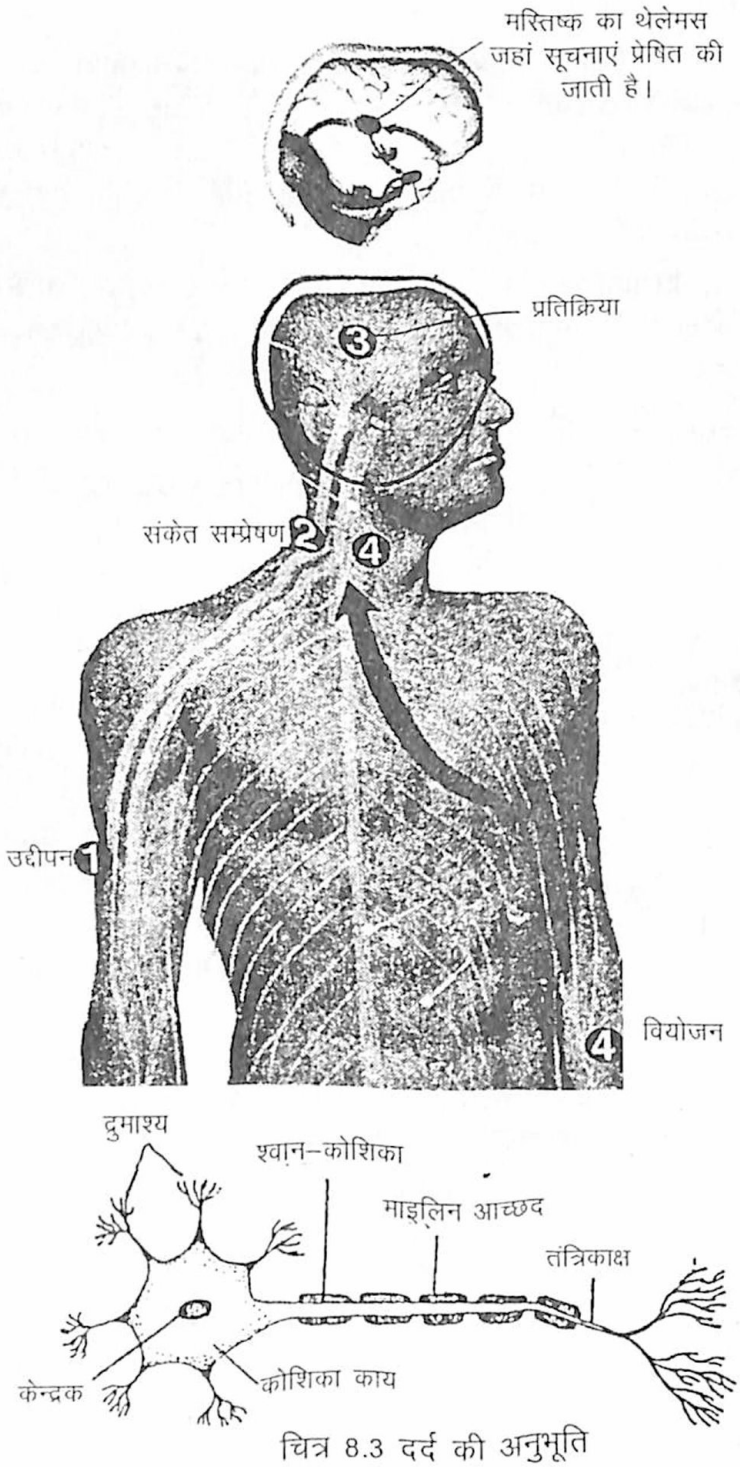

चित्र 8.3 दर्द की अनुभूति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यौगिक क्रियाएं[1] अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई हैं। आरोग्य प्राप्ति के लिए आधुनिक उपचार पद्धतियों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है किन्तु "Prevention is better than cure" उपचार से सावधानी को श्रेष्ठ माना जाता है। अतः हितकर यही है कि रोग आने से पूर्व ही जीवनशैली को स्वस्थ बनाने पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए। नियमित रूप से दस मिनट का समय यौगिक क्रियाओं के लिए दिया जाए तो अनेक शारीरिक समस्याओं से बचाव सम्भव है।

तालिका 8.1 आधुनिक जीवनशैली में स्वास्थ्य पर आघात एवं प्रेक्षाध्यान से बचाव

क्र. सं.	रुग्णता	आधुनिक जीवन शैलीगत कारण	प्रेक्षा प्रयोग
1.	आँख	अधिक टी.वी. देखना, निरन्तर कम्प्युटर पर कार्य करना, लेटकर पढ़ना आदि।	आंख की यौगिक क्रिया
2.	कान	ध्वनि प्रदूषण, तेज संगीत, स्वच्छता का अभाव आदि	कान की यौगिक क्रिया
3.	दांत	अधिक शीतल पेय, गर्म–ठण्डा एक साथ, अत्यधिक चाकलेट व मिठाई आदि।	दांत की यौगिक क्रिया
4.	अंगुलियां	लम्बे समय तक निरन्तर कम्प्युटर 'की बोर्ड' चलाना	अंगुलियों व हाथ की यौगिक क्रियाएं
5.	पैर	लम्बे समय तक एक स्थान पर बैठे रहना, बहुत कम पैदल चलने का काम पड़ना, अत्यधिक चलना।	पैरों की यौगिक क्रियाएं
6.	कमर	बैठने, उठने, सोने व वजन उठाने के गलत तरिके आदि।	मेरुदण्ड की यौगिक क्रियाएं व जागरूकता।
7.	पाचनतंत्र, कब्ज, वायु विकार आदि	व्यसन, अनावश्यक खाद्य, जंक फूड, फास्ट फूड, गरिष्ठ भोजन, अतिभोजन, विपरीत भोजन, अस्वास्थ्य कर पदार्थ आदि।	पेट और श्वास की दस क्रियाएं, खाद्य विवेक, मिताहार।

1 देखें– प्रेक्षाध्यान यौगिक क्रियाएं, मुनि किशनलाल, जैन विश्व भारती, लाडनूं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8.	मधुमेह	लम्बे समय तक एक स्थान पर बैठकर कार्य करना, अत्यधिक महत्त्वाकांक्षाएं, शारीरिक श्रम का अभाव।	सम्पूर्ण यौगिक क्रियाएं, मेरुदण्ड की क्रियाएं, योगासन।
9.	तनाव	प्रतिस्पर्धा या असुरक्षा का भाव, एकल परिवार, देर से सोना व देर से उठना आदि।	कायोसर्ग व स्वस्थ जीवनशैली का अभ्यास।

3.1 प्रेक्षाध्यान : शरीर प्रेक्षा

प्रेक्षाध्यान के अभ्यास शिविर वस्तुतः स्वस्थ जीवन शैली के प्रशिक्षण शिविर भी हैं। इन शिविरों में अनेक प्रकार के हर उम्र के लोग आते हैं। उनमें से कुछ लोगों को शारीरिक रुग्णता भी होती है। शिविर समापन पर वैसे लोगों को आध्यात्मिक अनुभव के साथ–साथ पर्याप्त शारीरिक लाभ भी मिलता है। शिविरों में शरीर प्रेक्षा के प्रयोग भी करवाये जाते हैं। इस प्रयोग में शरीर के प्रत्येक अवयव को भावात्मक प्रतिक्रिया से मुक्त होकर अनुभव करने का अभ्यास कराया जाता है। इसमें शिविरार्थी गण तटस्थ रहते हुए अवयव के उन पीड़ादायक उद्दीपनों एवं उनके परिणाम स्वरूप होने वाले कोशिकीय वातावरणगत परिवर्तनों पर भी चित्त को केन्द्रित करते हैं। लम्बे समय तक और बार–बार की जाने वाली तटस्थ प्रेक्षा से नकारात्मक और प्रतिकूल परिवर्तनों (प्रतिक्रियाओं) को विराम मिलता है। पीड़ादायक उद्दीपनों का अनुभव होना भी कम होता चला जाता है। इस प्रयोग में शरीर के प्रत्येक अवयव पर चित्त का सम्पर्क होता है अतः जहां–जहां चित्त की यात्रा होती है, वहां–वहां पर प्राण की भी यात्रा होती है। इससे पूरे शरीर में प्राण का संतुलन बढ़ता है। परिणामतः शरीर स्वस्थ होने लगता है। इसमें एक ओर अखण्ड शरीर पर ध्यान दिया जाता है तो दूसरी ओर शरीर के उस खण्ड या रुग्ण भाग पर भी चित्त को केन्द्रित कर उसे प्राणवान और शक्तिशाली बनाया जाता है।

3.2 शरीर प्रेक्षा के परिणाम

शरीर प्रेक्षा की प्रक्रिया से सर्वोत्कृष्ट लाभ हमारे शरीर की समस्थिति (Homeostasis) अवस्था में आशातीत सुधार के रूप में मिलता है। शरीर प्रेक्षा से रक्त परिसंचरण को नियमित बनाये रखने एवं इनसे संबंधित अवयवों को ऊर्जा उपलब्ध कराने में मदद मिलती है। हृदय की पेशियां सशक्त बनती हैं। हृदय द्वारा रक्त को पम्प करने की दर नियमित होती है। धमनी में पाये जाने वाले अवरोध दूर होते हैं। रक्तचाप भी सम बना रहता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शरीर प्रेक्षा के अन्तर्गत जब चित्त को रक्त–परिसंचरण तन्त्र के विभिन्न अवयवों पर केन्द्रित करते हैं तब लाल रक्त कोशिकाओं में हीमोग्लोबीन के द्वारा ऑक्सीजन को अवशोषित करने की क्षमता बढ़ती है। फलतः शरीर को अधिक ऑक्सीजन उपलब्ध होती है जो कार्यक्षमता में अभिवृद्धि करती है। श्वेत रक्त कणिकाओं के द्वारा विजातीय पदार्थों, जिन्हें एण्टीजन (Antigen) कहते हैं, को नष्ट करने के लिए (Antibodies) नामक पदार्थों के उत्पादन क्षमता में आशातीत वृद्धि होती है। इसके परिणाम स्वरूप रोग प्रतिरोधी क्षमता में स्वाभाविक गुणात्मक सुधार होता है। शरीर प्रेक्षा के द्वारा लाल और श्वेत रक्त कणिकाओं की कार्य–उम्र (working -age) में भी वृद्धि होती है। रक्तस्राव के समय रक्त का थक्का जमने की प्रक्रिया के लिए भी कई आवश्यक तत्वों का उत्पादन भी रक्त के द्वारा होता है। शरीर प्रेक्षा द्वारा इन तत्वों का उत्पादन भी बढ़ने लगता है। सारांश रूप में कहा जा सकता है कि शरीर प्रेक्षा के नियमित अभ्यास से रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता बढ़ती है एवं शरीर के सम्पूर्ण स्वास्थ्य में वृद्धि होती है।

3.3 स्वास्थ्य की अनुप्रेक्षा

शरीर को स्वस्थ करने के लिए प्रेक्षाध्यान में एक और महत्त्वपूर्ण प्रयोग है– स्वास्थ्य की अनुप्रेक्षा। इसमें शरीर के निरीक्षण के पश्चात् उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की जाती है। अपनी भूलों के लिए क्षमायाचना व भविष्य में जागरूकता का संकल्प लिया जाता है। अन्त में स्वस्थता का सुझाव दिया जाता है।

प्रयोग विधि

पूरे शरीर को शिथिल करें। तनाव मुक्त करें। शरीर को छः भागों में बांट दें – दायां पैर, बायां पैर, कमर से गर्दन तक, दायां हाथ, बायां हाथ, गर्दन से सिर तक।

(क) दायें पैर पर चित्त को ले जाएं। अंगूठा, अंगुली, पंजा, तलवा, एड़ी, टखना, पिण्डली, घुटना, साथल, नितम्ब – क्रमशः प्रत्येक अवयव पर चित्त को ले जाएं। शिथिलता का सुझाव दें एवं शिथिलता का अनुभव करें।

(ख) पूरे अवयव के साथ सम्पर्क स्थापित करें। उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करें –"तुमने आज तक मेरा बहुत सहयोग किया है। मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूं। साधुवाद देता हूं। मैं चाहता हूं तुम स्वस्थ रहो, सशक्त बनो। तुम्हारा सहयोग निरन्तर मिलता रहे।"

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(ग) शरीर के साथ क्षमायाचना करें –"मेरे कारण, मेरी जीवन शैली के कारण यदि तुम्हें कष्ट पहुंचा हो, असुविधा हुई हो तो मैं क्षमायाचना करता हूं।"

(घ) संकल्प करें, शरीर को आश्वासन दें –"मैं अपनी जीवन शैली को बदलने का पूरा प्रयत्न करूंगा।" तीन बार दोहराएं।

(ड़) अनुभव करें – प्रत्येक मांसपेशी और कोशिका स्वस्थ हो रही है..... स्वस्थ हो रही है..... स्वस्थ हो रही है।

इसी क्रम से शरीर के अन्य पांच भागों पर भी प्रयोग को दोहराएं। इसके पश्चात् शरीर के रुग्ण अवयव पर भी इसी भावना को दोहराएं।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

9. सकारात्मक दृष्टिकोण और आत्म-विश्वास

रूपरेखा

1.0 आत्म–विश्वास

- 1.1 सकारात्मक दृष्टिकोण
- 1.2 आत्म-विश्वास : अर्थ और स्वरूप
- 1.3 आत्म-विश्वास और आत्म-हीनता
- 1.4 आत्म-हीनता के दुष्परिणाम
- 1.5 आत्म-विश्वास के सुपरिणाम

2.0 सुदृढ़ आत्म-विश्वास

- 2.1 आत्म-विश्वास में अभिवृद्धि का उपाय
- 2.2 प्रेक्षा एवं प्रेक्षा के परिणाम
- 2.3 परिपूर्णता के प्रयास

3.0 आत्म-विश्वास और अन्तर्दृष्टि

- 3.1 अन्तर्दृष्टि और प्रेक्षाध्यान
- 3.2 चैतन्य केन्द्र और आधुनिक विज्ञान
- 3.3 अनिष्ट भाव और गोनाड्स ग्रन्थि
- 3.4 विवेक चेतना और अन्तर्दृष्टि

4.0 अन्तःस्रावी ग्रन्थि तंत्र का संतुलन और दर्शन केन्द्र प्रेक्षा

- 4.1 प्रयोग प्रविधि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

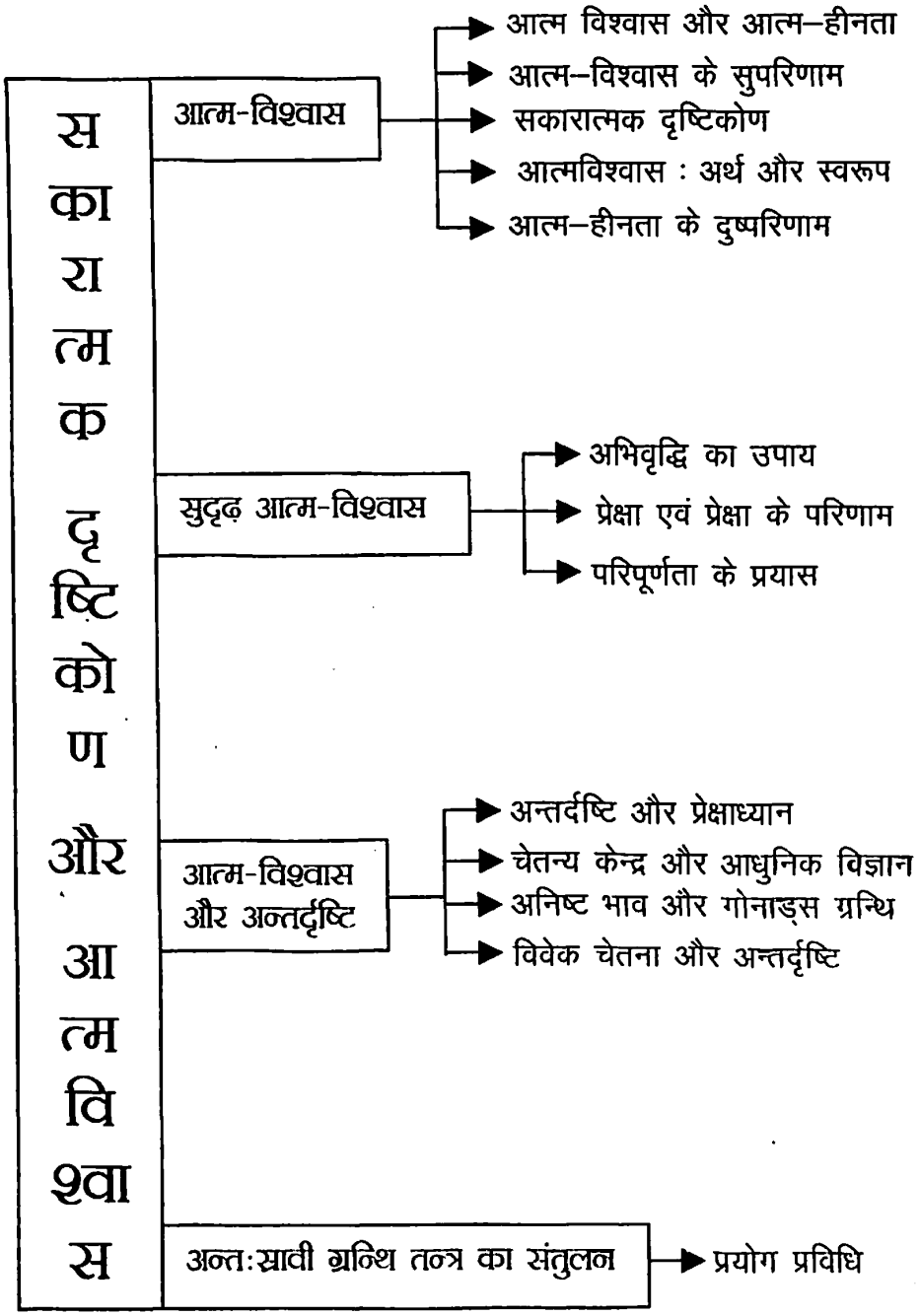

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

9 सकारात्मक दृष्टिकोण और आत्म-विश्वास

1.0 आत्म–विश्वास

लगभग अप्रेल 1980 की बात है जब मैं घोर निराशा और आत्महीनता का शिकार हो गया था। आत्म-विश्वास इतना कमजोर हो गया था कि मैं जब दूकान पर रुपयों की एक गड्डी को तीन बार गिनता, तब भी मुझे यह विश्वास नहीं होता कि इस गड्डी में पूरे सौ नोट ही हैं। मैं भाग्यशाली रहा। मुझे उस समय मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) का शुभ संयोग मिला। उनसे प्रेरणा और संकल्प प्राप्त कर मैंने नमस्कार महामंत्र का ध्यान दर्शन केन्द्र पर प्रारम्भ किया। कुछ ही महिनों बाद मेरी निराशा आशा में बदल गई। आत्म–हीनता, आत्म–विश्वास में परिणत हो गई। जीवन में आमूल–चूल परिवर्तन हो गया।

1.1 सकारात्मक दृष्टिकोण

सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिए आत्म–विश्वास की सुदृढ़ता नितान्त आवश्यक है। आत्म–विश्वास का स्रोत हमारी स्वयं की दृष्टि है। कहा भी जाता है, जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि। हम प्रायः अपने दृष्टिकोण से ही स्वयं एवं दूसरों के व्यवहार, आचार और विचार का निर्णय करते हैं। सामान्यतया जीवन में व्यक्ति उसको ही मूल्य देता है जिसको वह स्वयं महत्त्वपूर्ण मानता है, अच्छा मानता है अथवा जिस क्षेत्र में उसकी योग्यता अच्छी होती है। वस्तुतः जीवन में घटने वाली किसी भी घटना या परिस्थिति का अपना स्वतन्त्र मूल्य नहीं होता है। व्यक्ति उसे जिस दृष्टिकोण से ग्रहण करता है वह ही उसका मूल्य हो जाता है। एक व्यक्ति के लिए टिकट की लम्बी कतार में खड़ा होना परेशानी का कारण बन सकता है। वहीं दूसरी तरफ दूसरे व्यक्ति के लिए यह एक सामान्य दैनिक घटना भी हो सकती है। अतः हमारा दृष्टिकोण ही हमारे जीवन को अर्थ प्रदान करता है। हम अपने आपको कैसे देखते हैं ? स्वयं की क्या व्याख्या करते हैं ? उसका हमारे जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति पर बहुत गहरा असर पड़ता है। जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण से हमारा आत्म–विश्वास सुदृढ़ बनता है। स्वयं को सकारात्मक दृष्टि से देखने से स्वयं का ज्ञान पुष्ट होता है। स्व–ज्ञान से स्वयं पर विश्वास पुष्ट होता है। इससे आत्म–शक्ति (मनोबल) का जागरण होता है। शक्ति से व्यक्ति सदाचार की दिशा में प्रस्थान करता है। जैनाचार्य उमास्वाति ने भी मोक्ष मार्ग (शान्ति मार्ग) के सूत्र को प्रस्तुत करते हुए बताया –"सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्गः" सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र से मोक्ष मार्ग की प्राप्ति होती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अध्यात्म के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने भी सम्पूर्ण प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए बताया कि –

प्रेक्षा श्रद्धां यायात्–प्रेक्षा (तटस्थ भाव से देखना) श्रद्धा की कोटि में पहुंचे।

श्रद्धा वीर्यं यायात्–श्रद्धा (विश्वास) वीर्य (मनोबल,पराक्रम) की कोटि में पहुंचे।

वीर्यं चरणं यायात्–वीर्य (पराक्रम) आचरण (सदाचार) की कोटि में पहुंचे।

1.2 आत्म–विश्वास : अर्थ एवं स्वरूप

आत्म–विश्वास का प्रभाव हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ता है। अपनी सफलता या असफलता और आपसी सम्बन्धों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ता है। एक सुदृढ़ आत्म–विश्वास से सम्पन्न व्यक्ति के जीवन में प्रसन्नता, संतुष्टि और सार्थक उद्देश्य सहज ही दिखाई देते हैं। आत्म–विश्वास क्या है ? यहां दो शब्द प्रयुक्त हुए हैं – आत्म और विश्वास। आत्मा का तात्पर्य यहां पर दार्शनिक शब्द 'आत्मा' से नहीं है। यहां इसका अर्थ है –स्वयं, अपना, या खुद से है। हम जैसा भी वर्तमान में स्वयं को अनुभव करते हैं, उससे है। विश्वास का अर्थ है – निष्ठा, आस्था, प्रतीति आदि। आत्म–विश्वास का शाब्दिक अर्थ हुआ – स्वयं में आस्था और स्वयं के विभिन्न विश्वास।

आत्म–विश्वास अपने आप पर विश्वास का एक स्तर है। यह स्वयं की स्वीकृति है कि हम अपने आपको कितना स्वीकार करते हैं। अपने भीतर अच्छाई एवं बुराई दोनों का अस्तित्व है। उसको जैसा है, वैसा स्वीकार करते हैं या नहीं। मानसिक रूप से स्वयं को कितना अच्छा और स्वस्थ अनुभव करते हैं ? अतः आत्म–विश्वास का तात्पर्य हुआ –

1. हम अपने आपके प्रति जो विश्वास करते हैं,
2. हम अपने आपके बारे में जैसा अनुभव करते हैं,
3. हमारा अपने आपके प्रति जो दृष्टिकोण है और
4. हमारी विभिन्न धारणाएं और विश्वास जो जीवन और जगत् के प्रति हैं।

कार्य के प्रति अपने विश्वास से ही व्यक्ति उस कार्य से पूर्ण रूपेण जुड़ पाता है। अथवा किसी भी सार्थक उद्देश्य की प्राप्ति में वह सर्वात्मना समर्पित हो जाता है। जब व्यक्ति में स्वयं के प्रति यह विश्वास

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नहीं होता कि मैं अमुक कार्य कर सकता हूं तब तक वह कार्य के प्रति सर्वात्मना प्रयत्न भी नहीं कर पाता है। आत्म–विश्वास का आत्म–छवि, स्वाभिमान, आत्म–गौरव, आत्म–सम्मान, सम्यक् दृष्टिकोण जैसे शब्दों के साथ बहुत निकटता का सम्बन्ध है।

स्वयं के विश्वास

आत्म–विश्वास अर्थात् स्वयं पर विश्वास या स्वयं के विश्वास। स्वयं के विश्वास नई सूचनाओं को ग्रहण करने के लिए छलनी का काम करते हैं। जो सूचना हमारे विश्वासों के साथ मेल नहीं खाती उसे छांट दिया जाता है। उसे ग्रहण नहीं किया जाता है। उसे महत्त्व नहीं दिया जाता है। दूसरी और जो सूचनाएं स्वयं के विश्वासों से मेल खाती हैं उसे आसानी से स्वीकार कर लिया जाता है।

इस प्रकार स्वयं के विश्वास नई सूचनाओं (ज्ञान) को ग्रहण करने में साधक या बाधक बनते हैं। वैसे ही नये कार्यों को करने, सम्बन्धों के निर्वाह करने या किसी भी समस्या का समाधान करने में भी स्वयं के विश्वास साधक या बाधक बनते हैं। अतः स्वयं पर विश्वास को कैसे पुष्ट करें ? स्वयं के विश्वासों को सकारात्मक कैसे बनायें रखें ? प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में सफल होने के लिए इसका बोध आवश्यक है।

उतार–चढ़ाव

आत्म–विश्वास वस्तुतः स्वयं की उपयोगिता, स्वयं की मूल्यवत्ता, स्वयं के अस्तित्व की यथार्थता का स्वयं द्वारा मूल्यांकन है। यह स्वयं द्वारा मूल्यांकन हमेशा हर कार्य में, हर परिस्थिति में एक जैसा स्थिर नहीं रहता। यह बदलता रहता है। हम अपने आपको सामने वाले व्यक्ति, घटना, कार्य या परिस्थिति की तुलना में स्वयं को कैसे देखते हैं। उसी के अनुरूप हमारे आत्म–विश्वास पर न्यूनाधिक असर पड़ता है। वह भिन्न–भिन्न स्थिति में भिन्न–भिन्न हो जाता है।

1.3 आत्म–विश्वास और आत्म–हीनता

जीवन में संतोष, शांति व तृप्ति का रहस्य स्वयं को समझने में है। स्वयं की अन्तः भावनाओं को समझकर साहस के साथ समाज व समय के अनुरूप अपनी राह या पथ को खोजने में है। इसी से व्यक्ति में संतुष्टि और आत्म–विश्वास बढ़ता है। जीवन में अनेक बार भावनाओं में भी परिवर्तन और उतार–चढ़ाव आता है। उस समय आत्म–विश्वास भी स्थिर नहीं रहता। वस्तुतः यह हमारे जीवन का अंग है। यह इस बात का संकेत भी है कि भावना और परिस्थितियों के बीच संतुलन का

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वतःप्रयास हो रहा है। हम जागरूक होकर सलक्ष्य उन परिस्थितियों में परिवर्तन भी कर सकते है जो हमारे आत्म–विश्वास को कमजोर करते हैं।

अनेक बार व्यक्ति अपने आपको गौण कर अपनी क्षमता को पहचाने बिना केवल दूसरों की नकल करने लगता है। परिस्थितियों का गुलाम बन जाता है। स्वयं को समझने का प्रयास भी छोड़ देता है। इससे व्यक्ति की अपनी भावनाएं, इच्छाएं, कामनाएं, रूचियां दब जाती है। वह व्यक्ति को खालीपन का अहसास कराती है। इससे अशान्त होकर व्यक्ति उदासीन होने लगता है। दूसरों से भी कटने लगता है। यह स्थिति व्यक्ति के लिए अत्यन्त पीड़ादायक होती है। इससे व्यक्ति का आत्म–विश्वास कमजोर होता है। व्यक्ति का आत्मविश्वास जितना कमजोर होता है उतना ही वह स्वयं के प्रति भी लापरवाह होता चला जाता है। कुछ नया करने का उत्साह समाप्त हो जाता है। नवीनता को स्वीकारने की क्षमता क्षीण हो जाती है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अन्तःप्रेरणा व स्वयं की क्षमता के प्रति जागरूक रह कर उसके अनुरूप समायानुकूल व समाजोपयोगी लक्ष्य बनाना चाहिए।

इस प्रकार स्वयं के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण मानसिक रूप से स्वयं को निष्क्रिय बना सकता है। दूसरी ओर स्वयं के बारे में सकारात्मक दृष्टिकोण, सोच और धारणाएं व्यक्ति को सक्रिय और मिलनसार बनाने में सहायक होती हैं। परिस्थिति, तथ्य और मूल्य को सही दृष्टि से आकलन करने से ही आत्म–विश्वास को स्थिर व सुदृढ़ बनाया जा सकता है। आत्म–विश्वास केवल इस बात पर आधारित नहीं है कि व्यक्ति वर्तमान में कितना अच्छा है बल्कि उससे भी आगे वह इस बात पर निर्भर है कि उसमें अपनी अच्छाइयों को विकसित करने एवं बूराइयों से लड़ने की भावना कितनी मजबूत है। वह कितना अच्छा बनना चाहता है।

जिन व्यक्तियों का आत्म–विश्वास सुदृढ़ बना रहता है उनके जीवन में संभावनाओं के द्वार खुले रहते हैं। इसी प्रकार उन व्यक्तियों के जीवन में विकास की संभावनाएं सीमित हो जाती है या अवरूद्ध हो जाती है जिनका आत्म–विश्वास कमजोर पड़ जाता है। वे हीनभावना से ग्रस्त हो जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन के किसी न किसी क्षेत्र में कमजोरी का अनुभव करता है एवं कुछ क्षेत्रों में अपने आपको सबल एवं सक्षम पाता है। हम अपने जीवन के सक्षम क्षेत्रों, अवसरों, परिस्थितियों, गुणों एवं मूल्यों के सम्यक् आकलन करने से अपने आत्म–विश्वास को स्थिर व सुदृढ़ बना सकते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1.4 आत्म–हीनता के दुष्परिणाम

संक्षेप में जो व्यक्ति स्वयं के गुण–दोषों का सकारात्मक मूल्यांकन नहीं करते, स्वयं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं रखते, सही धारणाएं नहीं बनाते हैं, उनके लिए –

1. दूसरों से सम्पर्क बनाना कठिन होगा।
2. सही निर्णय लेने और उसे क्रियान्वित करने में अनावश्यक समय और शक्ति बहुत लगेगी।
3. अपने आस–पास का वातावरण असुरक्षित और भयावह लगेगा।
4. दूसरों के द्वारा स्वयं की प्रशंसा को भी सही ढंग से लेने में कठिनाई होगी।
5. अधिकांश समय इस चिन्ता में ही गुजर जायेगा कि दूसरे व्यक्ति मेरे बारे में क्या सोचते हैं ?

1.5 आत्म विश्वास के सुपरिणाम

यदि हम स्वयं के गुणों का सकारात्मक मूल्यांकन करते हैं, दोषों को दूर करने के लिए स्वयं प्रयत्नशील हैं, स्वयं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण व सोच रखते हैं, तब –

1. स्वयं में जीवंतता, शक्ति, उत्साह और सामर्थ्य का अहसास होगा।
2. स्वयं की क्षमता में विश्वास होगा।
3. स्वयं में विश्वास रहेगा कि मैं समस्या आने पर उसका समाधान कर सकूंगा। अपने से जितना होगा उसमें कोई कसर नहीं रखूंगा।
4. हमारे पास दूसरों को देने के लिए बहुत कुछ होगा। अपनी प्रशंसा और प्रोत्साहन से अप्रभावित रह सकेंगे। अपना संतुलन बनाये रख सकेंगे।
5. हम दूसरों के सुझावों और प्रतिक्रियाओं को सुनने के लिए खुले रह सकेंगे एवं आलोचनाओं को भी सही ढंग से स्वीकार कर सकेंगे।

2.0 सुदृढ़ आत्म–विश्वास

अच्छा और सुदृढ़ आत्म–विश्वास होने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम पूर्ण हो गये हैं या विकास और परिवर्तन की कोई गुंजाइश नहीं है। इस स्थिति में भी त्रुटि हो सकती है, दूसरों की आलोचनाओं को

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सुनना पड़ सकता है, किन्तु ऐसे अवसरों पर वह निराश और हताश नहीं होता। इससे भी वह कुछ न कुछ सीखता है, आगे बढ़ने का प्रयत्न करता है।

सुदृढ़ आत्म–विश्वासी और कमजोर आत्म–विश्वासी की तुलनात्मक दृष्टि से विशेषताएं–

क्र.सं.	सुदृढ़ आत्म–विश्वासी	कमजोर आत्म–विश्वासी
1.	विनम्रता, अनुशासन और मर्यादाओं का आदर करना।	अहंकारी, उद्दण्ड और मर्यादाओं की अवहेलना करना, आग्रही होना।
2.	चरित्र की सुरक्षा करना।	झूठी इज्जत की चिन्ता करना।
3.	सुदृढ़ निर्णय।	भ्रम, असमंजसता व अनिर्णायकता ।
4.	दायित्वशील, जिम्मेदारी को स्वीकारना।	दूसरों को दोष देना।
5.	सबके हित की बात करना।	केवल अपने स्वार्थ की बात करना।
6.	आशावादी होना।	भाग्यवादी होना।
7.	दूसरों को समझने की कोशिश करना।	स्वयं के लिए दूसरों की परवाह न करना।
8.	सीखने की मनोवृत्ति।	'मैं जानता हूं।' की मनोवृत्ति।
9.	संवेदनशील, दूसरों की पीड़ा को समझना।	भावुकता, छोटी–छोटी बातों में अस्थिर और असंतुलित हो जाना।
10.	एकान्तप्रिय होना।	अकेलेपन का बोझ ढोना।
11.	वार्ता और संवाद स्थापित करना।	बहस और तर्क वितर्क करना।
12.	आत्मगुण अर्थात् स्वयं की योग्यता और क्षमताओं में विश्वास करना।	भौतिक साधन, धन आदि पर विश्वास करना।
13.	अन्तःप्रेरणा से प्रेरित होना।	बाह्य कारकों से प्रेरित।

उपरोक्त तालिका का उद्देश्य स्वयं को समझना है न कि स्वयं को दोषी मानना या अपराध बोध से ग्रस्त होना। यह जरूरी नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति में सभी लक्षण मिलते हों। व्यक्ति अपनी विशेषताओं को

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

समझकर, अच्छाइयों को विकसित करने का संकल्प ले कर और कमियों को सुधार कर आत्म–विश्वास को सुदृढ़ बना सकता है।

2.1 आत्म–विश्वास में अभिवृद्धि का उपाय

आत्म–विश्वास बढ़ाने का पहला चरण है – आत्मदर्शन। स्वयं को बार–बार देखने, अवलोकन करने अर्थात् प्रेक्षा से आत्म–विश्वास बढ़ता है। आत्म–विश्वास की सुदृढ़ता स्वयं की अच्छाइयों को समझने एवं उसके विकास की मानसिकता से पैदा होती है। इसके लिए अपने 'स्व' को जैसा है वैसा स्वीकार करना पहली आवश्यकता है। अर्थात् अपनी अच्छाइयों व कमजोरियों को स्वीकार करना। स्वयं को स्वीकार करने से जो अच्छाइयां हैं उनको विकसित करने का संकल्प एवं जो कमियां हैं उनको दूर करने का साहस पैदा होता है। हम दूसरों के साथ भी ईमानदारी के साथ स्वयं को प्रस्तुत करने का साहस जुटा लेते हैं। इससे हमें अपने बारे में अधिक से अधिक जानने में सहयोग मिलता है।

अपने आपको जानना वास्तव में इतना आसान नहीं है जितना हम सोचते हैं। हम समाज के साथ अन्तःक्रिया में झूठी अवधारणाएं पाल लेते हैं। दूसरों की अपेक्षानुसार अपनी कमजोरियों को छिपाकर 'जो नहीं है' उसको भी प्रदर्शित करना शुरू कर देते हैं। प्रदर्शन और यथार्थ में दूरी बढ़ती चली जाती है। केवल दूसरों के मानदण्ड पर खरा उतरने के प्रयास से भीतर एक खालीपन महसूस होता है। अनुभव होता रहता है कि मैं जिसे चाहता हूं, वह नहीं कर पा रहा हूं। यह स्थिति अत्यन्त पीड़ादायक व असंतोष को उत्पन्न करने वाली होती है। किन्तु इस स्तर को स्वयं की तटस्थ प्रेक्षा के अभ्यास द्वारा तोड़ा जा सकता है।

2.2 प्रेक्षा एवं प्रेक्षा के परिणाम

आत्म–विश्वास जीवन के अनेक क्षेत्रों या पक्षों की प्रेक्षा, दर्शन या अवलोकन से विकसित होता है। जैसे–जैसे हमारा आत्म–विश्वास सुदृढ़ होता जाता है वैसे वैसे हम हमारे पास जो भी उपलब्ध है, आन्तरिक या बाह्य उन सभी का सही आकलन कर पाने मे समर्थ होते जाते हैं। हम किसी एक क्षेत्र पर निर्भर नहीं रहते हैं। हम समग्रता से स्वयं को देखने, समझने व सही मूल्यांकन करने की कोशिश करते हैं। जैसे हमारे –

1. स्वयं के श्वास, शरीर, शक्ति के स्रोत, चैतन्य केन्द्र, आन्तरिक रंग (लेश्या), आदि।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. आन्तरिक मूल्य, सिद्धान्त, विश्वास, धारणाएं, भावनाएं आदि।
3. उपलब्धियां, मानसिक क्षमताएं, आर्थिक सम्पदा, भौतिक संसाधन आदि।
4. स्वयं एवं दूसरों की अपेक्षाओं की पूर्ति का सामर्थ्य, प्राप्त अवसर, संभावनाएं, कार्यक्षमता आदि।
5. सामाजिक सम्बन्ध, सहयोग, स्नेह, प्रोत्साहन, पुरस्कार आदि।

2.3 परिपूर्णता के प्रयास

आत्म–विश्वास की सुदृढ़ता में अभिवृद्धि के साथ व्यक्ति निम्नलिखित गुणों में परिपूर्ण बनने का सतत प्रयास करता हैं–

1. आत्म–ज्ञान (Self-Knowledge) – अपने आपको जानने का प्रयत्न करता है।
2. आत्म–विश्वास (Self-confidence) – अपनी क्षमता, योग्यता, सबलताओं पर विश्वास करता है।
3. आत्म–स्वीकृति (Self-acceptance) – अपनी अच्छाइयों को स्वीकार करता है। इससे हीनभावना दूर होती है तथा अपनी बुराइयों को भी साहस के साथ स्वीकार करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है।
4. आत्म–सम्मान (Self-respect) – अपनी अच्छाइयों का सम्मान करता है एवं उन्हें विकसित करने का प्रयत्न करता है। उनमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति एवं समय के नियोजन का प्रयत्न करता है।
5. आत्म–महत्त्व (Self-worth) – अपनी क्षमता, योग्यता व अच्छाइयों को महत्त्व देता है। उनकी उपयोगिता और सार्थकता को समझता है।
6. आत्म–अनुशासन (Self-descipline) –अपनी दुर्बलताओं और कमजोरियों को जीतने के लिए संघर्ष करता है। उनमें शक्ति व समय न लगे, इसके लिए विशेष अनुशासन करता है। योजनाबद्ध आगे बढ़ता है। उनमें सुधार का निरन्तर प्रयत्न करता है।
7. आत्म–संतुष्टि (Self-satisfaction) – स्वयं में संतुष्ट व प्रसन्न रहता है। अपने सामाजिक दायित्व एवं कर्तव्य के प्रति जागरुक रहता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.0 आत्म–विश्वास और अन्तर्दृष्टि

स्वयं में सुदृढ़ आत्म–विश्वास स्वयं की उपयोगिता और सार्थकता को समझने से पैदा होता है। जब तक हम स्वयं की उपयोगिता स्वयं नहीं समझेंगे तब तक आत्म–विश्वास गहरा और सुदृढ़ नहीं हो सकता। साथ ही अच्छे आत्म–विश्वास के लिए 'आन्तरिक प्रेरणा' का होना एवं उसे समझकर आगे बढ़ना अत्यन्त आवश्यक है। अन्तःप्रेरणा एवं भावनाओं को समझने के लिए अन्तदृष्टि का विकास अपेक्षित होता है।

किसी भी ज्ञानेन्द्रिय से परे की विषय वस्तु के बारे में सीधा ज्ञान या अन्तर्बोध को प्राप्त कर लेना अन्तर्दृष्टि या अन्तर्ज्ञान कहलाता है। इससे व्यक्ति अपने पूर्व अनुभव, वर्तमान ज्ञान, भावी कल्पना तथा बाह्य वातावरण सबको समग्रता से देखता है। जिससे उसे विषय वस्तु के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होता है। सामान्यतया अन्तर्ज्ञान इच्छानुसार नियन्त्रित की जाने वाली क्रिया नहीं है। यह शान्त, तटस्थ व एकाग्र चैतसिक अवस्था की परिणति है। समस्याओं का समाधान करने में इस क्षमता का बड़ा महत्त्व है। परिस्थितियों के सम्यक् आकलन व सम्भावनाओं के अनन्त द्वारों को उद्घाटित करने व समझने में अन्तर्दृष्टि बहुत उपयोगी होती है। अन्तर्दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति मुख्यतः सृजन धर्मा, अन्वेषक, भविष्यद्रष्टा, कलाकार और आविष्कारक होते हैं। वे स्वतन्त्र चेतना के धनी होते हैं। वे अपनी अन्तःप्रेरणाओं के निकट सम्पर्क में रहते हैं और शीघ्र ही निष्कर्षों पर पहुंच जाते हैं। ऐसे व्यक्ति समस्या का समाधान करने, नई विधियों को सीखने में कुशल होते हैं। वे अपनी ऊर्जा का उपयोग उत्सहपूर्वक और सही ढंग से सही कार्य के लिए करते हैं। अन्तर्दृष्टि के उद्घाटन से व्यक्ति के दृष्टिकोण में आमूल–चूल सकारात्मक बदलाव आता है।

3.1 अन्तर्दृष्टि और प्रेक्षाध्यान

अन्तर्दृष्टि का व्यक्ति के चेतना स्तर एवं मनःस्थिति से बहुत गहरा सम्बन्ध है। चेतना जितनी विशुद्ध होगी और मन जितना एकाग्र होगा अन्तर्दृष्टि का स्तर उतना ही विकसित होगा। पानी के तल को निर्मल और स्थिर पानी में ही देखा जा सकता है। मैले और हिलते पानी में पानी का तल नहीं देखा जा सकता है। ठीक इसी तरह कषाय/संवेगों से मलिन और मन की चंचलता से अस्थिर चेतना में अन्तर्दृष्टि का विकास नहीं होता। प्रेक्षाध्यान के नियमित अभ्यास द्वारा अन्तर्दृष्टि का विकास सहज एवं सरलता से हो सकता है। प्रेक्षाध्यान में विशेषकर चैतन्य केन्द्र की प्रेक्षा से व्यक्ति अपने संवेग/कषायों को

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिष्कृत कर व मन को एकाग्र कर चेतना की अतीन्द्रिय क्षमताओं को जगा सकता है।

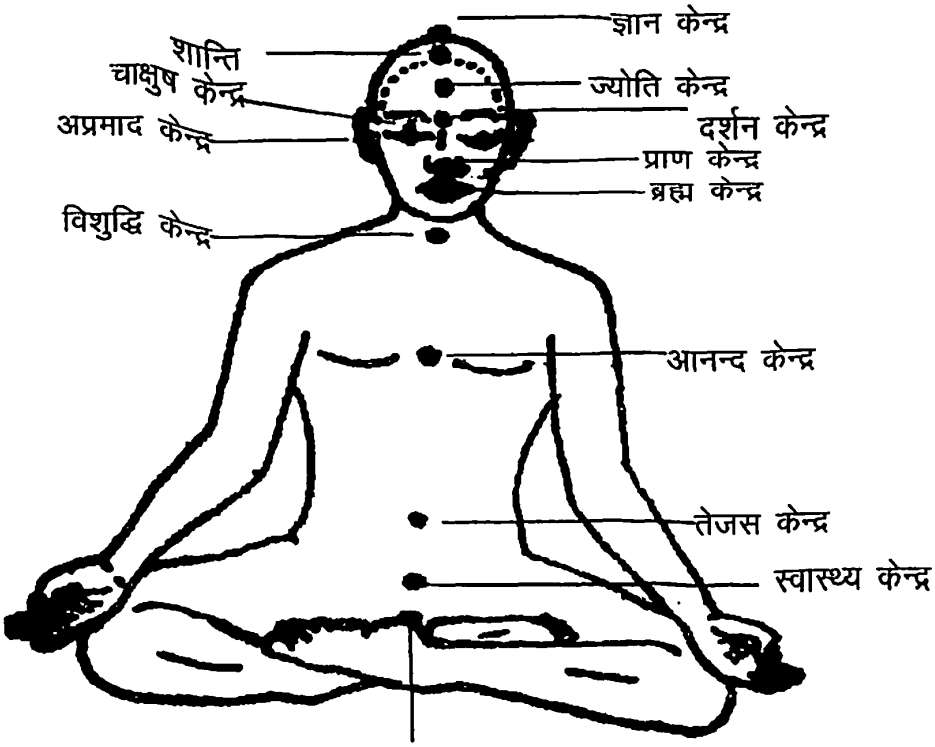

चित्र 9.1 चैतन्य केन्द्रों की स्थिति

चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा में हम शरीर में अवस्थित तेरह प्रमुख केन्द्रों पर (देखें चित्र 9.1) अपने चित्त को केन्द्रित करते हैं। वहां के सम्पूर्ण क्षेत्र पर चित्त को फैलाते हैं तथा वहां होने वाले कम्पन, प्रकम्पन, संवेदन आदि को राग–द्वेष रहित होकर तटस्थ भाव से देखते हैं। यह नियम है कि जहां चित्त को केन्द्रित कर ध्यान किया जाता है वह स्थान सक्रिय, जागृत और सन्तुलित होने लगता है। अतः इस प्रक्रिया से हमारा चित्त भी निर्मल होता है। एकाग्रता भी पुष्ट होती है। चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा से भावों में निर्मलता कैसे आती है ? इसको वैज्ञानिक दृष्टि से सरलता से समझा जा सकता है।

3.1 चैतन्य केन्द्र और आधुनिक विज्ञान

चैतन्य केन्द्र शरीर के महत्त्वपूर्ण स्थानो में स्थित है। उन महत्त्वपूर्ण स्थानों का सम्बन्ध आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से हमारे शरीर के स्नायु तंत्र और ग्रन्थि तन्त्र से है। ये दोनों ही तन्त्र प्रमुख रूप से

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शरीर के समस्त क्रिया–कलापों का नियमन व समन्वय करते हैं। इसी से हमारा शरीर एकरूप होकर कार्य करता है। दोनों तन्त्रों में प्रगाढ़ सम्बन्ध है। स्नायु तन्त्र विद्युत प्रवाह एवं रासायनिक स्रावों के माध्यम से पूरे शरीर को नियन्त्रित करता है। दूसरी और ग्रन्थि तन्त्र की ग्रन्थियां द्वीपों की तरह अलग–अलग बिखरी हुई हैं। (देखें चित्र 9.2) इनका स्राव सीधे रक्त में मिलकर शरीर के विकास, चयापचय, प्रजनन आदि अनेक महत्त्वपूर्ण गतिविधियों को प्रभावित करते हैं। इसके साथ ही ये स्राव मानसिक व भावनात्मक निर्मलता और मलिनता को भी बहुत गहरे तक प्रभावित करते हैं।

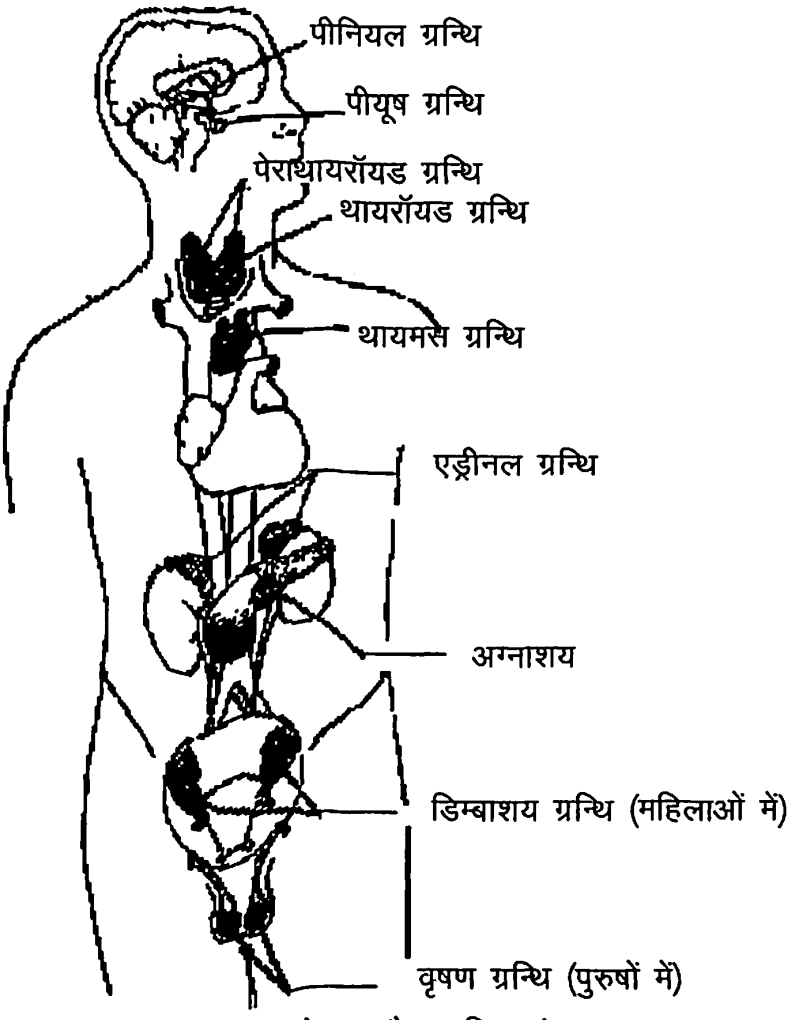

चित्र 9.2 चैतन्य केन्द्र और ग्रन्थि तंत्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.3 अनिष्ट भाव एवं गोनाड्स ग्रन्थि

व्यक्ति में फूहड़ विचार, आक्रामक भाव और समाज विरोधी रूझान एक विशेष अन्तःस्रावी ग्रन्थि के स्राव (Harmone) द्वारा अभिव्यक्त होते हैं। यह सुविदित तथ्य है कि क्रूर अपराधियों में गोनाड्स ग्रन्थि से टेस्टोस्टीरोन स्राव अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है। अधुनातन अध्ययन से यह भी पता चला है कि अपराधियों की ओर से वकालात करने वाले पुरुष वकीलों में भी इस स्राव का उत्पादन सामान्य से अधिक मात्रा में पाया गया।

जैम्स् डेब्स, जार्जिया स्टेट्स युनिवर्सिटी के मनोवैज्ञानिक ने साठ वादी वकीलों (Trial Lawyer's) के लार में टेस्टोस्टीरोन स्राव की मात्रा का मापन किया। उन्होंने वादी वकीलों (Trial Lawyer's) में भी सामान्य वकीलों अपेक्षा से इस स्राव की मात्रा को अधिक पाया। विभिन्न व्यवसाय के पुरुषों में टेस्टोस्टीरोन स्राव की मात्रा की तुलना करने पर वकील एवं अभिनेता वर्ग के पुरुषों में यह मात्रा अधिक पाई गई। पादरियों में इसकी मात्रा सबसे कम रही। डेब्स के अनुसार अधिक स्राव का लक्षण प्रवंचना व प्रदर्शन से संबंधित व्यवसाय के कारण हो सकते हैं। अतः इसकी अधिक मात्रा उस व्यवसाय से संबंधित सदस्यों में प्रदर्शित हो रही हैं। उग्र आपराधिक महिलाओं में भी इस स्राव का स्तर सामान्य महिलाओं से अधिक पाया गया।[1]

इस प्रकार भीतरी आवेग, आवेश, वृत्ति, वासना, आक्रामकता, क्रूरता, घृणा, भय आदि मलिन भाव और संवेग ग्रन्थियों के स्रावों के माध्यम से शरीर में प्रकट होते हैं। ये स्राव न केवल मलिन भावों को उत्पन्न करते हैं अपितु उनकी पूर्ति के अनुरूप प्रवृत्ति या व्यवहार (सदाचार या अनाचार) के लिए भी बाध्य करते हैं। प्रवृत्ति से पुनः वृत्ति अर्थात् संवेग पुष्ट होते हैं। यह एक विषाक्त चक्र बन जाता है – वृत्ति से प्रवृत्ति, प्रवृत्ति से वृत्ति का पोषण और पुनः पुनः आवृत्तियां।

बाह्य प्रतिकूल या अनुकूल घटनाएं आन्तरिक भावों या संवेगों को जगा देती हैं। या आन्तरिक संस्कारों के कारण भी संवेग या भाव जाग जाते हैं। इनके अत्यधिक दबाव से अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव असंतुलित हो जाते हैं। इससे व्यक्ति का दृष्टिकोण और विचार भी नकारात्मक हो जाता है। वृत्ति–प्रवृत्ति और पुनरावृत्ति के विषाक्त चक्र के परिणामस्वरूप व्यक्ति में अपने जीवन के उज्ज्वल पक्षों को देख पाने की क्षमता प्रभावित होती है। हीनभावना व निराशा के भाव बढ़ते हैं।

---

[1] Science Today, June 1991 "Event Horizon" Testing Time

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आचरण और व्यवहार में कुसमायोजन की संभावना बढ़ती है। अंततः व्यक्तित्व विखण्डित हो जाता है।

3.4 विवेक चेतना और अन्तर्दृष्टि

वृत्ति–प्रवृति और पुनरावृत्ति के विषाक्त चक्र को तोड़ना सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास, समायोजित व्यवहार और सदाचार से परिपूर्ण नैतिक जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य विलक्षण और अद्वितीय प्राणी है। उसके पास विवेक चेतना है। युक्ति संगत विचार चेतना है। इससे वह इस विषाक्त चक्र को तोड़ सकता है। इन वृत्तियों को सृजनात्मक दिशा में मोड़ सकता है। वह उच्चतर मापदण्ड और मूल्यों का सृजन कर सकता है। व्यक्ति अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के संतुलन द्वारा अपनी उस सुप्त विवेक चेतना और अन्तर्दृष्टि को जागृत कर सकता हैं जो अन्ततः सकारात्मक दृष्टिकोण और आत्म–विश्वास को विकसित कर सुदृढ़ बना सकते हैं।

4.0 अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का संतुलन व दर्शन केन्द्र प्रेक्षा

दर्शन केन्द्र अन्तर्दृष्टि के जागरण का विशिष्ट केन्द्र है। इसका क्षेत्र दोनों भृकुटियों के बीच मस्तिष्क के भीतरी तरफ आगे से पीछे तक फैला हुआ है। प्रेक्षाध्यान में इसका संवादी महत्त्वपूर्ण स्थान पिट्युटरी ग्रन्थि को माना गया है। पिच्युटरी ग्रन्थि के महत्त्व को इस बात से समझ सकते हैं कि यह अन्य सभी ग्रन्थियों को, जो मस्तिष्क के नीचे, शरीर के अन्यान्य भागों में अवस्थित हैं, उनको नियन्त्रित करती है। नीचे की ग्रन्थियों में प्रमुख रूप से एड्रीनल और गोनाड्स की अति सक्रियता से अनिष्ट व मलिन भावनाओं का दबाव बढ़ता है और अनिष्ट भावना से पुनः ग्रन्थियों को अपने कार्य के लिए अर्थात् स्राव छोड़ने के लिए (देखें चित्र 9.3) ऊपर की ग्रन्थि पिट्युटरी (पियुषग्रन्थि) का आदेश प्राप्त करना होता है। इस आदेश के अनुरूप स्राव होने पर

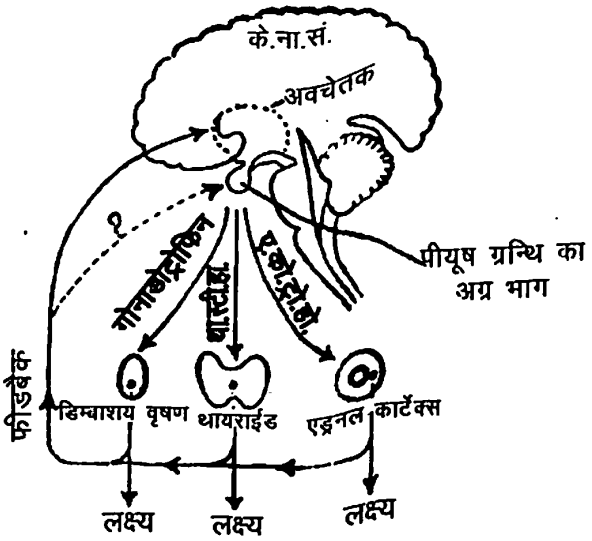

चित्र : 9.3 फीडबैक सिस्टम

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उसकी सूचना पिट्युटरी ग्रंथि तक पुनः पहुंचती है। इसे फीड बैक सिस्टम (पुनः पोषण पद्धति) कहते हैं। इसी पद्धति के द्वारा नीचे की ग्रन्थियां अपने कार्यों के अनुरूप स्राव छोड़ने के लिए ऊपर की ग्रन्थियों पर निर्भर रहती है। ऊपर की ग्रंथि यदि शक्तिशाली है तो नीचे की ग्रन्थियों की अनावश्यक मांगों को अस्वीकार कर ग्रन्थि तंत्रीय असंतुलन से व्यक्ति को बचा सकती है। दर्शन केन्द्र की प्रेक्षा द्वारा ऊपर की ग्रन्थि पिट्युटरी को शक्तिशाली बनाया जा सकता है। इससे नीचे की ग्रन्थियों पर मलिन भावनाओं का अनावश्यक भार नहीं पड़ता। ग्रन्थि तन्त्र का संतुलन स्थापित होता है। अन्तदृष्टि का जागरण होता है। सकारात्मक भाव और सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होते हैं। आत्म–विश्वास सुदृढ़ बनता है।

4.1 प्रयोग–प्रविधि

ध्यान की मुद्रा। महाप्राण ध्वनि। कायोत्सर्ग। अब चित्त को दर्शन केन्द्र पर केन्द्रित करें। वहां पर होने वाले कम्पन, प्रकम्पन, संवेदन, दबाव आदि का अनुभव करें। केवल देखें। ज्ञाता–द्रष्टा भाव बनाये रखें। चित्त को आगे से पीछे तक फैलाएं। पूरे भाग का अनुभव करें। अनुभव करें – आत्म–विश्वास बढ़ रहा है। (प्रतिदिन यह अभ्यास प्रातः और सांयकाल पांच मिनट अवश्य करें) तीन बार महाप्राण ध्वनि के साथ प्रयोग सम्पन्न करें।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

10 भावात्मक विकास और भावात्मक स्वास्थ्य

रूपरेखा

1.0 भावात्मक विकास

1.1 भावात्मक विकास और अनुसंधान

2.0 भावात्मक बुद्धि (**Emotional Intelligence**)

2.1 स्व–जागरूकता

2.2 मनोदशाओं का प्रबन्धन

2.3 अन्तःप्रेरणा

2.4 संवेग नियंत्रण

2.5 पारस्परिक सौहार्द, सम्पर्क एवं सम्प्रेषण

3.0 संवेग–प्रबन्धन

3.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व

4.0 भावात्मक रुग्णता

4.1 क्रोध

4.2 मान

4.3 माया

4.4 लोभ

5.0 भावात्मक स्वास्थ्य और प्रेक्षाध्यान

5.1 भावात्मक स्वास्थ्य और स्वस्थ आभामण्डल

5.2 शुभ भाव और लेश्याध्यान

5.3 लेश्याध्यान : रंगों का ध्यान

6.0 प्रयोग का अभ्यास

6.1 प्रयोग प्रविधि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

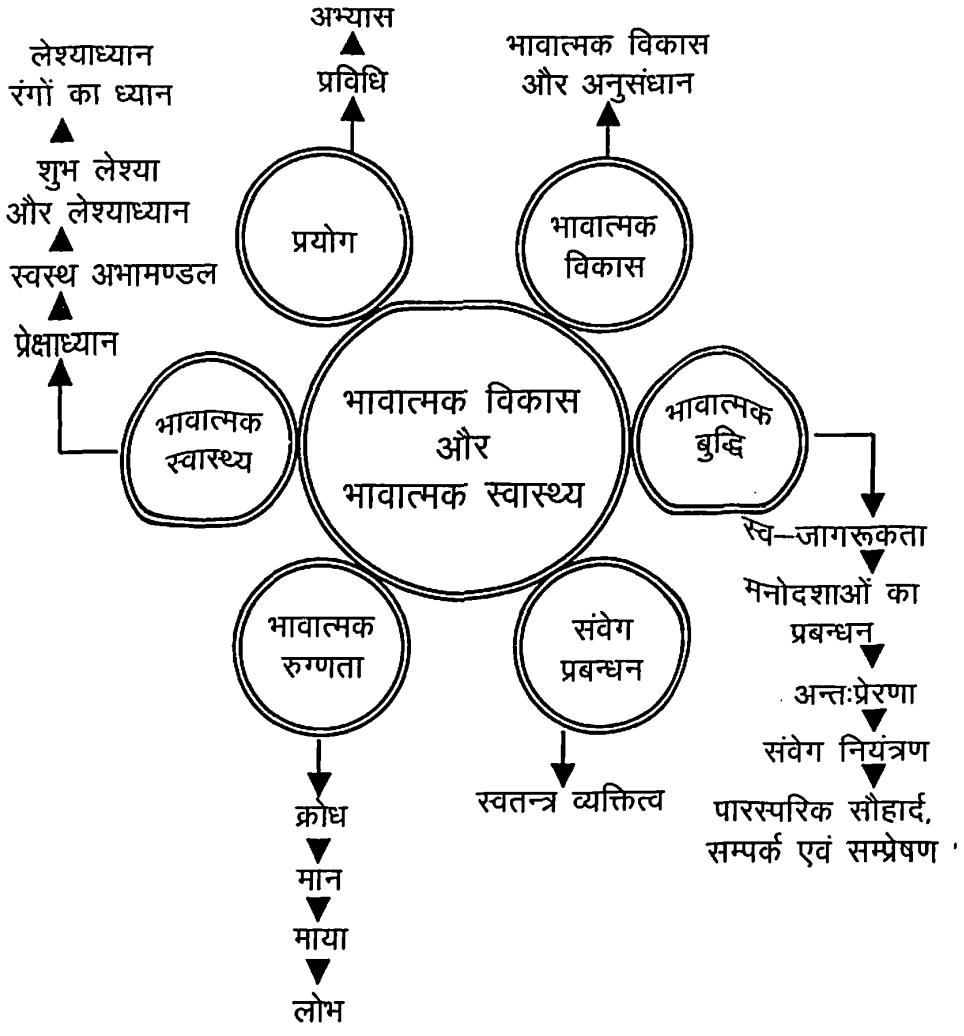

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

10 भावात्मक विकास और भावात्मक स्वास्थ्य

1.0 भावात्मक विकास

1980 के दशक के आस–पास यह माना जाता था कि जीवन में सफलता के लिए सर्वाधिक योगदान बौद्धिक विकास का होता है। मनोवैज्ञानिक बौद्धिक विकास को मापने के लिए एक विशेष शब्द का प्रयोग करते हैं – बुद्धि लब्ध्यांक (Intelligence Quotient)। किन्तु आज इस धारणा में आमूल–चूल परिवर्तन हो गया है। आज मनोवैज्ञानिक यह मानने लगे हैं कि जीवन में सफलता हेतु बौद्धिक विकास की भूमिका मात्र 20 प्रतिशत ही है। 80 प्रतिशत भूमिका भावात्मक विकास की है। मनोवैज्ञानिकों ने इसे एक नया नाम दिया है – भावात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence)।

1.1 भावात्मक विकास और अनुसंधान

1960 की बात है एक मनोवैज्ञानिक वाल्टर माइकल (Walter Mischal) ने स्टेनफोर्ड युनिवर्सिटी परिसर में स्थित प्रीस्कूल (नर्सरी) के 4 वर्षीय बच्चों से मिले। उन्होंने बच्चों से कहा कि अभी तुम्हें एक चॉक़लेट दी जायेगी। जो बच्चा 20 मिनट तक उस चॉकलेट को नहीं खायेगा। प्रतीक्षा करेगा। उसे एक और चॉकलेट मिलेगी। कुछ बच्चों ने तुरन्त पहली चॉकलेट खा ली। कुछ बच्चों ने 20 मिनट का इन्तजार किया और दूसरी चॉकलेट प्राप्त की। दोनों ही प्रकार के बच्चों के दो वर्ग बनाए गए उनका वर्षों तक अध्ययन किया गया। जब वे युवा हुए तो यह पाया गया कि द्वितीय वर्ग के बच्चे अपने लक्ष्य के प्रति अधिक धैर्यवान थे। सामाजिक रूप से अधिक सक्षम व दृढ़ थे। जीवन में आने वाली बाधाओं और निराशाओं का सामना अच्छे ढंग से कर पा रहे थे। प्रथम वर्ग के बच्चे जो एक चॉकलेट से ही संतुष्ट हो गये। जिनमें धैर्य और इन्तजार का अभाव था, वे अधिक जिद्दी थे। वे असमंजसता और अनिर्णायकता की स्थिति में पाये गये। वे तनाव से भी ग्रस्त थे। दोनों ग्रुप के बच्चों में जो अन्तर है वह वास्तव में भावात्मक बुद्धि के कारण है। इसे हम भावात्मक विकास या भावात्मक प्रतिभा भी कह सकते हैं।

2.0 भावात्मक बुद्धि

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार भावात्मक बुद्धि मुख्य रूप से निम्नलिखित तत्वों से निर्मित होती है –

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2.1 स्व–जागरूकता (Self-awareness)

जो व्यक्ति अपने प्रति जागरूक होता है, स्वयं का निरीक्षण करता है, अपने भावों को समझता है, वह उसमें परिवर्तन करने में भी सक्षम हो जाता है। स्वयं के प्रर्ति जागरूकता, भावात्मक परिष्कार, भावात्मक विकास एवं भावात्मक संतुलन का आधारभूत सूत्र है।

2.2 मनोदशाओं का प्रबंधन (Mood-management)

जीवन एक संघर्ष है। किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति या इच्छाओं की आपूर्ति में अनेक बाधाएं आती हैं। जीवन में उतार–चढ़ाव भी आते रहते हैं। उस समय हमारे भीतर कितनी समता रह पाती है? कितना संतुलन रह पाता है? यही वह परीक्षा की घड़ी भी होती है। इससे ही हमारे सुदृढ़ चरित्र का पता लगता है। जो व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों का वस्तुपरक सकारात्मक दृष्टिकोण से सतत जागरूक रहकर मूल्यांकन करता है वह जीवन में आने वाली चुनौतियों को सहज रूप से स्वीकार कर उससे निपटने में सक्षम हो जाता है। सत्संग, एकान्तवास, ध्यान, कायोत्सर्ग आदि इसमें बहुत सहायक सिद्ध होते हैं। इनसे व्यक्ति दुश्चिन्ता, अवंसाद अथवा निराशा से उबर जाता है।

2.3 अन्तःप्रेरणा (Self-motivation)

जब कोई व्यक्ति बूरा काम करता है तो उसकी चेतना उसे रोकने की कोशिश करती है किन्तु वह उसे देखा–अनदेखा कर देता है। यह माना जाता है कि हर व्यक्ति एक निश्चित उद्देश्य को लेकर इस पृथ्वी पर जन्म लेता है। वह अपने इस उद्देश्य का ज्ञान स्वयं के निरन्तर सम्पर्क एवं अन्दर से आने वाली स्वतः स्फूर्त प्रेरणाओं को सुन कर ही_कर सकता है। भीतर से आने वाली प्रेरणाएं किसी भी बड़ी उपलब्धि का सबसे बड़ा आधार होती है। प्रत्येक बड़ी उपलब्धि के लिए स्पष्ट लक्ष्य एवं निरन्तर आशावादी दृष्टि की आवश्यकता होती है। वह व्यक्ति को अन्तःप्रेरणा से उपलब्ध होती रहती है। ऐसा व्यक्ति यह अनुभव करता है –"मुझे यह करना है। और यह मैं कर सकता हूं।" वह अपनी हर असफलता से सीखता है, रास्ता खोजता है एवं आगे बढ़ जाता है।

2.4 संवेग–नियंत्रण (Impulse-control)

बीज से फल प्राप्ति तक व्यक्ति को धैर्य रखना होता है। सतत पुरुषार्थ द्वारा बीज से निकले अंकुरों का सिंचन, पल्लवन, पोषण तथा सुरक्षा करनी होती है। आवेग और आवेश, विकार और वासनाएं, अहंभाव व कुटिल व्यवहार, लोभ और लालच वर्षों की तपस्या को क्षण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भर में राख कर के रख देते हैं। अधीरता ला देते हैं। अतः स्वयं के संवेगों का जागरूकता के साथ परिष्कार, रेचन, मार्गान्तरीकरण व उदात्तीकरण के द्वारा उन पर नियन्त्रण कौशल को विकसित किया जा सकता है। यह जीवन में सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

2.5 पारस्परिक सौहार्द, सम्पर्क एवं सम्प्रेषण (Pepole Skills)

पारस्परिक सौहार्द एवं सम्पर्क बौद्धिक दक्षता में चार चांद लगा देते हैं। बहुत सारे बौद्धिक क्षमता से युक्त व्यक्ति जब तकनीकी कठिनाई का अनुभव करते हैं, वे दूसरों से सहयोग मांगते हैं तब उन्हें सहयोग कम प्राप्त होता है। परन्तु उनमें से कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें तुरन्त सहायता मिल जाती है। क्योंकि ऐसे लोग सम्पर्क करने व सम्बन्धों को बनाये रखने में निपुण होते हैं। फिर उनकी बौद्धिक क्षमता (I.Q.) कितनी भी क्यों न हो। भावात्मक रूप से विकसित व्यक्ति की एक अलग ही पहचान होती है।

3.0 संवेग–प्रबन्धन

संवेग एक जटिल भावात्मक प्रक्रिया है। भाव संवेग की ही पूर्व अवस्था होती है। भावों में उफान के पश्चात् संवेग की अवस्था आती है। संवेग बाह्य परिस्थिति या अन्तः मनस्थिति के प्रति तीव्र प्रतिक्रियाएं हैं। इसके कारण व्यक्ति में बाह्य एवं आन्तरिक दोनों प्रकार के परिवर्तन होते हैं। यह कहा जाता है कि क्रोध हमारी इच्छाओं में रूकावट के कारण होने वाली प्रतिक्रिया है। भय हमारी परिणामों के प्रति आशंकाओं की प्रतिक्रिया है। सहानुभूति एवं प्रेम के अभाव की प्रतिक्रिया दुःख है। खुशी, आनन्द, प्रसन्नता सब सकारात्मक प्रतिक्रियाएं हैं। संवेगों की तीव्र प्रतिक्रियाओं के कारण व्यक्ति के भाव जगत् में असंतुलन पैदा हो जाता है। इससे सम्पूर्ण व्यक्तित्व प्रभावित होता है। व्यक्ति अपनी संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति या प्रबन्धन अनेक रूपों में कर अपने आपको शान्त, हल्का व तनावमुक्त करने का प्रयास करता है। जैसे –

1. संवेगों की शारीरिक या वाचिक अभिव्यक्ति करना – रोना, चिल्लाना, डांटना, अपने शरीर को हिलाना आदि।
2. संवेगों को नियन्त्रित कर लेना, बाह्य अभिव्यक्ति को रोक लेना, उससे तादात्म्य स्थापित नहीं करना।
3. सही जगह पर सही तरीके से हानि रहित रूप में रेचन करना। जैसे–खेलकूद व मनोरंजन द्वारा।
4. सृजनात्मक कार्य में अथवा रचनात्मक क्रियाओं में रूपान्तरित कर देना। जैसे– कला, साहित्य सृजन आदि में।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.1 स्वतन्त्र व्यक्तित्व

'सा विद्या या विमुक्तये' विद्या वह ही है जो व्यक्ति को मुक्त करे, स्वतन्त्र बनाये। भावात्मक रूप से संतुलित या विकसित व्यक्ति का व्यक्तित्व ही स्वतन्त्र होता है। ऐसे व्यक्ति प्रियता–अप्रियता, पसन्द–नापसन्द से अप्रभावित होकर, मुक्त होकर स्वतन्त्र निर्णय करते हैं। वे अपने भावों को ठीक से पहचान लेते हैं और दूसरों के भावों को भी जान लेते हैं। सहयोग, सद्भाव एवं पारस्परिक संबंधों को महत्त्व देते हैं। उनके निर्णयों में स्वयं के सिद्धान्त एवं मूल्यों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। उनमे पारस्परिक संबंधों को निभाने एवं नये संबंधों को बनाने की अद्भुत क्षमता होती है।

स्वतन्त्र व्यक्तित्व की निम्नलिखित मुख्य विशेषताएं होती हैं –

1. वे घटनाओं एवं व्यक्तियों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं के प्रति जागरूक रहते हैं।
2. वे विभिन्न संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं में सूक्ष्म अन्तर कर सकते हैं।
3. वे संवेगों की शारीरिक प्रतिक्रियाओं को भी पहचान सकते हैं।
4. वे अपने अतीत के अप्रिय संवेगों के अनुभवो से सीखते रहते हैं एवं वर्तमान जीवन में उनके प्रभावों को सीमित कर सकते हैं। उनसे अप्रभावित रह सकते हैं।
5. वे अपनी अच्छी एवं बूरी भावनाओं को स्वीकार कर सकते हैं।
6. वे अपनी भावनाओं का उत्तरदायित्व स्वयं पर लेते हैं, दूसरों पर दोषारोपण नहीं करते हैं।
7. वे अपनी भावनाओं को विभिन्न सकारात्मक तरिकों से अभिव्यक्त करने में सक्षम होते हैं।

4.0 भावात्मक रुग्णता

क्रोध, मान, माया व लोभ इन चारों को आध्यात्मिक या आन्तरिक दोष कहा गया है। ये चारों ही भादात्मक रुग्णता के मूल कारण भी है। भगवान महावीर ने कहा है –

कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणयनासणो ।
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्व विणासणो।। दसवै. 8/37

क्रोध प्रीति को नष्ट करता है। मान विनम्रता/शिष्टाचार को नष्ट करता है। माया/कुटिलता मित्रता को नष्ट करती है। तथा लोभ/लालच प्रीति, शिष्टाचार और मैत्री – सभी को नष्ट कर देता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4.1 क्रोध

सामान्य जीवन व्यवहार में भी देखें तो अधिक क्रोध, आवेश या आवेग से दो बड़े नुकसान होते है। पहला संबंधों में दरारे पड़ जाती है। जो व्यक्ति आवेश–आवेग में अपने आप पर नियन्त्रण नहीं रख पाते हैं, वे सामने वाले व्यक्ति को जो नहीं कहा जाना चाहिए, वह भी कह देते हैं। यह भान उनको तभी होता है जब वे पुनः शान्त होते हैं। उसके बाद उन्हें अनेक बार पश्चाताप भी होता है कि मैंने ऐसा क्यों कहा ? नहीं कहता तो अच्छा रहता आदि। किन्तु जब कमान से तीर निकल जाता है तो वह लोटकर नहीं आता। वैसे ही जब जबान से अवांच्छित शब्द निकल जाते हैं तो वे भी लौटकर नहीं आते। उनसे जो नुकसान होना होता है वह हो ही जाता है। इससे संबंधों में खटास पैदा हो जाती है। मधुरता समाप्त हो जाती है।

क्रोध से जो दूसरा नुकसान होता है, वह है सही निर्णय नहीं कर पाना। जब भी आवेग या आवेश में निर्णय लिया जाता है। उसमें कोई न कोई त्रुटि रह जाती है। क्योंकि आवेग और आवेश में सम्पूर्ण स्थितियों का समग्रता से आकलन नहीं हो पाता है। अतः भावात्मक स्वास्थ्य के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति अपने क्रोध पर नियन्त्रण करना सीखे।

4.2 मान

अहंकार से व्यक्ति की प्रतिष्ठा पर आंच आती है। जिन व्यक्तियों में अहंकार अधिक है उन व्यक्तियों को अनावश्यक उलझनों में उलझना पड़ता हैं। इससे लोग इन्हें तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। उससे दूर रहना ही पसन्द करते हैं। महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंश में लिखा है–

पूज्यपूजाव्यतिक्रमः बध्नाति श्रेयः।

सम्माननीय व्यक्तियों के सम्मान की अवहेलना करने पर श्रेयस् की उपलब्धि में बाधाएं आती हैं। जिसे जीवन में कुछ विशिष्ट उपलब्धि प्राप्त करनी है उसे अंहकार को दूर करना होगा। व्यक्ति कितना भी बड़ा क्यों न हो, वह मनुष्य ही है, देवता नहीं। अतः प्रत्येक मनुष्य को मनुष्य के समान ही आदर देना चाहिए। फिर वह चाहे छोटा हो या बड़ा। यदि व्यक्ति अहंकार से ग्रस्त है तो वह दूसरों को भी आदर नहीं दे पाता है। तुच्छ समझता है। इसका परिणाम यह होता है कि वह समाज में अकेला पड़ जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4.3 माया

जीवन का सम्पूर्ण व्यवहार सत्य पर चलता है। असत्य का सहारा व्यक्ति क्रोध,लोभ,भय या हास्यवश लेता रहता है। मायावी व्यक्तियों की विश्वसनीयता कम हो जाती है। माया, कुटिलता, ईर्ष्या, कपट विश्वास को कम करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को सरल सी बात कहने या स्वीकार करने में भी बहुत समय और शक्ति का अपव्यय करना पड़ता है । सत्य–निष्ठा व सत्यवादिता पर आंच आती है। इससे उन पर भरोसा कम होता है। लोग सोचते हैं–यह कह तो रहा है किन्तु पता नहीं, यह करेगा या नहीं। इससे इनका कोई सच्चा मित्र भी नहीं बन पाता है। उनकी मित्रता बनी रहनी भी कठिन है।

4.4 लोभ या लालच

जीवन में सिमित या संयमित इच्छाएं विकास का हेतु बनती है। एक भी असीमित इच्छा, एक साथ अनेक इच्छाएं और अनेक दिशागामी इच्छाएं विनाश का हेतु भी बन सकती हैं। जो व्यक्ति जीवन में सन्तुष्ट और सफल होना चाहते हैं उनके लिए अपनी इच्छाओं को समझकर उनका सीमाकरण करना, आवश्यक इच्छाओं की भी प्राथमिकता निर्धारित करना, अन्य को स्थगित (Postpond) करना आदि रणनीति अपनाना, जीवन में सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

एक साथ अनेक इच्छाएं एक साथ दिमाग पर दबाव डालती हैं तो व्यक्ति की शक्तियां बिखर जाती है। अतः अनावश्यक इच्छाओं का संयम शक्ति की सुरक्षा के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपाय है। जीवन में लक्ष्य बनाना एवं प्राप्त करना, वही कर सकता है जो अपनी इच्छाओं के बलाबल को समझ सकता है तथा संयम करना जानता है। हम सब जानते है कि नदी के जल का वेग इस बात पर भी निर्भर करता है कि उसके दोनों किनारों की दूरी कितनी है, अर्थात् नदी का पाट जितना अधिक चौड़ा होगा उतना ही उसका वेग कम होगा। जीवन में प्रगति की संभावना भी उतनी ही तीव्र होगी जितनी की व्यक्ति की इच्छाएं सीमित व एक दिशागामी होगी। ऐसा व्यक्ति अपनी शक्ति को एक दिशा में नियोजित भी कर सकेगा, जो सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं

कोई भी व्यक्ति एक साथ एक ही समय में 20–30 काम नहीं कर सकता। जितने भी बड़े व्यक्ति है, यदि उनके पास सैंकड़ो काम है, तब भी वे उनके लिए व्यवस्थित रूप से अलग–अलग समय निर्धारित करते हैं। उस समय दूसरी सभी इच्छाओं को एक–तरफ करके सारी शक्ति उसी में लगा देते हे। जैसे आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी प्रत्येक कार्य के लिए एक निश्चित समय निर्धारित करते हैं। उस समय कार्य हो गया तो

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ठीक है, अन्यथा उसका दिमाग पर बोझ नहीं रखते। कार्य सम्पन्न होने पर वे अपने आपसे कहते हैं– निःशेषम् ! आज के दिन इस कार्य के लिए कुछ भी शेष नहीं बचा है। ऐसा कहकर अपने आपको हलका रखते हैं। अनेक कार्यों से निपटने का यह भी एक सुन्दर उपाय है।

5.0 भावात्मक स्वास्थ्य और प्रेक्षाध्यान

भौतिकतावादी जीवनशैली और विलासमय जीवन पद्धति से भावात्मक अस्थिरता और मनोविकारों की निरन्तर वृद्धि हो रही है। तनाव, चिन्ता, भय, अवसाद, निराशा, कुण्ठा, मिर्गी, आक्रामकता, क्रूरता, ईर्ष्या, चिड़चिड़ापन आदि समस्याएं बेतहाशा बढ़ रही है। इससे समाज भी रुग्ण हो रहा है। समाज में भी हिंसा, आतंक, अपराध, बलात्कार, चोरी, भ्रष्टाचार आदि बढ़ रहे हैं। वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री सभी इन समस्याओं से चिन्तित हैं। इनसे निपटने के लिए नित्य नये प्रयोग हो रहे हैं। औषधियों का निर्माण हो रहा है।

प्रेक्षाध्यान में भावात्मक स्थिरता या स्वास्थ्य के लिए अनेक प्रयोग सुझाए गए हैं। इनमें मुख्य रूप से लेश्याध्यान के सतत अभ्यास के द्वारा मनोकायिक विकारों एवं भावात्मक अस्थिरता पर नियन्त्रण के प्रमाण अनुसंधानों से सामने आये हैं। प्रेक्षाध्यान के अभ्यास करने वाले साधकों के व्यक्तिगत अनुभव भी इसकी पुष्टि करते हैं। उनके भावात्मक स्वास्थ्य में वृद्धि हुई है। विद्यार्थियों, पौढ़ लोगों एवं कैदियों पर किये गये विशेष अनुसंधान से यह बात सामने आयी कि इससे उनकी भावात्मक स्थिरता बढ़ी। व्यक्ति में भावात्मक स्थिरता जितनी अधिक होगी उसका व्यक्तित्व उतना ही अधिक सुदृढ़ होगा।

5.1 भावात्मक स्वास्थ्य और स्वस्थ आभामण्डल

प्रत्येक व्यक्ति के चारों ओर रश्मियों का एक वलय होता है। उसे आभामण्डल कहते हैं। अच्छे रंगों के ध्यान से हमारा आभामण्डल बदलता है। आभामण्डल के बदलने से लेश्या बदलती है। लेश्या परिवर्तन से भावधारा बदलती है। मानसिक दुर्बलता भी समाप्त होती है। व्यक्ति मानसिक और भावात्मक रूप से स्वस्थ बनता है। इसका पारिवारिक व सामाजिक स्वास्थ्य पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

हमारे भीतर अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के संस्कार और भाव होते हैं। अच्छे भाव जैसे– करुणा, मैत्री, प्रमोद, सरलता, विनम्रता आदि। इसके साथ बुरे भाव– क्रूरता, शत्रुता, द्वेष, माया, अहंकार, क्रोध आदि निषेधात्मक भाव भी होते हैं। जब व्यक्ति पर निषेधात्मक भाव हावी होते हैं तो व्यक्ति भावात्मक रूप से अस्वस्थ हो जाता है। वह स्वयं दुःखी बनता है। उसका मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है और

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मानसिक रूप से भी अस्वस्थ होने की संभावना बढ़ जाती है। अच्छे भाव पुष्ट होते हैं तो व्यक्ति भावात्मक रूप से भी स्वस्थ बनता है।

अच्छे भावों को पुष्ट कैसे करे ? बुरे भावों को क्षीण कैसे करें? इसके लिए हमें भावों के उद्‌गम स्थल एवं स्वरूप को समझना होगा। भावों के बीज हमारे स्थूल शरीर में नहीं है। वे हमारे भीतर गहरे में निहित हैं। सूक्ष्मतम शरीर (कार्मण शरीर) में हैं। चैतन्य की तरंगों के साथ भावों के बीज, कर्म या संस्कार मिलकर अध्यवसाय के रूप में आगे बढ़ते हैं तथा सूक्ष्म शरीर (तैजस् शरीर) के सम्पर्क में आते हैं। इन्हें यहां लेश्या कहते हैं। विज्ञान की भाषा में आभामण्डल कहते हैं। ये तरंगें रंगीन होती हैं। यहां वे भावधारा का रूप ग्रहण करते हैं। अच्छे भाव अच्छे और प्रशस्त रंगों मे प्रकट होते हैं, इन्हें शुभ लेश्या कहते हैं। इसकी अभिव्यक्ति स्वस्थ आभामण्डल के रूप में होती है।

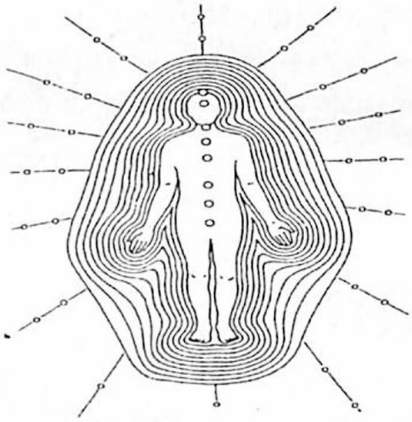

चित्र 10.1 स्वस्थ आभामण्डल

बुरे भाव बुरे रंगों और अप्रशस्त रंगों में प्रकट होते हैं। इसकी अभिव्यक्ति रुग्ण आभामण्डल के रूप में होती है।

लेश्या/भावधारा आगे चलकर स्थूल शरीर में उतरती है। वहाँ ग्रन्थितन्त्र में स्रावों के माध्यम से भाव/संवेग के रूप में उत्पन्न होते हैं। यहां ये भाव नाड़ी तन्त्र एवं मांसपेशी के माध्यम से मानसिक व शारीरिक प्रवृत्ति में परिणत हो जाते हैं। अशुभ भावों के हावी होने से भावात्मक व मानसिक अस्वास्थ्य बढ़ता है। शुभ भावों को पुष्ट करने से मानसिक व भावात्मक स्वास्थ्य प्राप्त होता है।

5.2 शुभ भाव और लेश्याध्यान

अच्छे भावों को पुष्ट करने के लिए लेश्या के सिद्धान्त को समझना होगा। लेश्या का सिद्धान्त है कि शुभ लेश्या के ध्यान से अशुभ लेश्या को बदला जा सकता है एवं शुभ लेश्या को पुष्ट किया जा सकता है। लेश्याध्यान रंगों का ध्यान है। चमकते हुए शुभ रंगों के

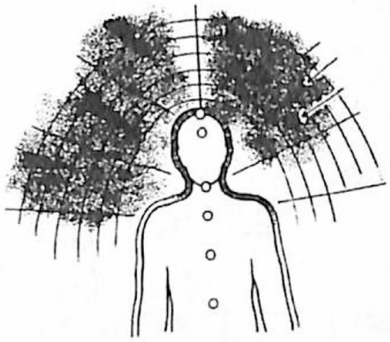

चित्र 10.2 रुग्ण आभामण्डल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ध्यान से अशुभ लेश्या, शुभ लेश्या में परिणत होने लगती है।

भावों को निर्मल एवं शुभ भावों को पुष्ट करने का सबसे सरल उपाय है – रंगों का ध्यान करना। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण उपाय है। प्रशस्त रंगों का ध्यान भावों को निर्मल बनाने में उपयोगी होता है। लाल, पीला और सफेद – ये रंग भाव शुद्धि के कारण हैं।

5.3 लेश्याध्यान : रंगों का ध्यान

रंग विद्युत चुम्बकीय तरंगें हैं (चित्र 10.3)। इनका हमारे शरीर, मन व संवेगों के साथ गहरा संबंध है। शारीरिक स्वास्थ्य और बीमारी, मन का संतुलन और असंतुलन, संवेगों में कमी और वृद्धि ये सब उन प्रयत्नों पर निर्भर करते हैं कि हम किस प्रकार के रंगों का समायोजन करते हैं और किस प्रकार हम रंगों से अलगाव या संश्लेषण करते हैं। उदाहरणतः नीला रंग कम होता है तो क्रोध अधिक आता है। नीले रंग के ध्यान से इसकी पूर्ति हो जाने से गुस्सा कम हो जाता है। श्वेत रंग की कमी होती है तो अशान्ति बढ़ती है, लाल रंग की कमी होने पर आलस्य और जड़ता पनपती है। पीले रंग की कमी होने पर ज्ञान तन्तु निष्क्रिय बन जाते हैं। ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग, दर्शन केन्द्र पर लाल रंग और ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का नियमित दस–दस मिनट ध्यान करने से क्रमशः आवेश शान्त, अन्तर्दृष्टि और मनोबल का विकास तथा ज्ञान तन्तु सक्रिय होते हैं। जिसकी परिणति भावात्मक एवं मानसिक स्वास्थ्य में होती है। व्यक्ति जब अरुण रंग का ध्यान करता है और तेजो लेश्या के स्पन्दन जागते हैं तब उसकी मन की दुर्बलता समाप्त हो जाती है। मन इतना शक्तिशाली हो जाता है कि कोई घटना घटे मन उससे टूटने से बच जाता है। घटना को रोका नहीं जा सकता, मन को टूटने से बचाया जा सकता है। पीले रंग के ध्यान से मन की प्रसन्नता, बौद्धिक विकास, प्रज्ञा का विकास तथा मस्तिष्क और नाड़ी तन्त्र सुदृढ़ बनता है। श्वेत रंग के ध्यान से उत्तेजना, आवेग, आवेश, चिन्ता, तनाव, वासना, क्रोध आदि शान्त होते हैं। पूर्ण शान्ति की अनुभूति होती है।

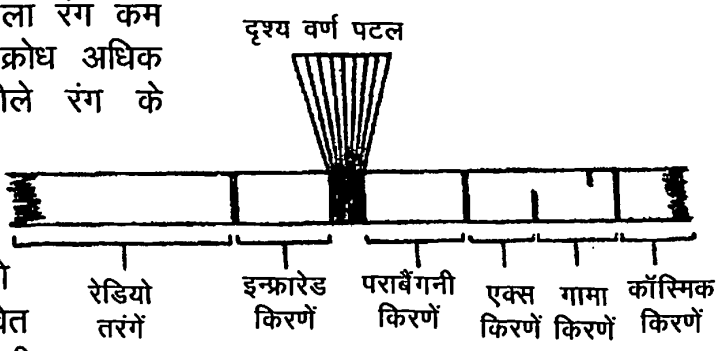

चित्र 10.3 रंग और विद्युत चुम्बकीय पटल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तालिका 10.1 चैतन्य केन्द्रों पर रंगों के (लेश्या) ध्यान की निष्पत्ति

केन्द्र	रंग	भावना/अनुभव
आनन्द	हरा	भावधारा की निर्मलता
विशुद्धि	नीला	वासनाओं का अनुशासन
दर्शन	अरुण	अर्न्दृष्टि का जागरण – आनन्द का जागरण
ज्ञान (चाक्षुष)	पीला	ज्ञानतंतु की सक्रियता (जागृति)
ज्योति	श्वेत	परम शान्ति – क्रोध, आवेश, उत्तेजनाओं की शान्ति

6.0 प्रायोगिक अभ्यास

प्रायोगिक अभ्यास प्रारम्भ करने से पूर्व आत्म–निरीक्षण करें कि मेरे भीतर कौनसी भावात्मक रुग्णता अत्यधिक प्रबल है ? यह कार्य अपने प्रति निरन्तर जागरुकता (Self-awareness) द्वारा करना पड़ेगा। यह निश्चित मान लें कि एक उम्र के बाद सामान्यतः आपको कोई सही सलाह देने नहीं आयेगा। आपका हित देखते हुए कोई भी आपकी कमियां बताने नहीं आयेगा। यदि कोई सलाह दे भी देगा तो भी उसे सही परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करना आसान नहीं होता है। ऐसी स्थिति में यदि कोई परिष्कार या विकास हो सकता है तो वह स्वयं के प्रति स्वयं की जागरुकता और आत्म–निरीक्षण से ही संभव हो सकता है। अतः हम स्वयं के विचारों, क्रियाओं, भावनाओं के प्रति निरन्तर जागरुक रहें जिससे आवश्यक संशोधन, परिवर्तन, संवर्द्धन होता रहे। अन्यथा हमें यह पता भी नहीं चल पायेगा कि आखिर मेरी गलती कहां रही ?

यदि आप समझते हैं कि मेरे भीतर कोई भी भावात्मक रुग्णता प्रबल नहीं है तो फिर सोचें कि मेरे कार्य क्षेत्र में प्रगति के लिए किस भावात्मक तत्व की विशेष आवश्यकता है। क्या आपको शान्ति, मानसिक संतुलन, धैर्य, मधुरता, सरलता या इच्छाओं के केन्द्रीकरण में से किसी की भी अत्यधिक अपेक्षा है ? उसका चुनाव करें। उसके अनुरूप लेश्याध्यान के प्रायोगिक अभ्यास का चुनाव करें। उसका निरन्तर प्रतिदिन 5–10 मिनट का अभ्यास छह महिने तक करें।

6.1 प्रयोग प्रविधि

किसी को क्रोध अधिक आता है। बैचेनी अधिक रहती है। सब कुछ होने पर भी मन अशान्त रहता है तो वह ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग का ध्यान करे।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ध्यानासन। महाप्राण ध्वनि। कायोत्सर्ग। अब अपने चित्त को ललाट के मध्य भाग ज्योति केन्द्र पर केन्द्रित करें। वहां पर चमकते हुए श्वेत रंग की कल्पना करें। जैसे पूर्णिमा का चाँद उग रहा है। उसकी श्वेत रश्मियां ज्योति केन्द्र पर गिर रही है। अब मन ही मन भावना करें – क्रोध शान्त हो रहा है..... (नौ बार), अब पूरे ललाट पर श्वेत रंग का अनुभव करें। पूर्ण शान्ति का अनुभव करें। महाप्राण ध्वनि (तीन बार) के साथ प्रयोग सम्पन्न करें।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11. लक्ष्य–निर्माण और लक्ष्य–प्राप्ति

रूपरेखा

1.0 लक्ष्य का महत्त्व
- 1.1 लक्ष्य पर अनुसंधान
- 1.2 लक्ष्य विहीनता के कारण
- 1.3 सफल व्यक्तित्व

2.0 लक्ष्य के प्रकार
- 2.1 अन्तिम लक्ष्य
- 2.2 दीर्घकालीन लक्ष्य
- 2.3 अल्पकालीन लक्ष्य
- 2.4 तत्कालीन लक्ष्य

3.0 लक्ष्य का मनोविज्ञान
- 3.1 लक्ष्य निर्माण और चेतन मन
- 3.2 लक्ष्य प्राप्ति और अवचेतन मन

4.0 अवचेतन मन से सम्पर्क
- 4.1 हमारा मस्तिष्क
- 4.2 मस्तिष्कीय तरंगे
- 4.3 दायां मस्तिष्क एवं अल्फा तरंगें।
- 4.4 अल्फा तरंगें एवं कायोत्सर्ग

5.0 लक्ष्य प्राप्ति और प्रेक्षाध्यान
- 5.1 अभिप्रेरणा
- 5.2 शिथिलीकरण
- 5.3 एकाग्रता
- 5.4 साक्षात्कार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

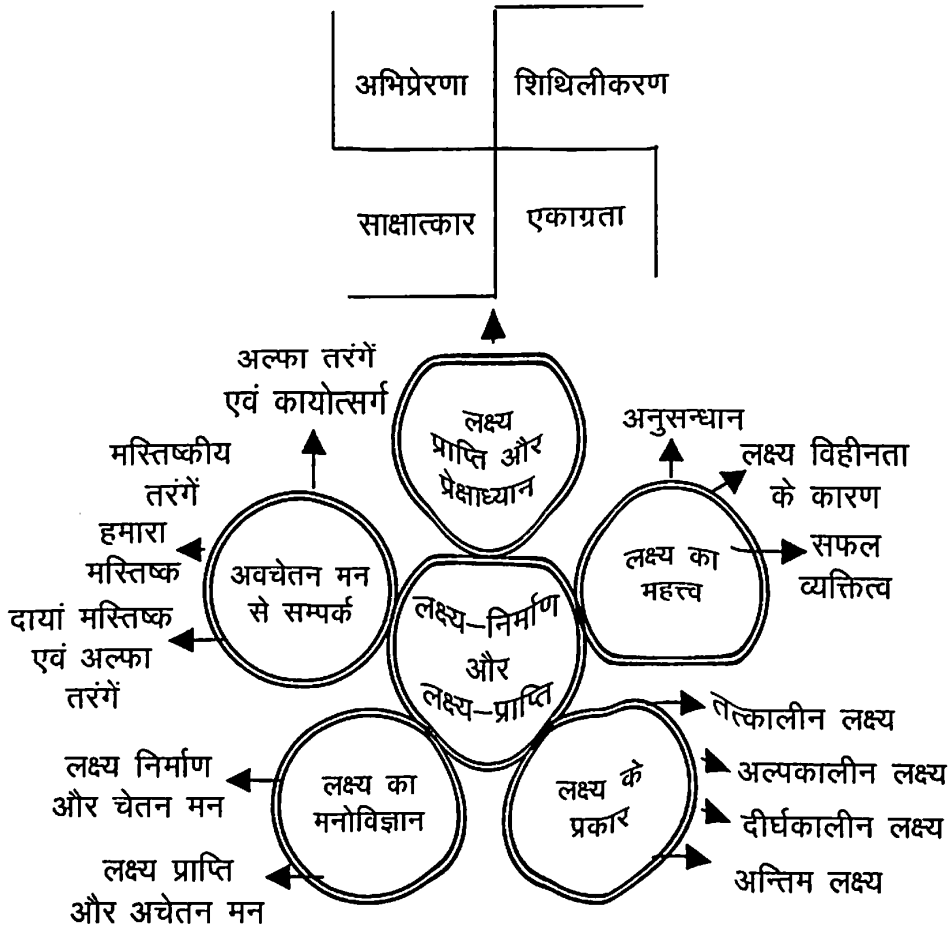

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11 लक्ष्य–निर्माण और लक्ष्य प्राप्ति

कोई भी व्यक्ति ऐसी बस या ट्रेन में यात्रा नहीं करना चाहेगा जिसकी मंजिल का पता नहीं हो किन्तु आज अधिकतर व्यक्ति बिना मंजिल के जीवन यात्रा कर रहे हैं। जीवन जोकरों का खेल नहीं है जिसे मनुष्य मौन होकर भाग्य भरोसे कुछ होते हुए देखता रहे। जीवन को सार्थक बनाने के लिए सतत पुरूषार्थ और उद्देश्य की खोज आवश्यक है। जीवन में उद्देश्य की खोज ही जीवन की सबसे बड़ी चुनौती है। बहुत कम व्यक्ति जीवन में उद्देश्य की खोज कर पाते हैं। अधिकांश व्यक्ति अपने जीवन का मूल्यांकन नहीं कर पाते हैं। व्यक्ति अपने जीवन में उद्देश्य को जितना जल्दी खोज ले उतना ही अच्छा है।

1.0 लक्ष्य का महत्त्व

हजारों वर्षों से भारतीय संस्कृति में जीवन–उद्देश्यों पर गहन चिन्तन मनन होता रहा है। उसी के अनुरूप जीवन–दृष्टि और जीवनशैली का प्रतिपादन हुआ है। यदि पवित्र उद्देश्य और स्पष्ट दृष्टिकोण जीवन का मार्ग दर्शन नहीं करते हैं तो मिथ्या स्वप्न और ख्याली पुलाव ही जीवन के मार्ग दर्शक बन जायेंगे। यदि जीवन रूपी खेत में सार्थक मूल्यवान फसल सलक्ष्य नहीं बोई जाती है तो निरर्थक और मूल्यहीन घास–फूस और दुःखद कांटे स्वतः पैदा हो जायेंगे। इसलिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति सलक्ष्य प्रयत्न करे।

एक बार यदि जीवन का उद्देश्य और नैतिक मूल्य स्पष्ट हो जाये तो वैयक्तिक स्वार्थ और सामाजिक दायित्व के बीच होने वाले आन्तरिक संघर्ष में एक नैतिक संतुलन आ जाता है। व्यक्ति में जागरूकता आ जाती है कि कब उसे दृढ़ रहना है एवं कब उसे लचीला रह कर सामञ्जस्य स्थापित करना है। व्यक्ति दूरदर्शी बन जाता है। छोटे, तुच्छ और त्वरित लाभ के लिए गलत निर्णय और आकर्षण से बच जाता है। सही और दूरगामी निर्णय लेने की क्षमता आ जाती है। स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ की भेद बुद्धि स्पष्ट हो जाती है।

1.1 लक्ष्य पर अनुसंधान

येल विश्वविद्यालय में (1953) एक अनुसंधान किया गया। अन्तिम वर्ष के विद्यार्थियों से साक्षात्कार लिया गया। विश्वविद्यालय, शिक्षा, शिक्षक आदि से संबंधित अनेक प्रश्न पूछे गये। उन्हें एक प्रश्नावली भी दी गई। इस प्रश्नावली में उनके जीवन से संबंधित प्रश्न भी थे। उसमें एक प्रश्न यह भी था कि 'क्या आपने अपना कोई लक्ष्य बनाया है?' इस प्रश्न का 'हाँ' में उत्तर केवल 10 प्रतिशत विद्यार्थियों ने

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दिया। एक दूसरा प्रश्न यह भी था कि क्या आपने अपने लक्ष्य को लिखा भी है ? केवल चार प्रतिशत व्यक्तियों ने उसका उत्तर 'हाँ' में दिया।

20 वर्ष बाद, 1973 में, पुनः उसी प्रकार के अनुसंधान की पुनरावृत्ति उस विश्वविद्यालय में करने की तैयारी हो रही थी। उनमें से एक अधिकारी ने प्रश्न किया कि बीस साल पूर्व जिन छात्रों ने विश्वविद्यालय को छोड़ा है, उनका जीवन स्तर कैसा है ? इसका भी हमें अनुसंधान करना चाहिए। इस बात पर सब सहमत हो गये। कुछ व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। अधिकांश व्यक्तियों का पता लगा लिया गया।

यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जिन चार प्रतिशत व्यक्तियों ने अपने लक्ष्य को लिखा था वे सफलता की दृष्टि से 96 प्रतिशत व्यक्तियों से आगे थे। उनका जीवन संतुलित था। उनकी स्वस्थता, सामाजिकता, परस्परता शेष 96 प्रतिशत से श्रेष्ठ थी। उनकी आर्थिक सुदृढ़ता भी शेष लोगों से अच्छी थी।

वस्तुतः बहुत कम व्यक्ति लक्ष्य बना पाते हैं। लक्ष्य प्राप्ति के मानवीय रहस्य को न समझने के कारण लक्ष्य बनाने और उसे प्राप्त करने में उत्साह नहीं दिखाई देता है। लक्ष्य प्राप्ति के रहस्य को समझ लिया जाये तो लक्ष्य बनाना और उसे प्राप्त करना आसान हो जाता है।

1.2 लक्ष्य विहीनता के कारण

लक्ष्य न बना पाने के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं –

1. निराशावादी दृष्टिकोण :– इस दृष्टिकोण के कारण व्यक्ति संभावनाओं को न देखकर केवल बाधाओं को ही देखता रहता है।
2. असफलता का भय :– अनेक व्यक्ति असफलता के भय से ग्रसित होते हैं। वे सोचते हैं कि यदि कोई निर्णय लूंगा, पूरा नहीं होगा तो लोग क्या कहेंगे? यदि निर्णय लूंगा ही नहीं तो असफल ही नहीं होऊंगा। वास्तव में यह असफलता का ही दृष्टिकोण है।
3. इच्छाशक्ति की कमी :– व्यक्ति में अनेक इच्छाएं घूमती रहती हैं, किन्तु कोई भी इच्छा इतनी प्रबल नहीं होती कि उसका वह चयन करके दिशा को निर्धारित कर सके। अतः वह निर्णय लेने व लक्ष्य–निर्धारण में सफल नहीं हो पाता है।
4. आत्मविश्वास की कमी :– आत्मविश्वास व मनोबल की कमी के कारण व्यक्ति में अपने आप पर भरोसा नहीं होता है। वह अपने सामर्थ्य व योग्यता के प्रति सही दृष्टिकोण नहीं रख

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पाता है। अपनी क्षमता से अनजान परिस्थितियों के प्रवाह में, बहाव के अनुरूप बहता चला जाता है, स्वतन्त्र निर्णय नहीं ले पाता है।

5. लक्ष्य का महत्त्व न समझना :– व्यक्ति को लक्ष्य निर्माण का बोध न होने से उसके प्रति उत्साह नहीं रहता है। वर्तमान शिक्षा पद्धति द्वारा या परिवार में कभी लक्ष्य निर्माण के महत्त्व को समझाया ही नहीं जाता है। इसी का परिणाम है कि अधिकांश व्यक्ति इसके महत्त्व को जान ही नहीं पाते हैं।
6. अज्ञान :– अधिकांश व्यक्तियों को लक्ष्य–निर्माण और लक्ष्य प्राप्ति की प्रक्रिया का ज्ञान नहीं होता है। अतः वे लक्ष्य बनाने का साहस नहीं कर पाते हैं।

लक्ष्य विहीनता के कारणों को दूर कर लक्ष्य निर्माण की दिशा में व्यक्ति को प्रेरित किया जा सकता है। व्यक्ति अपने चेतन मन की तर्क शक्ति का उपयोग कर अपने लक्ष्य का निर्माण कर आगे बढ़ सकता है। एक बार लक्ष्य निर्धारण करने के बाद संकल्पशक्ति, समर्पण व पूर्ण विश्वास जुड़ जाने पर वह सशक्त आन्तरिक अभिप्रेरणा के रूप में व्यक्ति को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। प्रेक्षाध्यान में इसको और अधिक पुष्ट करने के लिए उसे अवचेतन स्तर तक पहुंचाया जाता है। यदि स्पष्ट "शब्दावली" के रूप में लक्ष्य अवचेतन मन तक नहीं पहुंचता है तो उसकी सफलता के प्रति चेतन मन संदेह उपस्थित करता रहता है जो गति प्रगति व लक्ष्य प्राप्ति में सबसे बड़ी बाधा है। अतः आवश्यक है कि लक्ष्य बनाने के बाद उसे अवचेतन मन तक पहुंचाया जाये जिससे उत्साह और सक्रियता बनी रहे।

1.3 सफल व्यक्तित्व

लक्ष्य प्राप्ति का अर्थ है कि व्यक्ति ने जो समयबद्ध लक्ष्य बनाया वह उसे ठीक समय में प्राप्त हो जाये। अर्थात् व्यक्ति ने जीवनरूपी खेत में जो बीज बोये उसकी फसल उसे सही समय पर मिल जाये। ऐसे व्यक्ति को सफल व्यक्तित्व भी कहा जाता है। सफल व्यक्तित्व विकास के लिए एक पूरी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। जैसे बीज से फसल प्राप्ति तक एक सुनिश्चित पूरी प्रक्रिया होती है – बीज का चयन, बुवाई, सिंचन, पोषण, सुरक्षा आदि अनेक चरणों से गुजरते हुए एक किसान अपने खेत को लहलहाता हुआ देखता है। वैसे ही जीवन में सफल व्यक्ति बनने के लिए लक्ष्य–निर्माण करने से लेकर लक्ष्य–प्राप्ति तक अनेक चरणों से गुजरना पड़ता है। इसका ज्ञान करना और उसकी प्रक्रियाओं को क्रियान्वित करना लक्ष्य प्राप्ति के लिए आवश्यक है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सफल व्यक्तित्व निर्माण और लक्ष्य प्राप्ति के लिए पहला चरण है – लक्ष्य का निर्माण करना। खेती के लिए किसान को सर्वप्रथम बीज का निर्धारण करना होगा। क्योंकि खेत में अनेक प्रकार की खेती हो सकती है। अनेक प्रकार के बीज भी होते हैं किन्तु वर्तमान में कौनसी फसल सर्वाधिक उपयुक्त होगी यह तो निर्णय करना ही होगा। जीवन में गति प्रगति, सही दिशा, आत्मसंतुष्टि आदि का आधार व्यक्ति का लक्ष्य ही होता है। लक्ष्य–विहीन गति प्रगति नहीं है। प्रगति तो लक्ष्य की दिशा में होने वाली गति ही कहलाती है। अतः लक्ष्य–प्राप्ति का पहला चरण है – लक्ष्य का निर्माण करना।

2.0 लक्ष्य के प्रकार

भारतीय संस्कृति मूलतः भाग्यवादी कभी नहीं रही है। इस संस्कृति में भाग्य के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए भी शुभ भविष्य के लिए पुरुषार्थ पर बल दिया है। पुरुषार्थ अर्थात् पुरुष के अर्थ या प्रयोजन पर गहन विचार किया गया है। पुरुष के जीवन में क्या क्या प्रयोजन होने चाहिए ? कुछ पाश्चात्य लेखकों ने जीवन के प्रयोजन या लक्ष्यों को मुख्य रूप से दो ही भागों में बांटा है – अल्पकालीन और दीर्घकालीन लक्ष्य। भारतीय संस्कृति की दृष्टि से विचार करने पर सम्पूर्ण जीवन के संदर्भ में लक्ष्य को चार भागों में बांटा जा सकता है – 1. अन्तिम या चरम लक्ष्य, 2. दीर्घकालिक लक्ष्य, 3. अल्पकालिक लक्ष्य, 4. तात्कालिक लक्ष्य। जीवन में सफलता, शान्ति व स्वास्थ्य के लिए चारों लक्ष्यों की संवादिता आवश्यक है।

2.1 अन्तिम/चरम लक्ष्य

यह लक्ष्य न होकर जीवन का ध्येय है। जीवन का अन्तिम ध्येय भी स्पष्ट होना चाहिए। इसके अभाव में व्यक्ति का दृष्टिकोण बहुत छोटा हो जाता है। भारतीय संस्कृति में जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष, व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास माना गया है। पुरुष का अन्तिम प्रयोजन सभी भारतीय दर्शनों के अनुसार दुःख की पूर्णतः निवृत्ति और परम शान्ति की प्राप्ति है।

2.2 दीर्घकालीन लक्ष्य

भारतीय विचारकों ने व्यक्ति की क्षमताओं एवं सम्पूर्ण जीवन अवस्थाओं को सामने रखते हुए चार पुरुषार्थ – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का प्रतिपादन किया। भगवान महावीर ने जीवन का उद्देश्य समता को बताया। इसके लिए संतुलित व संयमित जीवनशैली का प्रतिपादन किया। 'तिण्णाणं तारयाणं' स्वयं के कल्याण के साथ सबके कल्याण की बात कही। अतः व्यक्ति अपने जीवन का उद्देश्य बनाये कि मुझे अच्छा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जीवन जीते हुए मानवता की सेवा करनी है। संतुलित और संयमित जीवन जीना है। आचार्य श्री तुलसी ने अपने एक गीत मे इसी भावना को अभिव्यक्त करते हुए लिखा है –

"सर्वांगीण व्यक्तित्व उदय हो।
लक्ष्य सामने सर्वोदय हो।।"

हम इस प्रकार जीवन को जीयें जिससे सबके विकास में सहभागी बनें। यदि व्यक्ति ने अपने जीवन का लक्ष्य सेवा बना दिया है तो वह व्यक्ति कभी निराश नहीं हो सकता क्योंकि सेवा के सैंकड़ों उपाय हैं, माध्यम हैं, साधन हैं जिनके द्वारा व्यक्ति मानवता की सेवा कर सकता है। सबके विकास में सहभागी बन सकता है। दूसरों को मेहन्दी लगाने से स्वयं के हाथ तो मेहन्दी के रंग में रंग ही जाते हैं।

2.3 अल्पकालीन लक्ष्य

सही कैरियर का चुनाव विद्यार्थी जीवन के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष होता है। मानवता की सेवा, शान्ति और सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के जीवन उद्देश्य रखने वालों को भी कार्य–क्षेत्र (कैरियर) का चुनाव तो करना ही होता है। व्यक्ति मानवता की सेवा अनेक रूपों में कर सकता है। वह उसके लिए जीवन के किसी भी कार्यक्षेत्र का चयन करने में स्वतन्त्र होता है। कैरियर के चुनाव की एक व्यापक प्रक्रिया भी है। नौंवी कक्षा के बाद से उसका ज्ञान व उसके प्रति जागरूकता सही कैरियर के चुनाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। कैरियर चयन के कुछ महत्त्वपूर्ण चरण निम्न प्रकार से हैं –

1. स्वयं को पहचानना एवं अपने विकास की दिशा का निर्धारण कर उसके लिए तैयारी करना।
2. अन्वेषण – विभिन्न कार्यक्षेत्रों का सूक्ष्मता से अध्ययन करना। कुछ वांछित कैरियर विकल्पों को छांटना एवं उनके लिए आवश्यक पात्रता (शैक्षिक, व्यावहारिक, व्यावसायिक) के विषय में जानकारी प्राप्त करना।
3. चयन – उस कैरियर का चयन जो अपने मानदण्डों पर खरा उतरता है।
4. कार्य योजना – लक्ष्य को भेदने के लिए विस्तृत कार्य–योजना बनाना।
5. योग्यताओं का विकास – कैरियर के लिए अपेक्षित विशेष क्षमताओं को अर्जित करना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. स्वयं की विशेषताओं की अच्छी तैयारी एवं उसे अच्छे ढंग से अभिव्यक्त करना।

2.4 तात्कालिक लक्ष्य

जीवन की किसी भी अवस्था में आने वाली चुनौतियां, दायित्व, कर्तव्य, अपेक्षाएं, आकांक्षाए आदि को निपटना या सफलता से उसको पूरा करना जीवन के तात्कालिक लक्ष्य बन जाते हैं। मान लो किसी 10वीं कक्षा पास विद्यार्थी ने अपना अल्पकालीन लक्ष्य बनाया –"मैं अगले सात वर्षों में डॉक्टर बन कर मानवता की सेवा में अपने जीवन को लगाऊंगा।" इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी के जो कर्तव्य हैं या जिन चुनौतियों का उसे सामना करना है, वे उसके लिए तात्कालिक लक्ष्य हैं। जैसे वह विद्यार्थी यह निर्णय करता है कि "मुझे डाक्टरी में प्रवेश हेतु 12वीं कक्षा में 85 प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण होना है।

इसी प्रकार जीवन के कार्यक्षेत्र में उतरने के बाद जीवन की वास्तविकताओं से सामना होने पर उससे संबंधित समस्याओं को प्रत्येक व्यक्ति को अनुभव करना पड़ता है। चाहे उसका अल्पकालीन या दीर्घकालीन लक्ष्य न भी हो। कुछ लोग निरन्तर सीखने एवं समस्याओं को निपटाने की क्षमता के कारण विकास करते चले जाते हैं। वे स्वयं आत्म–संतोष का अनुभव करते हैं एवं बड़ों को भी संतुष्ट कर पाते हैं अन्यथा उनका विकास रुक जाता है। कार्य–कौशल में गिरावट आ जाती है। जो वास्तव में ही समर्पित, जिम्मेदार एवं सफल व्यक्ति के रूप में उभरते हैं उन्हें अधिक महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियां, पद एवं प्रोत्साहन प्राप्त होते हैं। यथार्थ में सफल व्यक्ति भी वही है जो अधिक से अधिक समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखता हो।

3.0 लक्ष्य का मनोविज्ञान

लक्ष्य प्राप्ति की सम्पूर्ण प्रक्रिया के पीछे शक्ति–स्रोत क्या है ? शक्ति–स्रोत है चेतना का महासागर। भारतीय चिन्तन के अनुसार आत्मा अनन्त शक्ति सम्पन्न है किन्तु सबमें उसकी अभिव्यक्ति एक जैसी नहीं है।आत्मा के तीन भेद भी किये जाते हैं – बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। परमात्मा अनन्त शक्ति सम्पन्न है। अन्तरात्मा की शक्ति परमात्मा से कम है। बहिरात्मा की शक्ति सबसे कम होती है। जब व्यक्ति का सम्पर्क अन्तरात्मा से होता है तब उसकी शक्ति का असीमित विकास होता है। अतः अपने लक्ष्य को अन्तरात्मा तक पहुंचाना होगा। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार मन के मुख्यतया तीन स्तर हैं– चेतन मन, अवचेतन मन और अचेतन मन। (देखें चित्र 11.1)

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

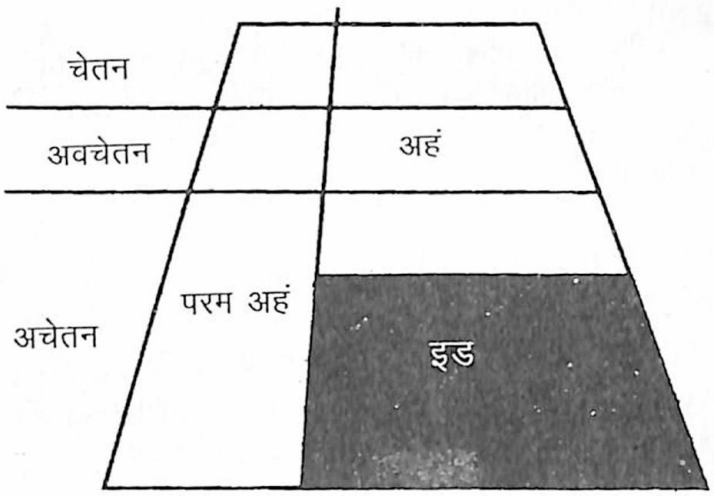

चित्र 11.1 मन के स्तर

मनोविज्ञान में मन की तुलना समुद्र में बहने वाले एक विशाल हिमखण्ड से की गई है। हिमखण्ड का ऊपरी हिस्सा जो मात्र 10 प्रतिशत बाहर दिखाई देता है उसकी तुलना चेतन मन से की गई है।

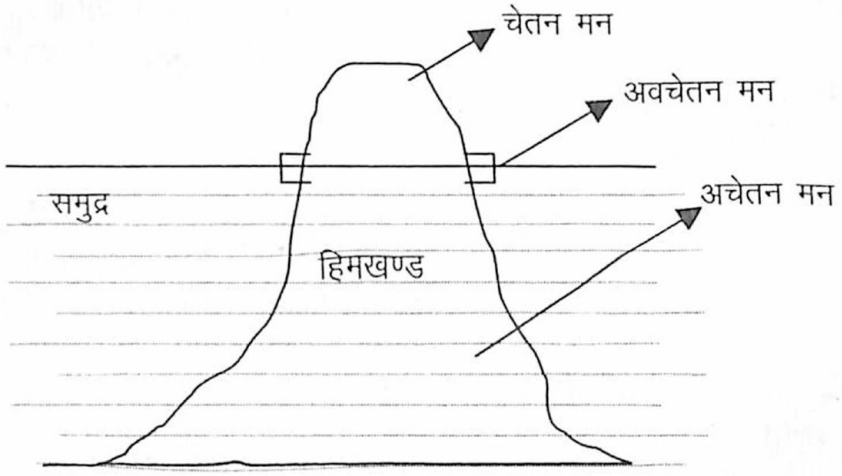

चित्र नं. 11.2 समुद्री हिमखण्ड और मन के स्तर

हिमखण्ड का बहुत थोड़ा हिस्सा जो बाहर से पानी के भीतर दिखाई देता है उसकी तुलना अवचेतन मन से की गई है। लगभग 90 प्रतिशत भाग जो पानी के भीतर है, बाहर से दिखाई नहीं देता है उसकी तुलना अचेतन मन से की गई है। चेतन मन की शक्ति सीमित होती है और

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अचेतन मन की शक्ति असीम। यदि कोई जहाज का कप्तान उस हिमखण्ड को मात्र 10 प्रतिशत समझकर उससे टकरा जाये तो पूरा जहाज नष्ट हो जाता है क्योंकि भीतर हिमखण्ड पर्वत जितना विशाल होता है। इसी प्रकार दिखने वाला चेतन मन बहुत थोड़ा है। उसकी शक्ति सीमित है। नहीं दिखने वाला अचेतन बहुत विशाल है। उसकी शक्ति असीमित है। चेतन मन और अचेतन का संधि स्थल है – अवचेतन मन। अतः व्यक्ति को जो लक्ष्य प्राप्त करना है उसे भीतर अवचेतन मन की शक्ति से जोड़ना होगा जिससे वह अचेतन तक जा सके।

3.1 लक्ष्य निर्माण और चेतन मन

जीवन में सामर्थ्य, एकाग्रता, स्वास्थ्य, संसाधन आदि सब कुछ है किन्तु यदि लक्ष्य नहीं बनाया तो नयी विशिष्ट उपलब्धि संभव नहीं है। लक्ष्य का निर्माण करना जीवन में एक बहुत कठिन व चुनौतीपूर्ण कार्य है। यह कार्य चेतन मन का है। इसके लिए विभिन्न प्रयासों की आवश्यकता होती है। सामान्यतया व्यक्ति में अनेक प्रकार की इच्छाएं होती हैं। वे इच्छाएं व्यक्ति में चेतन मन के स्तर पर दबाव उत्पन्न करती हैं जिससे उनको पूरा किया जा सके। अतृप्त इच्छाएं असंतोष पैदा करती हैं। असंतोष, अत्यधिक दबाव और अनेक दिशागामी इच्छाएं व्यक्ति में अन्तर्द्वन्द्व, व्यक्तित्व विघटन और मनोविकारों को पैदा करते हैं। लक्ष्य निर्माण का अर्थ है – अपनी इच्छाओं में से कुछ अत्यावश्यक और मूल्यवान इच्छाओं को महत्त्व देते हुए उसे विकसित करने का पूर्ण प्रयत्न करना। शेष इच्छाओं को स्थगित कर देना, गौण कर देना, सीमित व संयमित करना या पूर्ण रूप से त्याग कर देना। इससे दबाव, असंतोष, अन्तर्द्वन्द्व कम हो जाते हैं एवं शक्ति अनावश्यक दिशा मे नष्ट होने से बच जाती है।

अनेक इच्छाओं में से एक सर्वाधिक उपयुक्त इच्छा का लक्ष्य के रूप में निर्धारण, उसकी कार्ययोजना व क्रियान्विति का सारा कार्य चेतन मन द्वारा होता है। चेतन मन इस कार्य को चिन्तन व आत्म–निरीक्षण के आधार पर करता है। लक्ष्य निर्धारण हेतु अनेक महत्पूर्ण सूत्रों में से एक सूत्र है – आई.ए.एस. (IAS) अर्थात् I=Interest (रूचि), A=Ability (योग्यता), S=Social demand (सामाजिक जरूरतों का अवलोकन करना व उस आधार पर निर्णय करना)। इस सूत्र को विस्तार से इस प्रकार समझा जा सकता है –

1. लक्ष्य निर्धारण के समय स्वयं की रूचि का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि रूचिकर कार्य में व्यक्ति को स्वतः आत्मसंतोष मिलता है। उसमें वह लगनपूर्वक लम्बे समय तक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बिना थके प्रसन्नता से कठोर परिश्रम कर सकता है। एकाग्र रह सकता है।

2. इसके साथ लक्ष्य के अनुरूप स्वयं में उपयुक्त योग्यता भी है या नहीं ? इस पर भी विचार करना आवश्यक है। योग्यता यदि नहीं है, फिर भी उस क्षेत्र में जाना ही चाहते हैं तो फिर योग्यता का विकास करना होगा।
3. जिस लक्ष्य को पाना चाहते हैं, उसकी समाज में स्वीकार्यता या उपयोगिता कितनी है ? उसके लिए भावी अवसर कितने हैं? परिवार व समाज का सहयोग कितना है ? यह देखना भी लाभदायक रहता है। इससे हमें बाह्य प्रोत्साहन भी मिलता रहता है।

लक्ष्य निर्धारण के बाद कार्य योजना के विकास हेतु एक और महत्त्वपूर्ण सूत्र है – **SWOT** अर्थात् –

1. **Strength** (शक्ति) – स्वयं की शक्ति, सबलता अथवा गुणों का आकलन करना। उनके विकास की योजना बनाना।
2. **Weakness** (दुर्बलता) – स्वयं की दुर्बलता, कमजोरी अथवा अवगुणों का आकलन करना। उनके प्रति जागरूक रह कर उनको कम करने के उपाय करना।
3. **Opportunity** (संभावना) – सामने आ रहे अवसर और संभावनाओं को देखना। उनको साकार करने के लिए कठोर परिश्रम करना।
4. **Threat** – संभावनाओं को यथार्थ में बदलते समय आने वाली चुनौतियों और खतरों को देखना एवं इनका साहस के साथ सामना करना।

विशेषज्ञों द्वारा इन चारों के बलाबल का विवेक करते हुए लक्ष्य को निर्धारित करने की सलाह दी जाती है। लक्ष्य निर्धारित करने के बाद बार–बार नहीं बदलना चाहिए। बार–बार बदलने से पीछे का पूरा परिश्रम और अनुभव व्यर्थ हो जाता है। अतः एक दिशा को बनाये रखना आवश्यक है।

3.2 लक्ष्य प्राप्ति और अवचेतन मन

लक्ष्य निर्धारित करने के बाद उसे अवचेतन मन से जोड़ देना चाहिए अन्यथा उसी एक दिशा को बनाये रखना कठिन होता है। कठिन परिस्थितियों में चेतन मन लक्ष्य के बारे में चिन्तन के साथ–साथ उसकी सफलता में संदेह भी करने लगता है। जिस प्रकार खेती के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

लिए बीज का निर्णय करने के बाद यदि उसे धरती के भीतर आरोपित नहीं किया जाता है, वे बीज केवल धरती के ऊपर ही पड़े रहते हैं तो पक्षी उन बीजों को उगने से पहले ही खा जाते हैं। उसी प्रकार संदेह भी लक्ष्य को पूरा होने से पहले ही समाप्त कर देता है। संदेह से बचाने के लिए लक्ष्य को अवचेतन मन तक पहुंचाना बहुत जरूरी है।

अवचेतन मन लक्ष्य को पाने के लिए तीन प्रकार से सहयोग देता है। अन्तःप्रेरणा, शक्ति व गतिशीलता। लक्ष्य को एक बार अवचेतन मन में पहुंचा दिया जाता है तो अवचेतन मन उस लक्ष्य को पूरा करने के लिए स्वतः व्यक्ति को प्रेरित करता है। जितने भी बड़े एवं महान् व्यक्ति हुए हैं उनके भीतर अवचेतन मन में कुछ करने की तीव्र अन्तःप्रेरणा होती है। वह अन्तःप्रेरणा व्यक्ति को तब तक शान्त नहीं बैठने देती जब तक लक्ष्य पूरा न हो जाये। इससे व्यक्ति के पास लक्ष्य को पाने के लिए शक्ति, साहस, आत्मविश्वास का अखूट खजाना उपलब्ध रहता है। गतिशीलता बनी रहती है। वह कभी भी हार मान कर रुकता नहीं है। साहस और धैर्य के साथ चलता रहता है। हर समस्या के समाधान का बोध होता रहता है।

4.0 अवचेतन मन से सम्पर्क

लक्ष्य को अवचेतन मन से जोड़ने के लिए उससे सम्पर्क करना होगा। अवचेतन मन से सम्पर्क कैसे और कब करें ? इसे समझने के लिए संक्षेप में मस्तिष्क और उसकी तरंगों के बारे में जानना होगा।

4.1 हमारा मस्तिष्क

यह दो भागों में विभक्त है – दायां मस्तिष्कीय गोलार्द्ध और बायां मस्तिष्कीय गोलार्द्ध (देखें चित्र 11.3)।

बायां मस्तिष्कीय गोलार्द्ध उन क्रियाओं में विशेष सहयोगी बनता है या दायित्व निभाता है जो भाषा, तर्क एवं गणित से संबंधित है। दायां मस्तिष्क कल्पनाशीलता, कला, सृजनात्मक शक्ति आदि से

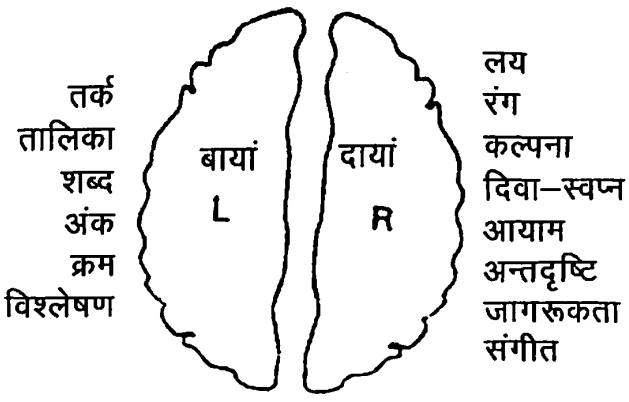

चित्र 11.3 मस्तिष्क के गोलार्द्ध

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संबंधित कार्यों में सक्रिय भूमिका निभाता है। यह भी माना जाता है कि दायां मस्तिष्क हमारे अवचेतन और अचेतन की शक्तियों से जुड़ा हुआ है। दाएं मस्तिष्क को सक्रिय करने से हमारा सम्पर्क अवचेतन स्तर से हो जाता है। प्रश्न है कि दाएं मस्तिष्क को सक्रिय कैसे करें?

4.2 मस्तिष्कीय तरंगे एवं अवचेतन मन

आधुनिक शोधों ने यह प्रमाणित किया है कि हमारा मस्तिष्क भी तरंगित होता है, प्रकम्पित होता है। इन प्रकम्पनों को प्रति सैकेण्ड में होने वाली आवृत्ति से मापा जाता है। पूर्ण जागृति, इन्द्रियों की सक्रियता एवं चिन्तन की अवस्था में मस्तिष्क के तन्तु एक सैकेण्ड में 13 से 20 बार प्रकम्पित होते हैं। वैज्ञानिक इसे मस्तिष्क का बीटा स्तर कहते हैं। जब निद्रा में शिथिलता एवं विश्राम की अवस्था होती है तो मस्तिष्क मंद गति से प्रकम्पित होता है। उस समय प्रकम्पन की 8 से 12 आवृत्ति प्रति सैकेण्ड रहती है। इसे अल्फा स्तर कहते हैं। इससे भी मंद 4 से 7 आवृत्ति प्रति सैकेण्ड रहती है, उसे थीटा स्तर कहा जाता है। और अधिक मंद 1 से 4 आवृत्ति डेल्टा स्तर कहलाती है।

4.3 दायां मस्तिष्क एवं अल्फा तरंगें

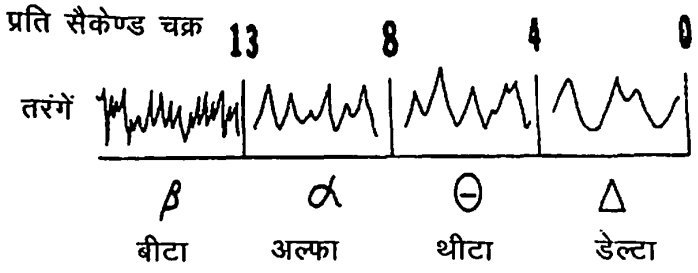

चित्र 11.4 मानसिक तरंगे

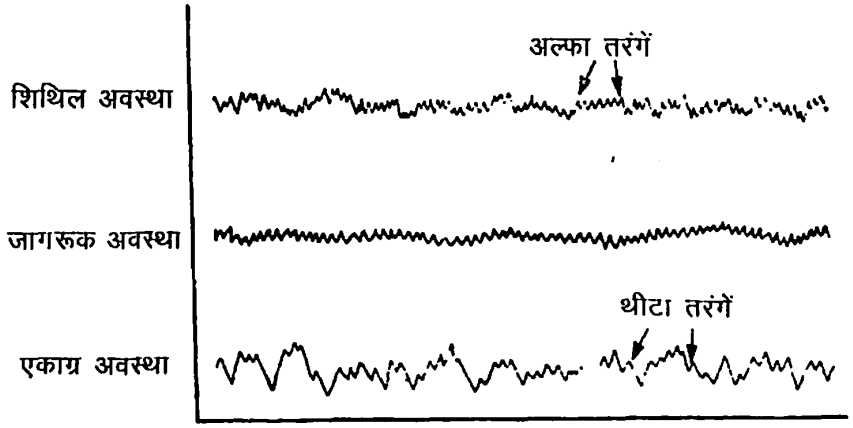

चित्र 11.5 मस्तिष्कीय अवस्थाएं व विभिन्न तरंगें

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जब हमारा मस्तिष्क बीटा स्तर पर रहता है तो सामान्यतया हम मस्तिष्क के बायें भाग का अधिक उपयोग करते हैं। मस्तिष्क के अल्फा अवस्था में, दायें मस्तिष्क का अधिक उपयोग होता है। इस स्तर पर कल्पना शक्ति व साक्षात्कार करने की शक्ति जागृत रहती है। यह सिद्ध हो गया है कि दायें मस्तिष्क का सीधा संबंध हमारे अवचेतन के साथ है। यदि हमें अवचेतन व अचेतन की शक्तियों का उपयोग करना है तो हमें सप्रयत्न मस्तिष्क के अल्फा स्तर को सक्रिय करना सीखना होगा तथा हमें कल्पना शक्ति और साक्षात्कार करने की शक्ति का विकास करना होगा।

4.4 अल्फा तरंगें एवं कायोत्सर्ग

मस्तिष्क के अल्फा स्तर को सक्रिय करने के लिए कायोत्सर्ग बहुत महत्पूर्ण है। अनुसंधानों से यह पाया गया है कि कायोत्सर्ग में व्यक्ति के मस्तिष्क में अल्फा तरंगे सक्रिय हो जाती है। इस स्थिति में दायां मस्तिष्क भी सक्रिय हो जाता है। हमारा सम्पर्क अवचेतन स्तर से हो जाता है। इस स्तर का उपयोग हम लक्ष्य–प्राप्ति में कर सकते हैं। इस अवस्था में लक्ष्य की शब्दावली पर एकाग्र होकर मानसिक उच्चारण व साक्षात्कार करने से वह अचेतन मन में चला जायेगा। हमारे लक्ष्य के साथ अचेतन की शक्ति जुड़ जायेगी। एक दिन वह लक्ष्य साकार बन जायेगा।

5.0 लक्ष्य प्राप्ति और प्रेक्षाध्यान

प्रेक्षाध्यान सर्वांगीण विकास की परिपूर्ण ध्यान पद्धति है। इस ध्यान पद्धति में लक्ष्य–प्राप्ति हेतु चार चरण हैं – अभिप्रेरणा, शिथिलीकरण, एकाग्रता एवं साक्षात्कार। लक्ष्य अल्पकालिक हो या दीर्घकालिक, इन चार चरणों के प्रयोग से उसे प्राप्त किया जा सकता है। इसके माध्यम से हम स्वास्थ्य को सुधार सकते हैं, स्मृति का विकास कर सकते हैं, पारस्परिक संबंधों को मधुर बना सकते हैं, जीवन में सौहार्द, वात्सल्य, प्रसन्नता, आनन्द और आत्म–साक्षात्कार भी प्राप्त कर सकते हैं।

5.1 अभिप्रेरणा

सर्वप्रथम लक्ष्य–निर्माण की सशक्त प्रेरणा होनी चाहिए। प्रबल इच्छाशक्ति होनी चाहिए। सही दृष्टि और आत्म–विश्वास लक्ष्य की दिशा में गति प्रदान करते हैं। अतः आन्तरिक योग्यता और क्षमताओं को जानकर इच्छाशक्ति को प्रबल करना होगा। उसके बाद "स्पष्ट शब्दावली" में लक्ष्य को बनाना होगा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5.2 शिथिलीकरण

अवचेतन से सम्पर्क करने के लिए आवश्यक है कि हम पूर्णतया तनाव से मुक्त हों। मस्तिष्क के अल्फा स्तर एवं दायें भाग को सक्रिय कर सकें। कायोत्सर्ग के दैनिक प्रयोग से शिथिलीकरण को सिद्ध किया जा सकता है। इसमें प्रत्येक अवयव का अनुभव करके सुझावों के द्वारा शिथिलता का अभ्यास किया जाता है।

5.3 एकाग्रता

कल्पना शक्ति को उपयोग में लेने का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है– एकाग्रता। एकाग्रता का अर्थ है – जो काम हाथ में है उसी में चित्त को लगाना। प्रेक्षाध्यान में श्वास–प्रेक्षा एकाग्रता को बढ़ाने का सशक्त एवं सरल उपाय है। श्वास–प्रेक्षा एकाग्रता के साथ–साथ सही ढंग से श्वास लेने की प्रक्रिया का प्रशिक्षण भी है। यह कार्यक्षमता को बढ़ाने का अमोघ साधन भी है। शिथिलीकरण के पश्चात् लक्ष्य की द्योतक शब्दावली पर एकाग्र हो जायें।

5.4 साक्षात्कार

हमें मस्तिष्क के बायें भाग की सुसुप्त शक्ति, कल्पना एवं साक्षात्कार की शक्ति को नियमित अभ्यास से जागृत करना है व अपनी बंद आंखों के सामने श्वेत पर्दे (टी.वी. के पर्दे के समान) की कल्पना को तीव्र बनाना है फिर उस पर्दे पर अपने लक्ष्य का स्पष्ट चित्र बनाना है। उस चित्र में जितनी अधिक स्पष्टता से एक–एक वस्तु दिखाई देगी उतनी ही अधिक सफलता मिलेगी। अचेतन मन में हमारा लक्ष्य स्पष्ट रूप से अंकित हो सकेगा। इस प्रयोग का नियमित तीन बार अभ्यास करें। एक बार में 20 मिनट समय लगाएं। तीन महीने तक प्रयोग करें।

दृढ़ इच्छाशक्ति एवं अभिप्रेरणा के साथ, शिथिलीकरण को साध कर दायें मस्तिष्क में प्रवेश कर पूरी एकाग्रता से यदि लक्ष्य का साक्षात्कार किया जाए तो ऐसा कोई लक्ष्य नहीं है जो पूरा नहीं हो सके। ऐसी कोई बाधा नहीं है जो अपने लक्ष्य–प्राप्ति को रोक सके। आवश्यकता है हम अपने आपको जानें एवं अपनी शक्तियों का सम्यक् उपयोग करें।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

12. व्यसन की समस्या : प्रेक्षा का समाधान

रूपरेखा

1.0 व्यसन–मुक्त व्यक्तित्व
    1.1 स्वस्थ समाज
2.0 व्यसन का प्रभाव
    2.1 शारीरिक प्रभाव
    2.2 व्यसन और मनोभाव
    2.3 व्यसन : समाज और राज्य
    2.4 व्यसन और परिवार
    2.5 व्यसन और आर्थिक क्षति
3.0 व्यसन : कारण और निवारण
    3.1 व्यसन का समाधान
    3.2 व्यसन मुक्ति और प्रेक्षा प्रयोग
    3.3 व्यसन मुक्ति शिविर की उपलब्धियां

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

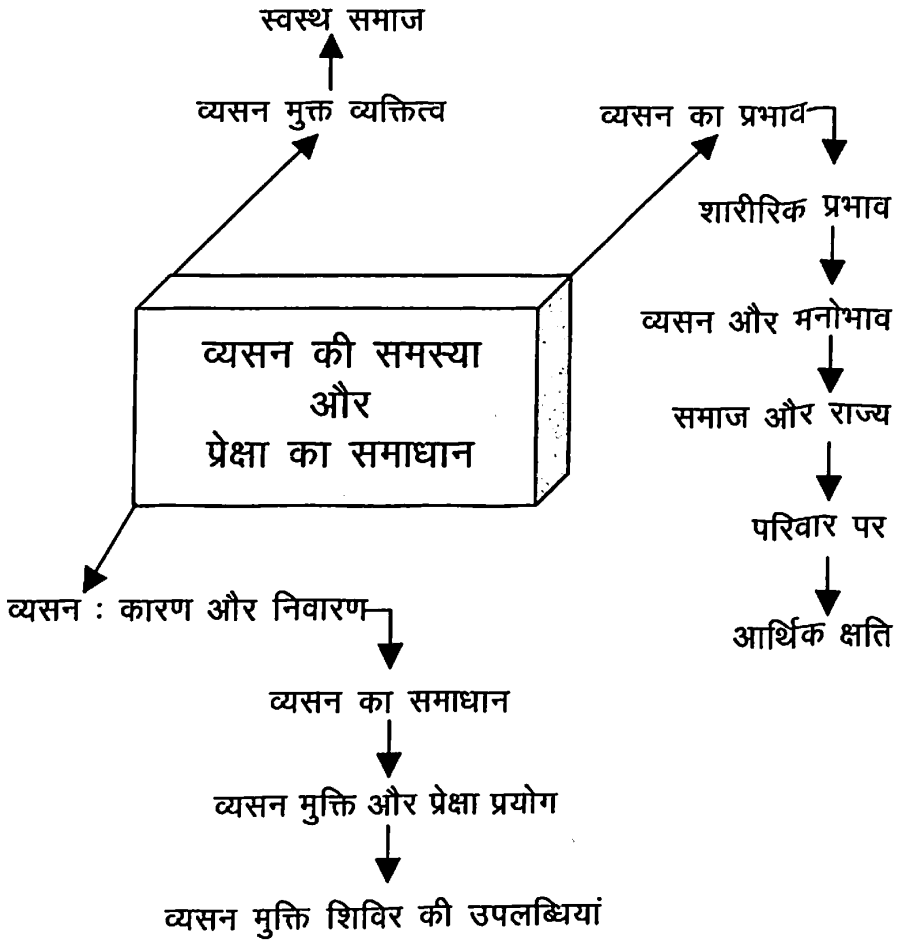

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

12 व्यसन की समस्या : प्रेक्षा का समाधान

1.0 व्यसन–मुक्त व्यक्तित्व

वर्तमान युग विज्ञान का युग है। विज्ञान के साथ–साथ औद्योगिक विकास हुआ। तकनीकी का विकास हुआ। इस विकास के साथ मानसिक शान्ति का विकास नहीं हो सका। जितने सुविधा के साधन बढ़े हैं उसके अनुपात से कहीं अधिक मानसिक तनाव और उससे उत्पन्न होने वाली समस्याएं बढ़ी हैं। समाज में व्यसन और अपराध बढ़े हैं। यदि व्यसन में कमी आती है तो अपराध और गरीबी में बहुत कमी आ सकती है। मेडिकल कौंसिल ऑफ ऑक्सफोर्ड के प्रेसिडेन्ट जनरल डॉ. आकलैण्ड लिखते हैं –"यदि शराब के बारे में किसी को मालूम न होता तो संसार के अपराधों की आधी मात्रा तथा गरीबी की बहुत बड़ी मात्रा दूर हो जाती।"

विद्या ही समस्त विकास का आधार है। विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय विद्या प्रदान करने वाले महान् संस्थान हैं। जहां जीवन निर्माण होता है, वहां भी जीवन विनाश के बीज, व्यसन तेजी से अपना पैर जमा रहे हैं। आज अपेक्षा है शिक्षा जगत् से कि वह ऐसी शिक्षा, संस्कार तथा व्यवस्था दे जिससे विद्यार्थी हर परिस्थिति में अपने व्यसन–मुक्त व्यक्तित्व को सुरक्षित रख सके।

1.1 स्वस्थ समाज

गुरुदेव श्री तुलसी के विचारों में स्वस्थ समाज का निर्माण तब तक नहीं हो सकता जब तक समाज व्यसन मुक्त नहीं हो जाता। अनेक अपराध, हिंसा और कुकृत्यों का एक प्रमुख कारण है – नशा। अहिंसक समाज संरचना के लिए अपराध, हिंसा व आतंक में न्यूनता आये, यह सबसे बड़ी अपेक्षा है। इसका एक प्रमुख आधार है – व्यसन मुक्त समाज।

ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री ग्लैडस्टन के अनुसार –"शराब कितनी ही थोड़ी मात्रा में क्यों न पी जाए, वह मानसिक शान्ति को खराब कर देती है। वह दिमाग के स्नायु केन्द्रों को शून्य कर देती है जिससे बुद्धि की भले–बूरे की पहचान की क्षमता तथा सहनशक्ति जाती रहती है।" व्यसन धीमा विष है, विष से भी भयंकर है। विष तो एक ही बार मारता है परन्तु व्यसन व्यक्ति को ही नुकसान नहीं पहुंचाता, वह परिवार, समाज व राष्ट्र के चरित्र को ठेस पहुंचाता है एवं तहस–नहस कर देता है। व्यक्ति जानते हुए भी व्यसन छोड़ नहीं पाता है। पारिवारिक शान्ति,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सामाजिक विकास और राष्ट्रीय चरित्र में उत्थान के लिए व्यसन मुक्त समाज की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

2.0 व्यसन का प्रभाव

व्यसन को समझने के लिए उसे निम्न भागों में बांटा जा सकता है–

1. तम्बाकू और उससे निर्मित पदार्थ –ज़र्दा, गुटखा, बीड़ी, सिगरेट, चिलम आदि।
2. शराब आदि मादक पेय पदार्थ।
3. अफीम, गांजा, चरस, हेरोइन आदि।

महात्मा गांधी ने अपनी पुस्तक 'की टू हैल्थ' में लिखा है –"शराब शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आर्थिक दृष्टि से मनुष्य को बर्बाद कर देती है। शराब के नशे में मनुष्य दुराचारी बन जाता है एवं अफीम के नशे में वह सुस्त और मुर्दा बन जाता है।" इस प्रकार व्यसन व्यक्तिगत स्तर पर शरीर, मन व भावों को प्रभावित करते हैं। सामुदायिक स्तर पर परिवार, समाज व राष्ट्र को भी प्रभावित करते हैं। आर्थिक स्तर पर भी इससे व्यक्ति को हानि ही होती है।

2.1 शारीरिक प्रभाव

व्यसन से ग्रस्त व्यक्तियों में अनेक बार भयानक घातक बीमारियां भी हो जाती हैं। जैसे तम्बाकू का सेवन करने वाले व्यक्तियों के दांत, जबड़े, गला, होंठ, जीभ आदि अंग बूरी तरह से विकृत हो जाते हैं। अनेक व्यक्तियों की स्थिति ऐसी हो जाती है कि उनका चेहरा भी नहीं देख सकते। इंडियन सोसायटी ऑन टोबेको एण्ड हैल्थ के अध्यक्ष डॉ. सोबती के अनुसार भारत वर्ष में 9 से 10 लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष तम्बाकू के सेवन से होने वाली बीमारियों के कारण मरते हैं। उनके अनुसार वर्ष 2010 तक विश्व में प्रति वर्ष एक करोड़ लोग तम्बाकू के कारण होने वाले रोगों से मौत के मुंह में जाने लगेंगे। तम्बाकू चबाने से मुंह का कैंसर एवं गले का कैंसर भी हो सकता है।

वर्ल्ड हैल्थ ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार अमेरिका में छः लाख एवं यूरोप में 10 लाख से अधिक व्यक्ति प्रतिवर्ष तम्बाकू के कारण समय से पूर्व ही मर जाते हैं। फैंफड़ों के कैंसर से होने वाली 80 से 90 प्रतिशत मौतें तम्बाकू से होती है। 65 वर्ष से कम आयु में दिल के दौरे से मरने वालों में 40 प्रतिशत धूम्रपान के कारण ही मरते हैं।

शराब आदि मद्यपान करने वाले व्यक्ति यह तर्क देते हैं कि उन्हें पाचन में व मानसिक तनाव में राहत मिलती है। एकांगी व अल्पकालिक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रभावों को देखते हुए यदा–कदा चिकित्सक भी सेवन की सलाह दे देते हैं किन्तु दीर्घकालिक व व्यापक दुष्परिणामों को देखते हुए उनकी सलाह कहां तक उचित है ? वे स्वयं समझ सकते हैं। यह भी वैज्ञानिकों का मानना है कि एक बार के मद्यपान से हजारों स्नायु एक साथ नष्ट हो जाते हैं। जब व्यक्ति मद्यपान का गुलाम हो जाता है तब यकृत, आमाशय, व गुर्दे पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वे खराब हो जाते हैं। शरीर दुर्बल हो जाता है। कार्यक्षमता घट जाती है। अनेक अकाल मृत्यु की गोद में चले जाते हैं।

अफीम, गांजा, चरस, हेरोइन आदि का सेवन करने वाले व्यक्तियों की स्नायविक शक्ति दुर्बल हो जाती है। स्नायविक शक्ति को पुनः ठीक नहीं किया जा सकता। रोग–प्रतिरोधात्मक शक्ति भी क्षीण होती है और इससे व्यक्ति अकाल–मृत्यु से ग्रसित हो जाता है।

2.2 व्यसन और मनोभाव

इन व्यसनों का प्रभाव भावनात्मक स्तर पर भी बहुत हानिकारक होता है। एक बार व्यक्ति उत्तेजना या शान्ति का अनुभव करता है। भूल–भूलैया में चला जाता है। होश आने पर अधिक चिन्तित व तनावग्रस्त हो जाता है। व्यग्रता, अनिर्णय व असंतोष बढ़ता है। अफीम आदि के सेवन से व्यक्ति चेतना शून्य हो जाता है। व्यसनी व्यक्ति का स्वभाव असामान्य हो जाता है। आवेश, चिड़चिड़ापन, आक्रामकता, अपराध मनोवृत्ति आदि बातें व्यसन से ग्रस्त व्यक्तियों में आम होती चली जाती है।

2.3 व्यसन : समाज और राज्य

राजनैतिक कर्णधार व शासनाधीश व्यक्तियों को लगता है कि इससे उन्हें बहुत बड़ा राजस्व मिलता है पर दूसरी ओर देखा जाए तो समाज में बढ़ती गरीबी, दरिद्रता, अस्वास्थ्य, कुपोषण और अपराध का एक बड़ा जिम्मेदार कारण है – व्यसन। एक तरफ राजस्व का व्यामोह व दूसरी तरफ बढ़ती सामाजिक समस्याएं – दोनों का तालमेल कहां हो पायेगा ? अनेक कार्य दिवसों की हानि व्यसन से जुड़ी हुई है। सृजन व निर्माण करने वाली युवापीढ़ी अपंग एवं अकर्मण्यता की दिशा में चली जाती है। अनेक संभ्रांत व योग्य नागरिक असमय में ही काल कवलित हो जाते हैं। यह राष्ट्र की अपूरणीय क्षति है।

2.4 व्यसन और परिवार

व्यसन का जहां व्यक्तिगत स्तर पर नुकसान होता है वहीं पारिवारिक स्तर पर नुकसान कई गुणा अधिक होता है। धूम्रपान करने

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वाला धुंए को अनचाहे ही अपने संबंधियों में संक्रांत कर देता है। सबसे बुरा असर होता है बच्चों के कच्चे दिमाग पर। अनुकरण प्रिय बच्चे उसे देखकर, चोरी–छिपे इस कार्य को अंजाम देने की कोशिश करते हैं। अनेक व्यक्तियों की जीवन गाथा इस व्यथा से भरी हुई है कि हमने बचपन में बड़ों को देख कर चोरी–छिपे अनुकरण द्वारा इसे प्रारम्भ किया। बार–बार समझाने पर भी जब व्यक्ति नहीं छोड़ पाता है तब घरों में शान्ति व समायोजन में कमी आती है। कलह में वृद्धि व प्रतिष्ठा की हानि होती है। शराब से तो परिवार ही उजड़ जाते हैं। अफीम आदि व्यसनों से ग्रस्त व्यक्ति आवारा होकर परिवार से अलग भी हो जाता है। पूरी तरह से टूट जाता है।

2.5 व्यसन और आर्थिक क्षति

व्यसन छोटा से छोटा क्यों न हो वह आर्थिक अपव्यय का बड़ा कारण होता है। बीड़ी पीने वाले का भी आर्थिक अपव्यय 10 सालों में लाखों रुपयों तक हो जाता है। मद्यपान करने वाले व्यसनी की आर्थिक स्थिति का तो जनाजा ही निकल जाता है। भरा–पूरा परिवार निर्धन व दरिद्र हो जाता है। कर्ज भी मिलना आसान नहीं होता।

3.0 व्यसन : कारण और निवारण

आधुनिकता के नाम पर नशे की संस्कृति युवा पीढ़ी को जिन अंधी सुरंगों में धकेल रही है वहां जीवन नहीं मौत का सन्नाटा पसरा है। व्यसन का प्रारम्भ मुख्यतया दो प्रकार के कारणों से होता है – (1) बाह्य एवं (2) आन्तरिक।

1. वातावरण, संगत, प्रतिष्ठा, फैशन आदि कुछ ऐसे बाह्य कारण है जिसका प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है।
2. आन्तरिक कारणों में अज्ञान, गलत दृष्टिकोण, संकल्पशक्ति की कमी, तनाव, उदासीनता, अशान्ति आदि है।

आन्तरिक मनस्थिति व बाह्य परिस्थिति दोनों के संयोग से व्यसन प्रारम्भ हो जाता है। प्रारम्भ होने के बाद व्यक्ति उसका गुलाम हो जाता है। हानि को जानते हुए भी छोड़ नहीं पाता है तब यह कहावत चरितार्थ होती है – मनुष्य शराब नहीं पीता, शराब मनुष्य को पीने लग जाती है। लत पड़ने के बाद मूढ़ता और आसक्ति बढ़ती जाती है।

नशे का प्रारम्भ किसी भी मोड़ से, किसी भी कोण से हो, उसका 'अन्त भयानक ही होता है। विडम्बना तो यह है कि इसे विकास का सोपान, समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। व्यक्ति यह तो कभी नहीं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तालिका 12.1 : व्यसन की समस्या और परिणाम

व्ययन	शारीरिक	मानसिक	भावनात्मक	आर्थिक	पारिवारिक	सामाजिक
1.तम्बाकू, बिड़ी, सिगरेट, चिलम, जर्दा, गुटखा	फेफड़े की बीमारियां, कैंसर, दांत, होंठ, जीभ, गला।	स्नायविक दुर्बलता, अशान्ति, बैचेनी, चिन्ता।	चिड़चिड़ापन , क्रोधी स्वभाव	अपव्यय	समायोजन की कमी, कलह, बच्चो द्वारा अनुकरण	गरीबी, चिकित्सा खर्च में वृद्धि, प्रदूषण
2. शराब	जिगर, आमाशय, व गर्दे के रोग, दुर्बलता, कार्य क्षमता में कमी।	" अनिर्णय, असन्तोष, व्यग्रता, विक्षिप्तता,	" आक्रमकता	अपव्यय, दरिद्रता	" असमायोजन , कलह, संबंध में कठिनाई, विघटन	" अपराध, हिंसा, भय, खर्चा, आतंक, विघटन
3. अफीम, गांजा, चरस, हेरोइन, **L.S.D., Brown sugar**	स्नायविक क्षति, कोशिका क्षति, रक्त विकार, श्वेत रक्त कणिकाओं की अल्पता, अकाल मृत्यु, हृदय दौर्बल्य।	" तनाव, मूर्च्छा, चेतना शून्यता	" हिंसक व्यवहार	" कर्जदारी, कार्य दिवस की क्षति	" विघटन, आवारापन, संबंध विच्छेद	" सामाजिक क्षति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कहता कि व्यसन स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है किन्तु वे उसे उतना हानिकारक नहीं मानते जितना कि वास्तविकता में है। वे इसे मूड ठीक करने वाला, आनन्द देने वाला, मन–मस्तिष्क की एकाग्रता बढ़ाकर समस्याओं को सुलझाने में सहायता करने वाला, चुस्ती–फुर्ती लाने वाला एवं उच्च वर्ग के अधिकारियों से सम्बन्ध बना कर सहायता कर अधिक लाभ दिलाने में सहयोग करने वाला मानते हैं। वास्तविक सत्य तो वही होता है जो निष्पक्ष दृष्टि से तथ्यों, वैज्ञानिक खोजों एवं सर्वेक्षणों आदि निष्कर्षों पर आधारित हो।

व्यसन की विकराल समस्या से निपटने के लिए सभी स्तर के व्यक्तियों डॉक्टर, वैज्ञानिक, पत्रकार, राजनेता, शिक्षक, अभिभावक व धर्मगुरुओं को सामने आना चाहिए। अपना अपना योगदान देना चाहिए।

3.1 व्यसन का समाधान

तालिका 12.2 : व्यसन की समस्या और समाधान

क्र. सं.	कारण	उपाय
1.	वातावरण, परिवेश, समाज, संगत	वातावरण का निर्माण, स्वस्थ एवं अहिंसक समाज का निर्माण
2.	इच्छाशक्ति व मनोबल की कमी	संकल्प शक्ति का विकास, अणुव्रत का ग्रहण
3.	उपाय का अभाव	प्रेक्षा–प्रयोग
4.	अज्ञान	जीवन विज्ञान का शिक्षण प्रशिक्षण

समस्या–समाधान हेतु अनेकान्त दृष्टि से विचार आवश्यक है। एकान्त दृष्टि से समाधान सर्वग्राही नहीं हो सकेगा। पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी एवं आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने सर्वांगीण चिन्तन और प्रक्रिया को प्रस्तुत किया है। स्वस्थ वातावरण के निर्माण के लिए 'अहिंसक समाज संरचना' की परिकल्पना दी। व्यक्ति को शुभ संकल्पों द्वारा सुरक्षित और स्वस्थ जीवन जीने के लिए अणुव्रत की बात कही। जीवन में आने वाली समस्याओं से निपटने के लिए प्रेक्षाध्यान द्वारा आन्तरिक शक्तियों के विकास की बात कही। अच्छा जीवन जीने के लिए बच्चों में प्रारम्भ से ही मूल्यों के विकास के लिए व्यसन के सभी पहलुओं के ज्ञान के लिए जीवन विज्ञान की शिक्षा प्रणाली प्रस्तुत की। अणुव्रत के कार्यकर्ता और साधु–साध्वियों की शक्ति को इस पुनीत कार्य में नियोजित किया।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आज अपेक्षा यह भी है कि नशा–मुक्ति के कार्य में संलग्न स्वैच्छिक संस्थाओं, समुदायों और समान उद्देश्यों से निहित विचारकों और कार्यकर्ताओं की संगठित शक्ति इस ओर लगे। सब मिलकर नशीले एवं मादक पदार्थों के विरुद्ध जन–जागरण में अपना शंखनाद करें।

3.2 व्यसन मुक्ति और प्रेक्षा–प्रयोग

पूज्य आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने व्यसन मुक्ति के लिए प्रेक्षा के प्रयोग दिये। इसके द्वारा व्यक्ति की आन्तरिक समस्याओं का समाधान मिलता है। आन्तरिक शक्तियों का जागरण होता है जिससे व्यक्ति विपरीत परिस्थिति में भी अपने आपको संभाल लेता है। ऐसा व्यक्ति व्यसन मुक्त होकर व्यसन मुक्त बने रह सकता है। व्यसन मुक्ति हेतु प्रेक्षा प्रयोगों में मुख्य रूप से कायोत्सर्ग, दीर्घ श्वास प्रेक्षा, ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग का ध्यान, संकल्प का प्रयोग, कानों पर हरे रंग का ध्यान, अनुप्रेक्षा, आसन, प्राणायाम यौगिक क्रियाएं समाहित हैं।

तालिका 12.3 : व्यसन की समस्या : प्रेक्षा का समाधान

क्र.सं.	व्यसन के कारण	निवारण प्रेक्षाध्यान से
व्यसन प्रारम्भ करने के कारण		
1.	तनाव	कायोत्सर्ग
2.	संगत, मनोबल की कमी	दीर्घश्वास प्रेक्षा
3.	उदासी, अशान्ति	ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग का ध्यान
व्यसन न छूटने के कारण		
4.	आदत, मूढ़ता, मूर्च्छा, आसक्ति	कानों पर हरे रंग का ध्यान
पश्चात् प्रभाव		
5.	स्वास्थ्य, सुरक्षा हेतु भी	आसन, यौगिक क्रियाएं

3.3 व्यसन–मुक्ति शिविर की उपलब्धियाँ

प्रत्येक क्षेत्र को व्यसन मुक्ति के अभियान में सहभागिता द्वारा स्वस्थ समाज के निर्माण में आगे आना चाहिए। राजस्थान में सशस्त्र बल के अधिकारियों ने जयपुर, बीकानेर, जोधपुर में अपने जवानों के बीच 'व्यसन मुक्ति प्रेक्षाध्यान' शिविरों का आयोजन करवाया। अजमेर में इसी प्रकार रेलवे पुलिस में भी शिविर आयोजित करवाये गये। इनके बहुत अच्छे परिणाम आये। अनेक जवानों ने व्यसन–मुक्ति का संकल्प ग्रहण किया एवं व्यसन–मुक्त हुए। इनके परिणामों से उत्साहित होकर अधिकारियों ने अभ्यास क्रम को चालू रखने का निर्णय किया।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

13 अभिव्यक्ति कौशल का विकास

रूपरेखा

1.0 अभिव्यक्ति कौशल

- 1.1 अभिव्यक्ति कौशल का महत्त्व
- 1.2 अभिव्यक्ति का स्वरूप

2.0 अभिव्यक्ति के कारक तत्त्व

- 2.1 सौहार्दपूर्ण व सहयोगात्मक सम्बन्ध
- 2.2 आत्म–विश्वास
- 2.3 स्पष्टता
- 2.4 ग्रहण क्षमता
- 2.5 संवेग–नियंत्रण
- 2.6 सीखने की इच्छा
- 2.7 प्रामाणिकता

3.0 अभिव्यक्ति की दक्षताएं

- 3.1 निर्देशात्मक अभिव्यक्ति
- 3.2 सूचनात्मक अभिव्यक्ति
- 3.3 चुनौतीपूर्ण अभिव्यक्ति
- 3.4 विरेचनात्मक अभिव्यक्ति
- 3.5 प्रेरणात्मक अभिव्यक्ति
- 3.6 सहयोगात्मक सम्प्रेषण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

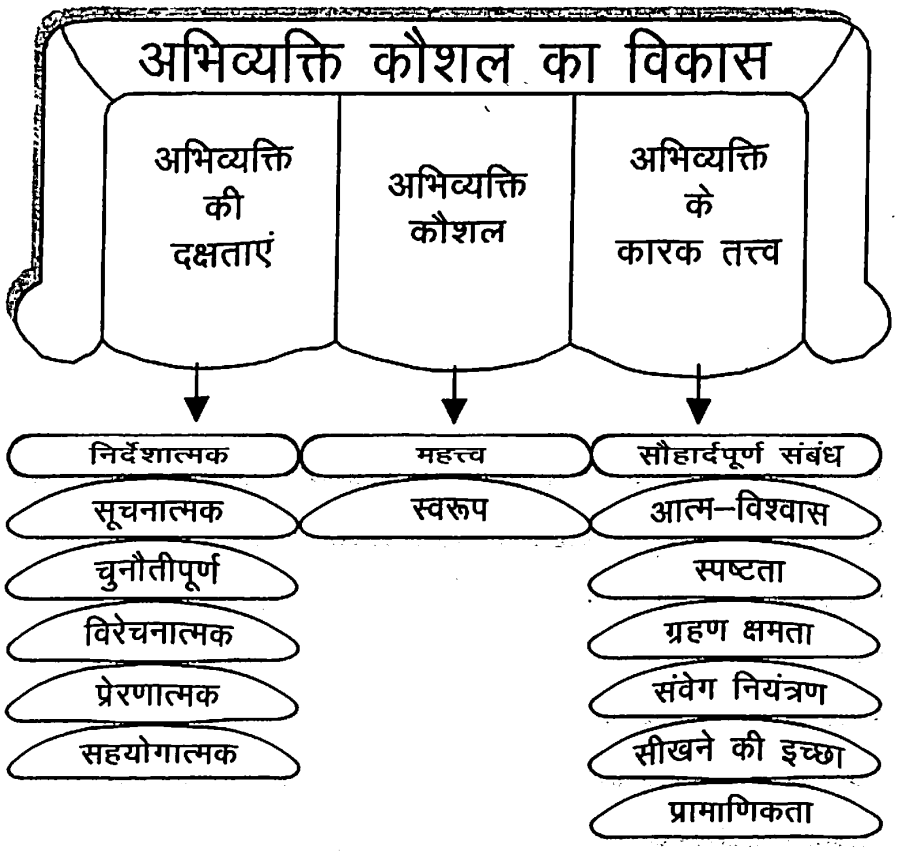

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

13 अभिव्यक्ति कौशल का विकास

1.0 अभिव्यक्ति कौशल

अभिव्यक्ति कौशल से व्यक्ति अपने आपको अच्छे ढंग से प्रस्तुत कर सकता है। इससे अनेक व्यक्ति उसके सहयोगी व मित्र बन जाते हैं। संगठन या संस्थान की संप्रेषण प्रणाली को समझकर कार्य करने से वहां वह अपनी सेवा सफलता से दे सकता है। अंन्ततः वह अपने कार्यक्षेत्र में सफलता को प्राप्त करता है। कमजोर अभिव्यक्ति के दुष्परिणाम भी कष्टदायक होते हैं। इससे व्यक्ति अकेला पड़ जाता है। असमंजस की स्थिति में रहता है। निराश और उदास रहने लगता है। अपने आपको उपेक्षित अनुभव करने लगता है। उसके लिए सामान्य सम्बन्धों में मधुरता एवं सुदृढ़ता को बनाये रखना कठिन होता है। अतः जीवन में सफलता के लिए यह भी अनिवार्य है कि व्यक्ति संप्रेषण के स्वरूप को समझे और स्वयं में संप्रेषण दक्षता को विकसित करे।

अभिव्यक्ति कौशल के विकास का एक महत्त्पूर्ण सूत्र है–अनेकान्त। अनेकान्त सिद्धान्त का आधार भगवान् महावीर का यह सूत्र है–'किं च नए के यं पुरिसे' (आचारांग) अर्थात् वक्ता तभी सफल हो सकता है जब वह बोलते समय यह ध्यान रखे कि सामने सुनने वाला व्यक्ति कौन है ? उसका दृष्टिकोण क्या है ? मैं किस दृष्टिकोण से बात कह रहा हूं ? सर्वांगीण व्यक्तित्व के विकास के लिए अनेकान्त का व्यवहार में उपयोग किया जाये। सही परिप्रेक्ष्य में सही बात कहना व सामने वाले को सही संदर्भ में ग्रहण करना सर्वतोमुखी विकास के लिए आवश्यक है। प्रायः व्यक्ति अपनी बात को अनेक माध्यमों से अभिव्यक्त करता है किंतु उसमें सबसे कठिन है आमने–सामने अपनी बात को प्रभावी ढंग से रखना। सामान्यतया व्यक्ति अपनी बात को कहते समय यह भूल जाता है कि कहने वाला एवं सुनने वाला एक व्यक्ति नहीं किंतु दो अलग–अलग व्यक्ति हैं। दोनों की रुचियां, प्रयोजन, लक्ष्य, आवश्यकताएं एवं दृष्टिकोण भिन्न–भिन्न हैं। प्रशिक्षक को भी बोलते समय इन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

1.1 अभिव्यक्ति कौशल का महत्त्व

अभिव्यक्ति कौशल सफलता की कुंजी है। व्यक्ति अपने कार्यक्षेत्र में सफलता एवं पारस्परिक सम्बन्धों में मधुरता इसी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अभिव्यक्ति कौशल से अर्जित करता है। दूसरों पर अपने अनुभवों एवं विचारों की सशक्त अभिव्यक्ति इसी अभिव्यक्ति की क्षमता से की जाती है। दूसरों के अनुभवों एवं विचारों से भी व्यक्ति तभी लाभान्वित हो सकता है जब सामने वाले व्यक्ति की अभिव्यक्ति स्पष्ट हो।

यदि कोई व्यक्ति अपने भावों एवं विचारों को प्रभावशाली ढंग से लोगों के सामने प्रस्तुत करना चाहे तो उसे अभिव्यक्ति कौशल की दक्षता को विकसित करना होगा। अभिव्यक्ति एवं अभिव्यक्ति कौशल में वही अन्तर है जो जीने एवं कलापूर्ण जीवन जीने में है। संसार का प्रत्येक व्यक्ति जीवन जीता है किंतु सार्थक एवं कलापूर्ण जीवन कितने व्यक्ति जीते हैं। इसी प्रकार संसार का प्रत्येक व्यक्ति अभिव्यक्ति करता है किन्तु सार्थक व सोद्देश्यपूर्ण अभिव्यक्ति कितने लोग करते हैं ? सार्थक व सशक्त अभिव्यक्ति करना अपने आप में कला है, इसे भी अन्य कलाओं की तरह सलक्ष्य प्रयत्नपूर्वक सीखना होता है। जीवन में पारस्परिक सौहार्द के विकास के लिए भी सशक्त अभिव्यक्ति कौशल का विकास आवश्यक है।

1.2 अभिव्यक्ति का स्वरूप

अच्छी अभिव्यक्ति के लक्षणों को अच्छे वक्ताओं एवं प्रशिक्षकों की अभिव्यक्ति में देखा जा सकता है–

- ✡ वे जानते हैं कि उन्हें क्या कहना है?
- ✡ वे श्रोताओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम होते हैं।
- ✡ वे श्रोताओं से तादात्म्य बनाने और बनाये रखने में कुशल होते हैं।
- ✡ वे श्रोताओं की पसन्द और रुचि को जानते हैं।
- ✡ वे अपने वक्तव्य और विषय–वस्तु का सावधानी से चुनाव करते हैं।
- ✡ वे अभिव्यक्ति कौशल में दक्ष होते हैं।
- ✡ वे कब और कहां क्या कहना है, इस बात का भी सावधानी से चुनाव करते हैं।
- ✡ वे अपनी अभिव्यक्ति को स्पष्ट, संक्षिप्त व समयानुकुल बनाये रखते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

- ✡ वे वक्ता के साथ–साथ अच्छे श्रोता भी होते हैं।
- ✡ वे दूसरों के विचारों को समझने की क्षमता रखते हैं एवं आवश्यकता पड़ने पर उसे स्पष्ट भी कर सकते हैं।
- ✡ वे अपनी एकाग्रता को बनाये रखते हैं।
- ✡ वे अभिव्यक्ति को प्रारंभ करना व समाप्त करना भी जानते हैं।

दूसरी ओर एक कमजोर वक्ता यह नहीं जानता है कि उसे क्या कहना है? किसे कहना है? श्रोता की आवश्यकता व रुचि क्या है? किस समय और कहां क्या बात कहनी चाहिए? वे श्रोताओं की प्रतिक्रियाओं के प्रति बेखबर रहते हैं। उन्हें पता ही नहीं चलता या ध्यान ही नहीं देते हैं कि श्रोता क्या चाहते हैं?

2.0 अभिव्यक्ति के कारक तत्त्व

अनेक तत्त्व हैं जो संप्रेषण या अभिव्यक्ति को प्रभावित करते हैं। जैसे–सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध, आत्म–विश्वास, स्पष्टता, ग्रहण करने की क्षमता, भावनात्मक नियंत्रण, सीखने की इच्छा एवं सहयोग की इच्छा।

2.1 सौहार्दपूर्ण व सहयोगात्मक सम्बन्ध

निर्भीक व स्पष्ट अभिव्यक्ति में ये तत्त्व सहायक होते हैं। इन सम्बन्धों का पता वातावरण से लग जाता है। यदि वातावरण में उत्तेजना व खींचातानी हो या एकदम उदासीनता या नीरसता हो तो वहां व्यक्ति की अभिव्यक्ति अच्छी नहीं हो सकती। वहीं वातावरण सहयोगात्मक हो तो वहां अभिव्यक्ति के अच्छे होने की संभावना बढ़ जाती है।

सौहार्दपूर्ण सहयोगात्मक सम्बन्ध एवं वातावरण तब पैदा होता है जब व्यक्ति–

1. परस्पर प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्त करने व सुनने में तत्पर रहें।
2. एक दूसरे को महत्त्व देते हों।
3. एक–दूसरे की रुचि और आवश्यकताओं का सम्मान करते हों।
4. एक–दूसरे के बारे में खुले दिल से बेझिझक विचार–विमर्श करने के लिए इच्छुक हों।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. एक–दूसरे में विश्वास हो कि समय आने पर एक दूसरे की सहायता करेंगे।
6. सभी एक दूसरे की स्वतंत्रता का, निर्णय शक्ति का सम्मान करते हों।
7. सभी यह भी स्वीकार करते हों एवं जानते हों कि उनकी सभी बातें सभी के द्वारा स्वीकार्य ही हों, यह आवश्यक नहीं है।

सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के सूत्र – सौहार्दपूर्ण एवं सहयोगात्मक सम्बन्धों के विकास के लिए निम्नलिखित सूत्र सहायक हो सकते हैं–

1. अनेकान्त दृष्टिकोण–दूसरों के दृष्टिकोण से उसकी बात को सुनने व समझने का प्रयास करना।
2. अहिंसा की भावना– दूसरों की भावना, विचार, सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं अस्तित्व को जैसा है, वैसा स्वीकार करना, उसका सम्मान करना। उनकी कमियों को सहन करना।
3. कथनी–करनी में एकरूपता–व्यक्ति परस्पर जो कहे वैसा आचरण भी करे। छलनापूर्ण व्यवहार न करे।

जिस समुदाय में अधिकांश व्यक्तियों का दृष्टिकोण, भाव एवं विचारधारा उपरोक्त गुणों से युक्त होता है वहां संवाद व अभिव्यक्ति की सुदृढ़ता उभर कर आती है अन्यथा रिश्तों में मधुरता व सहृदयता नहीं रह पाती है। संवादहीनता में अभिव्यक्ति की झिझक व भय को पनपने का मौका मिलता है। यह भी उतना ही सही है कि अभिव्यक्ति की दक्षता के बिना अच्छे सम्बन्ध टिक नहीं सकते और अच्छे सम्बन्धों के बिना अच्छी अभिव्यक्ति नहीं हो सकती। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

2.2 आत्म विश्वास

अभिव्यक्ति को प्रभावित करने वाले कारक तत्त्वों में एक प्रमुख तत्त्व है– आत्म–विश्वास। हम स्वयं को एवं स्वयं के विचारों को कितना महत्त्वपूर्ण मानते हैं इसका अभिव्यक्ति क्षमता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि हम स्वयं को एवं स्वयं के विचारों को, जो कहना चाहते हैं उसको, महत्त्वपूर्ण एवं मूल्यवान नहीं समझते हैं तो उस बात की अभिव्यक्ति प्रभावी नहीं हो सकती।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जो व्यक्ति स्वयं के महत्त्व एवं उपयोगिता को जानता है उसमें आत्म–विश्वास व आत्म–संतोष का भाव रहता है। वह अपने को सुरक्षित अनुभव करता है। ऐसा व्यक्ति सकारात्मक और निषेधात्मक भावों को निर्भीकता से अभिव्यक्त कर सकता है। आलोचनाओं का आसानी से सामना कर सकता है। जो व्यक्ति स्वयं की उपयोगिता और महत्त्व का सही अंकन नहीं कर सकता उसका आत्म–विश्वास कमजोर होता है। वह हीन भावना से ग्रसित रहता है। अपने आपमें असंतोष का अनुभव करता है। ऐसा व्यक्ति अनुभव करता है कि लोगों की उसमें रुचि नहीं है। अतः वह उनसे वार्तालाप करने से कतराता है। आलोचना और समीक्षा से भी घबराता है।

2.3 स्पष्टता

इसका तात्पर्य है कि हम क्या कहना चाहते हैं एवं कैसे कहना चाहते हैं? एक अच्छा संप्रेषक या वक्ता वातावरण को भांपने की क्षमता रखता है एवं वह अपने आपमें भी स्पष्ट रहता है कि किससे क्या कहना है? जिन व्यक्तियों में अभिव्यक्ति कौशल का विकास नहीं होता वे अधिकांशतः अपने आप में स्पष्ट नहीं होते कि उन्हें कहना क्या है? वे क्या कहना चाहते हैं ? उन्हें इस बात का अहसास नहीं है कि बात को कैसे कहना चाहिए? वे अपनी बात को स्पष्ट शब्द व भाषा का रूप नहीं दे पाते हैं। अतः उनकी बात में, उनका मन्तव्य स्पष्टता से अभिव्यक्त नहीं हो पाता है। वे अनेक बार यह मानकर भी चलते हैं कि सामने वाला व्यक्ति उनकी बात को समझता है क्योंकि वह स्वयं भी दूसरों की बात समझता है तो दूसरों को भी उसकी बात अवश्य समझ में आती होगी। इस प्रकार एक कमजोर अभिव्यक्ति दूसरों को अपने ढंग से अर्थ निकालने व समझने के लिए मजबूर करती है जिससे संवादहीनता व आपसी समझ की दूरी बढ़ती चली जाती है।

2.4 ग्रहण क्षमता

अच्छे वक्ता की ग्रहण क्षमता भी अच्छी होनी चाहिए। उसे अच्छे वक्ता के साथ अच्छा श्रोता भी होना चाहिए। अच्छे श्रोता का अर्थ केवल सुनना नहीं है, उसके भी आगे, सामने वाले व्यक्ति के दृष्टिकोण व भावों को पकड़कर समझने से है। दुर्भाग्य से अधिकांश व्यक्ति केवल सुनते हैं, कुछेक लोग ही गहराई तक जाकर चिंतन–मनन पूर्वक दृष्टिकोण को समझने का प्रयत्न करते हैं। अधिकांश मौखिक अभिव्यक्ति को नजर अंदाज एवं उपेक्षित कर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दिया जाता है या जल्दी ही उसे भुला दिया जाता है। प्रभावी ग्रहण क्षमता स्वतः नहीं होती है, उसके लिए–

- ✡ श्रोता के सामने सुनने का भी एक निश्चित प्रयोजन होना चाहिए।
- ✡ श्रोता को एकाग्रता से वक्ता की बात को सुनना चाहिए।
- ✡ उसे मौन रहना चाहिए, नहीं समझ में आता है वहां पूंछना भी चाहिए।
- ✡ दूसरे व्यक्तियों को बोलने का अवसर देना चाहिए।
- ✡ अनावश्यक टीका–टिप्पणी से बचना चाहिए।
- ✡ वक्ता की बात को सुनकर दोहराने की क्षमता होनी चाहिए।
- ✡ उसे अपने शब्दों में रखने की क्षमता होनी चाहिए।
- ✡ श्रोता को वक्ता के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करना चाहिए।

2.5 संवेग नियंत्रण

मनुष्य अपने जीवन में निरंतर भावों और संवेगों में उतार–चढ़ाव का अनुभव करता रहता है। क्रोध जैसे संवेगों के नियंत्रण में आम व्यक्ति कठिनाई का अनुभव करते हैं। क्रोध या आवेशवश व्यक्ति को अपनी वाणी पर नियंत्रण करने में बहुत कठिनाई होती है। इससे व्यक्ति सही ढंग से अपने आपको अभिव्यक्त नहीं कर पाता है।

अधिकांश व्यक्ति अपने भावों को दबा देते हैं। अतः वे यह नहीं जानते कि उनमें किन भावों की प्रधानता है। वे यह भी नहीं जान पाते हैं कि भावों को परिष्कृत कैसे किया जाए? उन्हें कैसे रूपान्तरित किया जाए ?

संवेगों का रूपान्तरण एवं परिष्कार सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध एवं सशक्त अभिव्यक्ति के लिए बहुत आवश्यक है। संवेगों की अभिव्यक्ति इस ढंग से की जानी चाहिए कि उनका रूपान्तरण हो वह स्वयं के एवं दूसरों के विकास में उपयोगी हो जाये। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए–

1. अपने संवेगों के प्रति जागरूक बनें। उनकी सही पहचान करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. ध्यानावस्था में बैठकर कुछ समय तक द्रष्टा भाव से सम्बन्धित चैतन्य केन्द्र व लेश्याओं का ध्यान करें।
3. संवेगों को नकारें नहीं, उन्हें स्वीकार करें, यह भी आपके व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।
4. अपने संवेगों के परिष्कार के लिए गुरुजनों से मार्गदर्शन प्राप्त करें। संवेग–परिष्कार के बिना अच्छी अभिव्यक्ति क्षमता का विकास नहीं हो सकता।
5. अपनी भावना, संकल्प व इच्छा में संतुलन बनायें।

2.6 सीखने की इच्छा

जब हम किसी के साथ संवाद स्थापित करते हैं या समूह में भाषण देते हैं तो दो तरफ से प्रतिक्रियाएं प्राप्त होती हैं। एक तरफ बाह्य व्यक्तियों द्वारा एवं दूसरी तरफ अपने ही भीतर से। अच्छे वक्ता इन दोनों प्रकार की प्रतिक्रियाओं से अपने भाषण, संवाद, उसके प्रभाव, श्रोता की आवश्यकता और स्वयं के बारे में सीखते रहते हैं। इसके अतिरिक्त अच्छे वक्ता दूसरे वक्ताओं को ध्यान से सुनते हैं, उनकी शैली व विशेषताओं को समझने का प्रयास करते हैं एवं उनसे ग्रहण करने के लिए तत्पर रहते हैं।

वक्तृत्व की अनुभूति वस्तुतः निरन्तर सीखने की अनुभूति है जो शनैः शनैः समृद्ध होती जाती है। अच्छे वक्ता अपनी कमियों से सीखते रहते हैं, नये–नये प्रयोग करते रहते हैं। अपनी शैली में परिष्कार करते रहते हैं। एक कमजोर वक्ता जो सीखने से घबराता है वह अनेक मूल्यवान तथ्यों से वंचित रहता है। इससे वह अपनी अभिव्यक्ति क्षमता, स्वयं की समझ व दूसरों के साथ मधुर सम्बन्धों को विकसित करने में सफल नहीं हो पाता है।

2.7 प्रामाणिकता

प्रभावशाली अभिव्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति अपने आपको पूर्ण प्रामाणिकता व सरलता से प्रस्तुत करे। प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न अनुभवों, संवेदनाओं, विचारों व संवेगों से समृद्ध होता है। दूसरे व्यक्ति भी अपने विचारों से अवगत हों अतः यह आवश्यक है कि सही समय पर अपने अनुभवों को बांटने एवं दूसरों को सहयोग देने की इच्छा होनी चाहिए। जितना अधिक एक–दूसरे के बारे में जानेंगे उनके बीच उतना ही अधिक अच्छा संवाद स्थापित होगा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अपने आपको अभिव्यक्त करने में अनेक बाधाएं हैं। अधिकांश व्यक्तियों में यह आशंका और भय रहता है कि दूसरा व्यक्ति मेरी बातों को सही अर्थों में लेगा कि नहीं? कहीं वह मेरा मखौल तो नहीं उड़ाएगा? अच्छे संवाद व अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक है कि आशंका व भय के स्थान पर परस्पर विश्वास का वातावरण पैदा किया जाये। इससे प्रत्येक व्यक्ति अपने भावों, विचारों व संवेदनाओं को पूर्ण ईमानदारी व सरलता से प्रस्तुत कर सकेगा। उसकी अभिव्यक्ति सशक्त व प्रभावशाली बन सकेगी।

स्पष्ट है कि संप्रेषण या अभिव्यक्ति में स्पष्टता, संक्षिप्तता, पूर्णता, परिपक्वता, शालीनता, सहयोग, निरन्तरता, परिवर्तनशीलता, सद्विश्वास, अच्छे संबंध आदि तत्त्व होने चाहिए। इससे विचारों, भावनाओं एवं समझ का आदान–प्रदान दो व्यक्तियों अथवा दो पक्षों के बीच सम्यक् रूप से होता है।

3.0 अभिव्यक्ति की दक्षताएं

अभिव्यक्ति करते समय व्यक्ति के सामने एक स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए। उसके साथ अनेक छोटे–छोटे लक्ष्य भी हो सकते हैं। वक्ता द्वारा उन लक्ष्यों को अभिव्यक्ति काल में प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। विशेष उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अलग–अलग प्रकार की अभिव्यक्ति दक्षताओं का उपयोग करना होता है। अतः अच्छे वक्ता में उन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रकार की दक्षताओं का विकास आवश्यक है।

3.1 निर्देशात्मक अभिव्यक्ति

इसमें सम्प्रेषण निर्देश द्वारा दिया जाता है। इससे व्यक्ति को स्वयं अपनी सहायता करने में मदद मिलती है। निर्देशन के अन्तर्गत व्यक्ति के लक्ष्य प्राप्ति की प्रक्रिया, विशिष्ट व्यवहार या विशिष्ट मूल्यों का निर्देश किया जाता है। यह आवश्यक नहीं कि सामने वाला व्यक्ति उसे उसी रूप में ही क्रियान्वित करे। वह स्वतंत्र है कि अपने ढंग से क्रियान्वित करे या बिल्कुल ही नहीं करे। हो सकता है उसे इसके दुष्परिणामों को भोगना भी पड़े।

निर्देशात्मक सम्प्रेषण की भाषा में आदेश, सुझाव, प्रस्ताव या सलाह का समावेश किया जाता है। इससे व्यक्ति के कार्यों का मूल्यांकन एवं परिष्कार किया जाता है। व्यक्ति को दायित्व–बोध कराने के साथ उसे जिम्मेदारी भी दी जा सकती है एवं कार्यविधि भी समझायी जा सकती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निर्देश आदेशात्मक भाषा में भी हो सकते हैं या निर्देश देने से पूर्व सामने वाले व्यक्ति से सलाह–मशविरा भी किया जा सकता है। निर्देशात्मक अभिव्यक्ति का उपयोग तब तक ही होना चाहिए जब तक कि सामने वाला व्यक्ति स्वयं चलने में सक्षम न हो। दूसरों की स्वतंत्रता का पूरा सम्मान करना चाहिए।

3.2 सूचनात्मक अभिव्यक्ति

सूचनाओं की अभिव्यक्ति से व्यक्ति के ज्ञान में वृद्धि होती है एवं वह स्वतंत्र चिंतन की क्षमता को अर्जित करने में सफल होता है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति में कुछ खतरे हैं जिनसे बचना चाहिए। जैसे अवांछित, अस्पष्ट, अनिश्चित व अयथार्थ सूचनाओं की अभिव्यक्ति। रूढ़िवादी धारणाओं की अभिव्यक्ति से बचना चाहिए। सूचनात्मक अभिव्यक्ति में सफलता के लिए पहले स्वयं अपने आपमें स्पष्ट हो जाएं कि–

1. आप क्या सूचना सम्प्रेषित करना चाहते हैं?
2. सही समय व स्थान का चुनाव करें।
3. निश्चित करें कि यह किस प्रकार की सूचना है–तर्क प्रधान, व्याख्या प्रधान, विश्लेषणात्मक या प्रतिपुष्टि।
4. किस मात्रा में एवं किस स्तर तक की सूचना सम्प्रेषित करनी है?
5. किस रूप में सूचना देनी है–आमने–सामने, लिखित या फोन आदि साधनों से।

3.3 चुनौतीपूर्ण अभिव्यक्ति

ऐसी अभिव्यक्ति व्यक्ति के नकारात्मक दृष्टिकोण और व्यवहार को बदलने के लिए किया जाता है परन्तु यह निश्चित कर लेना चाहिए कि यह सामने वाले व्यक्ति के हित के लिए कर रहे हैं या स्वयं के लिए। हम सत्य को उजागर करने जा रहे हैं या टालमटोल कर उसे खुश करना चाहते हैं। सत्य को मृदुता से कहने पर भी वह सामने वाले व्यक्ति को आघात पहुंचाने वाला होगा। इससे उसे असुविधा होगी। अतः उसको सहायता की भी आवश्यकता है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति के लिए कुछ निम्नलिखित सूत्र महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं–

1. इस प्रकार से कहें कि अपनी गलती के प्रति उसकी जागरूकता बढ़े।
2. प्रश्नों के माध्यम से बात को प्रकट करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. अच्छाई को जागृत करने के लिए उसके सामने चुनौती के रूप में रखें।
4. दृढ़ता से बुराई के परिणामों को बताएं।

3.4 विरेचनात्मक अभिव्यक्ति

इस प्रकार की अभिव्यक्ति से व्यक्ति को तनाव–मुक्ति में सहायता मिलती है। वह अपने भाव एवं संवेगों को सही प्रकार से व्यक्त करने में सफल होता है। वक्ता स्वयं ऐसे उपायों को काम में ले जिससे दूसरों को भी प्रेरणा मिलेगी। वे भी आत्मविश्वास के साथ उन उपायों को काम ले सकेंगे।

1. दूसरों को तनाव–मुक्ति व संवेगों के परिष्कार के उपाय बताएं।
2. उपायों को काम में लेने हेतु प्रोत्साहित करें।
3. व्यक्ति को अपनी रुचि के अनुरूप कार्यों में लगने हेतु सहयोग करें।

3.5 प्रेरणात्मक अभिव्यक्ति

इस प्रकार की अभिव्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को स्वयं से परिचित करवाता है। आत्मविश्वास को बढ़ाता है। स्वयं के निर्माण की जिम्मेदारी लेना सिखाता है। दूसरे व्यक्ति को कार्य करने हेतु प्रेरणा देना न कि उसके लिए काम करना। उसकी क्षमताओं को अधिक से अधिक काम में लेना चाहिए।

1. कार्यों की प्रशंसा द्वारा प्रेरित करना।
2. कार्य के प्रति समझ को विकसित करना।
3. प्रश्न या जिज्ञासा द्वारा मूल कार्य के प्रति ध्यान केन्द्रित करना।
4. स्व–क्षमताओं को समझने के लिए सहायता देना।

3.6 सहयोगात्मक अभिव्यक्ति

इस प्रकार की अभिव्यक्ति में वक्ता को धैर्य से दूसरों को सुनना और समझना चाहिए। अपने निर्णयों को उन पर नहीं थोपना चाहिए।

1. व्यक्ति को प्रोत्साहित करें, प्रशंसा करें, मूल्यांकन करें, समर्थन करें।
2. उनके विचारों, भावों, मूल्यों एवं व्यवहारों का स्वागत करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. ईमानदारी से अपने भावों को अभिव्यक्त करें।
4. स्नेह एवं वात्सल्य दें।
5. अपनी विशेषता एवं कमजोरियों से अवगत कराएं।
6. उसके विकास के लिए प्रयत्नशील रहें।

निर्देशात्मक, सूचनात्मक और चूनौतीपूर्ण अभिव्यक्ति यह दर्शाती है कि प्रशिक्षक अधिकृत रूप में या एक विशेषज्ञ के रूप में बात प्रस्तुत कर रहा है। शेष तीन में ऐसा कोई आभास नहीं होता है। अच्छी अभिव्यक्ति के लिए सभी प्रकार की दक्षता अपेक्षित है। भिन्न–भिन्न स्थिति व प्रयोजन के अनुरूप अत्यन्त सावधानी से अपने विचारों को अभिव्यक्त करना चाहिए।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

14. लेखन क्षमता का विकास

रूपरेखा

1.0 लेखन का प्रयोजन

1.1 स्व–पर विकास

2.0 स्व–प्रबन्धन

2.1 संस्कारों का विवेचन

2.2 मार्ग–दर्शन

2.3 जीवन–विकास का साधन

2.4 जीवन में सन्तुलन

3.0 सम्प्रेषण की शक्ति का विकास

3.1 अध्ययन की गहनता

3.2 समस्याओं का समाधान

4.0 लेखन की प्रक्रिया

4.1 प्रथम चरण

4.2 दूसरा चरण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

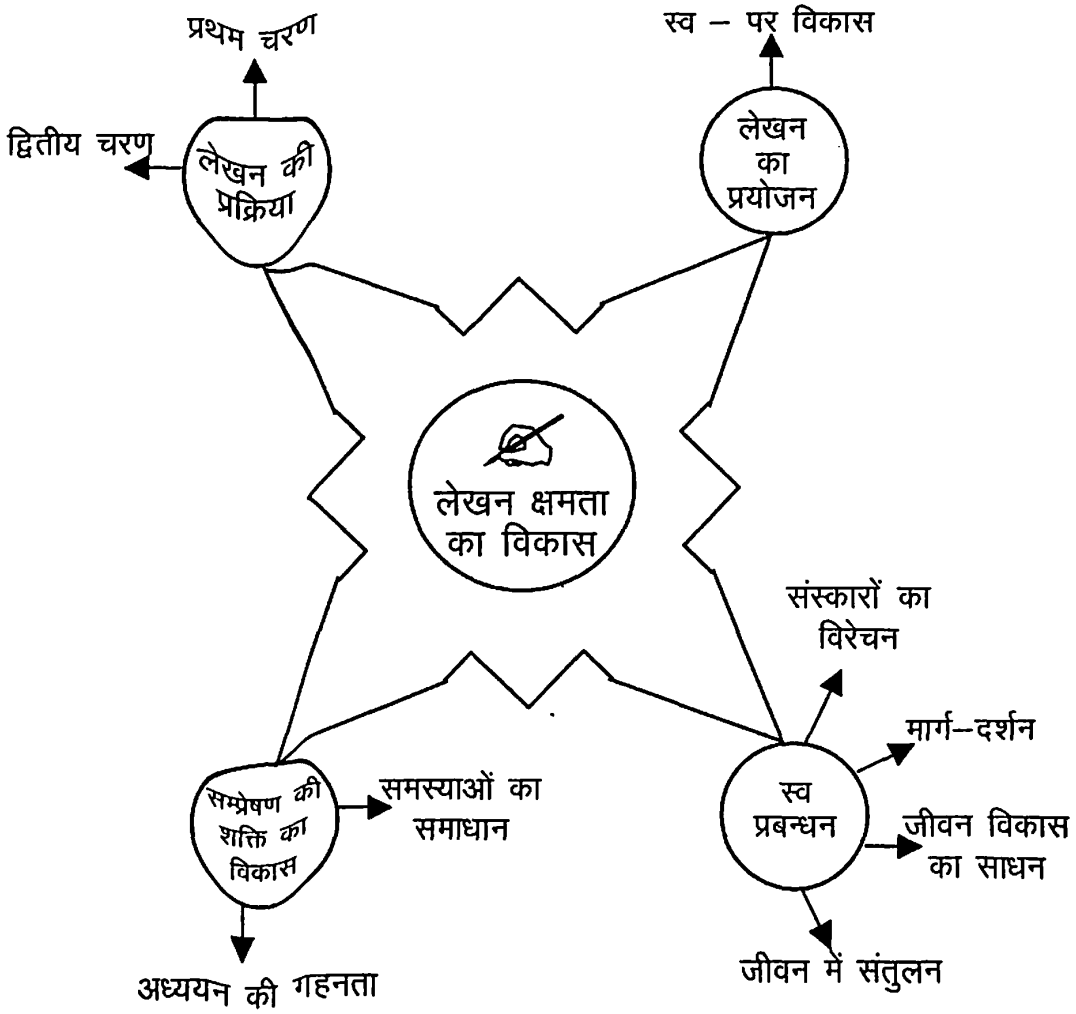

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

14. लेखन क्षमता का विकास

लेखन कला अभिव्यक्ति का एक शक्तिशाली साधन है, माध्यम है। इससे लेखक अपनी बात कहता है और दूसरों के दिलों में उतार देता है। यह एक ऐसी सम्प्रेषण शक्ति है जिससे वह दूर बैठे लाखों लोगों से अपनी बात कह सकता है। लेखन कला के विकास के लिए यह आवश्यक है कि लेखक उसके उद्देश्य के प्रति अधिक से अधिक स्पष्ट बने। लेखन के उद्देश्य की स्पष्टता लेखन के प्रति समर्पण व विकास में अभूतपूर्व योगदान देती है। उद्देश्य जितना अधिक स्पष्ट, महान व अपरिहार्य होगा, लिखने की प्रेरणा भी उतनी ही शक्तिशाली होगी। इससे व्यक्ति लाभान्वित होगा एवं समाज को भी लाभ मिलेगा।

1.0 लेखन का प्रयोजन

उद्देश्य में स्पष्टता आये यह आवश्यक तो है लेकिन है कठिन। हमारा गलत दृष्टिकोण अनेक बार बाधक बनता है। हमें लिखने से रोकता भी है। ऐसी ही एक बाधा है– नाम, ख्याति, प्रशंसा एवं कीर्ति की आकांक्षा।

नाम, ख्याति, कीर्ति की आकांक्षा मनुष्य की एक मौलिक वृत्ति है। इसकी संतुष्टि के लिए व्यक्ति अनेक बार जोखिम भरे कार्य भी कर लेता है। इसकी प्रेरणा से लेखन का प्रारम्भ भी हो सकता है किन्तु वह दीर्घकालिक नहीं बन पायेगा। प्रारम्भ होना कोई बुरी बात नहीं है किन्तु यहीं तक सीमित रहना अच्छा नहीं है। स्वयं के परिपूर्ण विकास की दृष्टि से वृत्तियों का तुष्टिकरण कभी भी वांछित नहीं होता है। करणीय वही है जो आन्तरिक दोषों से व्यक्ति को मुक्त करा सके। अपने से परिचित करा सके। अध्यात्म की दृष्टि से "लेखन" के लिए ऐसे प्रयोजन की खोज करनी होगी जो 'स्व' और 'पर' दोनों के विकास में सक्षम हो।

लेखन कला से लेखक को कालांतर में ख्याति एवं प्रसिद्धि प्रासंगिक रूप में मिल सकती है। यह गौण बात है। यह तथ्य तो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र एवं कार्य से जुड़ा हुआ है। इसको नकारा नहीं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जा सकता किन्तु यहीं पर अटक जाना, रुक जाना, अध्यात्म की दृष्टि से, स्वयं के विकास की दृष्टि से बहुत बड़ी बाधा है।

1.1 स्व–पर विकास

अपने व दूसरों के विकास की दृष्टि से लेखन कला के प्रयोजन क्या–क्या हो सकते हैं ? वे व्यक्तित्व विकास में किस प्रकार सहयोगी होते हैं, इन प्रश्नों पर चिन्तन–मनन करना है। उपरोक्त दृष्टि से लेखन–कला के निम्नलिखित मुख्य प्रयोजन बनते हैं :–

1. स्व–प्रबन्धन के लिए
2. सम्प्रेषण के लिए
3. अध्ययन को पैना एवं सूक्ष्म बनाने के लिए
4. समस्या समाधान के लिए

2.0 स्व–प्रबन्धन

लेखन कला स्व–विकास का भी एक महत्त्वपूर्ण साधन है। इससे व्यक्ति अपने आप से सम्पर्क स्थापित कर सकता है। अपने अचेतन मन से सम्पर्क साध सकता है। इससे संस्कारों का विरेचन होता है। जीवन–विकास में सहयोग मिलता है।

(1) अपने प्रति जागरूकता : लेखन सम्पर्क का महत्त्वपूर्ण साधन है। इससे हमें जहां दूसरों से सम्पर्क साधने में सफलता मिलती है वहीं इसके माध्यम से हम अपने आप से भी सम्पर्क साध सकते हैं। लेखन आत्म–निरीक्षण का महत्त्वपूर्ण माध्यम बनता है। हम अपने बारे में जब दैनिक गतिविधियों को तटस्थ होकर लिखना शुरू करते हैं तब इससे अपने आप के प्रति जागरूकता बढ़ती है। यह जागरूकता हमारे आध्यात्मिक विकास की महत्त्वपूर्ण सीढ़ी बनती है।

(2) अचेतन मन से सम्पर्क : तटस्थ होकर स्वयं के बारे में लिखने से अनेक अज्ञात तथ्यों का, जो हमारे भीतर हैं, पता चलता है। उस सामग्री से सम्पर्क होता है जो हमारे चेतन मन के सीधे सम्पर्क में नहीं हैं किन्तु गहरे में, अचेतन मन में छिपी पड़ी है। इस अवबोध से लेखन द्वारा अतिरिक्त आह्लाद की अनुभूति होती है। परिणाम स्वरूप अनेक बार ऐसा लगता है कि क्या ऐसा मैं लिख सकता हूं ? क्या यह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मैंने लिखा है ? आदि। यह आनन्द कहीं बाहर से नहीं किन्तु भीतर के स्रोत उद्घाटित होने से प्रवाहित होता है।

2.1 सस्कारों का विरेचन

स्वयं के बारे में तटस्थ होकर लिखने से हमारी बुरी भावना, बुरे संस्कार एवं अनेक बुराइयों को बाहर निकालने का अवसर मिलता है। उनका विरेचन होता है। धीरे–धीरे उनके प्रभाव कमजोर पड़ने लगते हैं। हमारी आन्तरिक शुद्धि होती है। लिखने के बाद हल्केपन का अनुभव इस बात का प्रमाण है।

2.2 मार्ग–दर्शन

स्व–लेखन एक ऐसा मित्र और मार्गदर्शक है जो सदैव हमारे साथ रहता है। उसके पास हम निसंकोच अपना हृदय खोल सकते हैं। कठिन से कठिन घड़ियों में यह अतीत को हमारे सामने अनावृत्त कर मार्ग–दर्शन करता है। दिशा–बोध देता है। अतीत से वर्तमान को संवारने की प्रेरणा प्रदान करता है। भविष्य का दर्पण बनता है।

2.3 जीवन–विकास का साधन

व्यक्ति का जीवन जितना व्यवस्थित एवं योजनाबद्ध होता है उतनी ही सफलता की संभावना बढ़ जाती है। इससे जीवन में निश्चिंतता भी रहती है। अपने बारे में नियमित लेखा–जोखा जीवन–विकास का महत्त्वपूर्ण साधन है। यह अपने अनुभवों से सीख लेने का महत्त्वपूर्ण उपाय है।

2.4 जीवन में संतुलन

तटस्थ लेखन से हमारी अच्छाइयां एवं खामियां दोनों उभर कर सामने आती हैं। अच्छाइयों से हमें प्रोत्साहन मिलता है। कमियों से अहं पर प्रहार होता है। कमियों को दूर करने की आन्तरिक इच्छा जागती है। इससे जहां अहं विचलित होता है, वहीं अच्छाइयों के बोध से हीन भावना भी दूर होती है। स्वयं के बारे में सही अवधारणा बनती है। आत्म–विश्वास बढ़ता है। अपनी अच्छाइयों एवं बुराइयों से परिचय होता है। अपनी क्षमताओं के सही बोध में सहायता मिलती है। जीवन में संतुलन को साधने में अभूतपूर्व सहयोग मिलता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3.0 सम्प्रेषण की शक्ति का विकास

अध्यात्म जीवन का अभिन्न अंग है। इससे जीवन में शान्ति व समाधि की अनुभूति होती है। इससे ही जीवन में गहराई व जीवन की सार्थकता का बोध होता है। अध्यात्म के महत्त्व को जन–जन तक पहुंचाने के लिए सम्प्रेषण कौशल या अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास अत्यन्त अपेक्षित है।

अनेक महापुरुष अपनी अभिव्यक्ति की क्षमता व कौशल से ही अपने महत्त्वपूर्ण विचारों को जन–जन तक पहुंचाने में सफल हुए हैं। गणधरों की रचनाधर्मिता का ही सुफल है कि सदियों के बाद भी तीर्थंकरों की वाणी से मुमुक्षु जन लाभान्वित हो रहे हैं। आचार्य भिक्षु ने अपने रचना कौशल व अभिव्यक्ति की क्षमता से ही भगवान महावीर के सिद्धान्तों को लोगों तक लोक भाषा में पहुंचाया। गणाधिपति गुरुदेव तुलसी एवं आचार्य महाप्रज्ञ ने अपनी ओजस्वी अभिव्यक्ति व रचनाधर्मिता से लाखों लोगों तक अध्यात्म का संदेश पहुंचाया है।

सामान्यतया वक्तृत्व कला से जहां आमने–सामने लोगों को ही लाभ पहुंचता है वहीं लेखन–कला से दूर–दूर तक बैठे लोगों से परोक्ष सम्पर्क होता है। हजारों किलोमीटर की दूरियां भी लेखन के सम्प्रेषण में बाधक नहीं बन पाती है। लेखन कला से निष्पन्न साहित्य से व्यक्ति अपने समय की अनुकूलतानुसार लाभ उठा सकता है जबकि वक्तृत्व कला में या भाषण सुनने के लिए जहां सशरीर उपस्थिति सामान्यतया अवश्यंभावी हो जाती है। ज्ञान के संरक्षण व सम्प्रेषण में लेखन कला का अद्वितीय स्थान रहा है। अतः अध्यात्म को यदि अधिक से अधिक जनग्राही बनाना है तो इसे आज की भाषा में, शब्दावली में अभिव्यक्ति के हर कोणों से अभिव्यक्त करना जरूरी है। यह अपेक्षा हर काल में बनी रहेगी जिसकी आपूर्ति अध्यात्म का जीवन जीने वाले लोगों से ही संभव हो सकेंगी।

3.1 अध्ययन की गहनता

ज्ञान के विकास के लिए तत्संबंधी साहित्य का अध्ययन आवश्यक है। अध्यात्म अभ्यास की वस्तु है – अध्ययन की कम किन्तु अध्यात्म की सूक्ष्मताओं को समझने के लिए अध्ययन अनेक बार आवश्यक हो जाता है। अनुभवी साधकों के अनुभव प्रेरक बनते हैं, गति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देते हैं। यदि अध्यात्म को दूसरों तक पहुंचाना है तो अध्यात्म के अध्ययन की आवश्यकता अधिक तीव्र हो जाती है।

अध्ययन को प्रभावशाली, पैना, गहन एवं सूक्ष्म बनाने के लिए लेखन अत्यन्त सहायक होता है। लिखने के लिए बहुत अधिक सूक्ष्मता से पढ़ना होता है। अनेक पहलुओं, दृष्टिकोणों से विषयवस्तु को ग्रहण करना, समझना होता है। इससे अध्ययन तो गहरा बनता ही है साथ–साथ सृजनात्मक भी बनता है, व्यवस्थित बनता है। यही कारण है कि पाश्चात्य देशों के अनेक विश्वविद्यालयों में परीक्षा की मूल्यांकन विधि को "विषयानुबंधी लेख लेखन" (Assignment System) में बदला गया है। इससे व्यक्ति की प्रस्तुतीकरण की क्षमता में विकास होता है। परिश्रम संरचनात्मक (Constructive) तथा सृजनात्मक (Creative) बनता है।

3.2 समस्याओं का समाधान

समस्याएं व्यक्ति को असमाधिस्थ बनाती हैं। समस्या चित्त की व्याकुलता एवं बैचेनी में निमित्त कारण बनती हैं। समाधान चित्त–समाधि में सहायक कारण बनता है। अध्यात्म साधना का अर्थ है – चित्त को समाधिस्थ रखना, समाहित रखना। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी–अपनी समस्याएं होती है। विशेषज्ञ अपनी अभिव्यक्ति क्षमता द्वारा ही लोगों तक उसका समाधान पहुंचाने में सफल होते हैं। समस्याओं का समाधान करते हैं। लेखन का उपयोग स्वयं की जिज्ञासा या समस्या के समाधान में भी कर सकते हैं।

समस्या समाधान के लिए भी लेखन महत्त्वपूर्ण साधन है। कई महिनों से एक समस्या बार–बार सामने आ जाती थी कि क्यों लिखें ? एक दिन पुस्तक पढ़ते–पढ़ते समाधान मिला कि "लेखन क्यों ?" इस पर प्रतिदिन एक पृष्ठ लिखा जाये। यह क्रम महीनों तक चला। इससे अनेक तथ्य सामने आये। वे मेरे लिए नये थे जिसको मैं स्वयं नहीं जानता था। बाद में उसे व्यवस्थित किया। प्रस्तुत लेख उसी लेखन का परिणाम है। समस्या का समाधान है।

4.0 लेखन की प्रक्रिया

अपने भावों को अभिव्यक्ति देना एक कला है। प्रत्येक कला के विकास के लिए अभ्यास आवश्यक है। यह तथ्य लेखन कला के लिए भी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उतना ही सत्य है, आवश्यक है जितना कि अन्य कलाओं के लिए। लेखन कला के दो रूप हैं – सोद्देश्य लेखन एवं स्वान्तःसुखाय लेखन। अच्छे लेखक विभिन्न प्रयोजनों से विभिन्न अवसरों पर प्रभावशाली ढंग से लेखन करते हैं। अपने भावों को पाठकों तक पहुंचाते रहते हैं। यह कौशल श्रम साध्य है। इसमें समय लगता है। यह सौद्देश्य लेखन का क्रम है।

दूसरा प्रकार है – स्वान्तःसुखाय। इसमें व्यक्ति अपने लिए कुछ न कुछ लिखता रहता है। अपने भावों को अभिव्यक्ति देता है। यह एक सोपान है, पूर्व चरण है – सोद्देश्य लेखन का। इसके माध्यम से एक दिन सोद्देश्य लेखन में भी पटु व दक्ष बना जा सकता है। लेखन कला के अभ्यास के लिए एक सरल क्रम है, विधि है जिसका अभ्यास कर व्यक्ति लाभान्वित हो सकता है।

अच्छे लेखन के लिए दो महत्त्वपूर्ण शक्तियों की आवश्यकता होती है – सृजनशीलता एवं सम्पादन कौशल। सम्पादन कौशल से लेखक अपने लेख को पाठकों के लिए सुपाठ्य बनाता है। लेखन को अच्छा प्रारूप प्रदान करता है, व्यवस्थित बनाता है। तर्क पूर्ण एवं शृंखला बद्ध रूप देता है। सृजनशीलता से नई–नई बातों को लेखन में लाता है। नये–नये सम्बन्धों को उजागर करता है। मौलिकता को प्रस्तुत करता है। प्रायः अच्छे लेखकों में इन दोनों ही शक्तियों की उपस्थिति देखी जाती है।

इन दोनों योग्यताओं के विकास के लिए एक सरल प्रक्रिया है, प्रविधि है जिसको जानकर हम लाभान्वित हो सकते हैं। सम्पादन के लिए समीक्षात्मक शक्ति की आवश्यकता होती है, वहीं सृजनात्मकता के लिए अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। अन्तर्दृष्टि एवं समीक्षादृष्टि का अस्तित्व सभी में होता है। इसको जगाने की आवश्यकता है। इसकी प्रक्रिया को समझना आवश्यक है।

लेखन के अभ्यास को दो चरणों में बांट दिया जाए। प्रथम चरण में केवल लेखन है। दूसरे चरण में समीक्षा एवं कांट–छांट।

4.1 प्रथम चरण

प्रथम चरण में आप लिखना शुरू करें। स्वान्तः सुखाय लिखें। जो भी लिख सकें तेजी से लिखें। बिना रुके, बिना सोचे जो भी भीतर से आ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

रहा है उसे कागज पर उतार दें। जैसा भी आ रहा है उसकी चिन्ता न करें। अपने चेतन मन को हस्तक्षेप नहीं करने दें। जो भी अवचेतन से आ रहा है उसे आने दें, रोके नहीं। इस चरण में आप केवल लिखें। अपने भावों की अभिव्यक्ति कागज पर करने की योग्यता प्राप्त करें। इस अभ्यास से नई बातें आपके दिमाग में उभरेगी। नई–नई बातें आप लिख सकेंगे जो आपके लिए प्रसन्नता देने वाली होगी। इससे आपकी अन्तर्दृष्टि को विकसित होने एवं प्रकट होने का अवसर मिलेगा। आपके लेखन में मौलिकता आयेगी। आपकी सृजनात्मक शक्ति का विकास होगा। इसमें बहुत कमियां भी होंगी जिन्हें दूसरे चरण में पूरा करना होगा।

इस लेखन में आपको क्रमबद्धता और व्यवस्था की कमी नजर आयेगी। लेख उतना आकर्षक नहीं होगा। लेखन को क्रमबद्ध व व्यवस्थित बनाने के लिए आलोचनात्मक समीक्षा की जरूरत होती है। इसके लिए दूसरे चरण का प्रयोग करते हैं। पाठक तक पहुंचने के लिए दूसरी योग्यता की अत्यधिक अपेक्षा होती है।

4.2 दूसरा चरण

द्वितीय चरण में आप अपने लेखन की समीक्षा करें। कांट–छांट करें। शीर्षक एवं अन्तःशीर्षक बनाएं। पूरे आलेख की रूपरेखा तैयार करें। रूपरेखा के अनुरूप पुनः लेख को व्यवस्थित करें। प्रारम्भ में आपको इसमें इतना आनन्द नहीं आयेगा। इसकी क्रियाविधि को समझने में कुछ समय लगेगा। धीरे–धीरे अपने आप आपमें समीक्षा की शक्ति भी विकसित हो जायेगी। इससे लेखन में क्रमबद्धता व सौन्दर्य आयेगा। लेखन पाठकों के पढ़ने योग्य बनेगा। प्रारम्भ में सृजनात्मक कौशल व समीक्षात्मक कौशल का अभ्यास अलग–अलग किया जाता है। इससे दोनों को विकसित होने का पूरा–पूरा अवसर मिलता है। प्रारम्भ में एक साथ करने से खतरा अधिक है। कालांन्तर में अच्छे अभ्यास के बाद दोनों ही शक्तियों का उपयोग साथ–साथ होने लगता है। लेखन में मौलिकता एवं नवीनता के साथ–साथ क्रमबद्धता भी सहज रूप में प्रकट होने लगती है। लेखन स्वयं के लिए आह्लादकारी व उत्साहवर्द्धक होने के साथ–साथ दूसरों के लिए भी पठनीय एवं आनन्ददायक बनता है।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सार–संक्षेप

गुलाब के चमन हो तुम,
निज पर भरोसा करो तुम।।

भीतर काँटों की चुभन है तो
फुलों की भीनी महक भी।।
यदि बनना है बड़ा,
यदि पाना है प्यार,
यदि गढ़ना है नया इतिहास,
तो निज गुण–अवगुण का भान करना होगा।।1।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

मेरे में गुण हैं,
उसका गुलिस्तां बन सकता है,
गुलिस्तां खिल सकता है,
महक विश्वव्यापी बन सकती है,
मैं मानवता के काम आ सकता हूँ।
स्व में यह विश्वास जगाना होगा।।2।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

अवगुण शूलों से निज की रक्षा कर,
सद्गुण फूलों को चुनना होगा,
जब गुण गुलदस्ता होगा हाथों में,
महक से, महक उठेगा उपवन,
सौगन्ध तुम्हारी। सुगन्ध दिग्दिगन्त तक फैलेगी,
निज विशिष्ट गुण को लक्ष्य बनाना होगा।।3।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

मुझे गुण शस्त्रों को उठाकर,
अवगुणों से लड़ना है,
विशेषताओं को विकसित कर
कमजोरियों को कम करना है,
उपयोगी, निर्मल गतिशील बनना है
विजय यात्रा का यह संकल्प जगाना होगा।।4।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बस पथिक! आगे बढ़ो तुम,
मंजिल तुम्हारी प्रतिक्षा में है,
तुम चलो, मंजिल तुम्हारे पास आयेगी,
तुम रुको, मंजिल रुक जायेगी,
तुम दोड़ो, मंजिल भी तुम्हारी ओर दौड़ेगी,
बस, केवल सलक्ष्य निरन्तर चलना होगा।।5।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

चलो, गुण–अवगुण से भी परे,
निर्गुण, निराकार आत्म–रूप हो तुम,
मृण्मय दीपक में, चिन्मय बाती हो तुम,
अपने भीतर झांककर,
अध्यात्म बगिया में सदाचार सुमन खिलाना होगा।।6।।
गुलाब के चमन हो तुम,.....।

घोर अमा की रजनी में भी,
आत्म ज्योति प्रदीप हो तुम,
सत् चित् आनन्द रूप,
परमात्म स्वरूप हो तुम,
जीवन परम ज्योति में लीन हो जाये
बस, निज को पहचानना होगा।

गुलाब के चमन हो तुम,
निज पर भरोसा करो तुम।।7।।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट

प्रेक्षाध्यान : व्यक्तित्व विकास कार्यशाला

1. संभागियों के अनुभव
    (1) शाहदारा, दिल्ली
    (2) गांधीनगर, दिल्ली
    (3) छोटी खाटू, राजस्थान
2. कार्यशाला का स्वरूप
3. कार्यशाला में प्रदत्त विषयों का संक्षिप्त सार
4. रजिस्ट्रेशन (प्रवेश) फार्म
5. अनुभव प्रपत्र
6. गीत – समय का अंकन हो
7. अणुव्रत : मानवीय आचार संहिता
8. सार्वजनिक भाषण कला
9. सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ
10. प्रमाण–पत्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–1

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला–1

दिनांक 01.08.2002 से 31.08.2002

आयोजक : जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, शाहदरा, दिल्ली

अनुभव के स्वर

प्रस्तुति – मुनि यशवन्त कुमार

वर्तमान में अनेक प्रकार की समस्याएं हैं जो हमारे विकास में अवरोध पैदा करती है। उनमें मुख्य है – तनाव, अस्वस्थता, समय का अभाव, एकाग्रता का अभाव आदि। यह भी सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर अनेक प्रकार की शक्तियां भी विद्यमान हैं। उन शक्तियों को उजागर कर विकास के सोपान को छुआ जा सकता है। आवश्यकता केवल अपने भीतर की शक्तियों को जानने, समझने एवं समस्याओं का निराकरण कर विधिवत् क्रियान्वित करने की है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ के विद्वान् शिष्य मुनिश्री धर्मेशकुमारजी के सान्निध्य में व्यक्तित्व विकास कार्यशाला का आयोजन श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा शाहदरा ने किया। एक महीने की इस कार्यशाला में आठ विषय निम्न प्रकार से थे –

1. स्वास्थ्य प्रबंधन।
2. स्मृति विकास।
3. तनाव प्रबन्धन (कायोत्सर्ग)।
4. उच्च मानसिक शक्तियों का विकास (अन्तर्यात्रा)।
5. एकाग्रता एवं कार्यदक्षता।
6. लक्ष्य प्राप्ति।
7. भावात्मक विकास।
8. समय प्रबन्धन।

इन विषयों पर मुनिश्री का एक दिन वक्तव्य एवं दो दिन सम्भागियों की अभिव्यक्ति रहती थी। कार्यशाला में करीब 85 व्यक्तियों ने प्रवेश लिया। इनको दो भागों में बांट 45–45 मिनट की प्रतिदिन की दो कक्षाएं चलती थी। कार्यशाला में सम्भागियों द्वारा प्राप्त अनुभव उत्साहवर्द्धक रहे। वे अनुभव उनके अपने शब्दों में इस प्रकार हैं –

➢ कार्यशाला गुणों और अच्छाइयों से भरपूर, समय की पाबन्दी, तनाव रहित ज्ञान भरा वातावरण, हर एक क्षण का सदुपयोग। पहले

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दिन आये तो सोचा मुनिश्री कह रहे हैं तो रजिस्ट्रेशन करा लेते हैं। फिर दूसरे दिन आये तो लगा यह सौदा घाटे का नहीं है। एक घण्टा आना, 1000 कैलोरी ऊर्जा पाना है और 31 अगस्त को घर जाकर चिट्ठा मिलाया तो 100 परसेन्ट प्रोफिट वाला सौदा साबित हुआ। इस कार्यशाला में भाग लेकर मैं अपने आपको भाग्यशाली समझता हूं।

–धनपत लूणिया

➢ मुझे तो अप्पू घर से ज्यादा मजा यहां आया। हर एक विषय एक नये तरह के झूले जैसा है। कोई तेज झुलाता है तो कोई धीरे। मनोरंजन के अलावा यहां से मैंने काफी अलग ढंग से सोचना सीखा है। मुझे सबसे अच्छा विषय "लक्ष्य–प्राप्ति" लगा। भविष्य में भी मैं ऐसी कक्षाओं में अवश्य भाग लूंगा।

–विशाल लूणिया

➢ हम अपने विकास को कैसे सफल करें ? यही हमने इस कार्यशाला से सीखा है। समय को कैसे निकालना, मैंने इस कार्यशाला से सीखा है। आजकल यह बात बोलते हुए शर्म महसूस होती है कि मेरे पास समय नहीं है। इस कार्यशाला में भाग लेने का प्रयत्न सुखद एवं प्रेरणादायी रहा।

–सरिता छाजेड़

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की कला का विकास किया है। आत्मनिरीक्षण का प्रयोग सबसे अच्छा लगा और इस प्रयोग ने मेरे जीवन को बहुत प्रभावित किया है। मेरे व्यवहार में बदलाव आया है।

–नीति दूगड़

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में दो बातों का प्रत्यक्ष लाभ हुआ– 1. आत्म–निरीक्षण की प्रक्रिया एवं, 2. निषेधात्मक भावों में कमी आई। इसके साथ शक्ति केन्द्र से ज्ञान केन्द्र की प्राणयात्रा द्वारा स्मृति का संवर्द्धन भी हुआ।

–श्रीमती सरला बैद

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में भाग लेने का अनुभव सुखद और प्रेरणादायी रहा।

–अनु पींचा

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में मैंने जो अनुभव किया वह मुझे तो अच्छा लगा है, साथ ही सबके लिए आदर्श हो सकता है। मुख्य

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बिन्दु ये हैं– 1. समय का नियोजन, 2. मुस्कुराता चेहरा, 3. लचीलापन, 4. अन्तर्मुखी होने की प्रेरणा।

–ललित चोरड़िया

➢ मुझे बहुत जल्दी गुस्सा आने की आदत है। जब से मुनिश्री ने तनाव के बारे में समझाया है तब से मैं ज्योति केन्द्र पर सफेद रंग का ध्यान एवं दीर्घश्वास का प्रयोग करता हूं और कुछ–कुछ-परिणाम भी सामने आने लगे हैं।

– लक्ष्मीपत छाजेड़

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से मुझे बहुत लाभ हुआ। अपनी शक्तियों को जागृत करना और उन्हें ठीक ढंग से नियोजित करना सीखा।

–रचना बैद

➢ इस एक महीने की व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से बहुत कुछ सीखने को मिला है। जैसे– एकाग्रता, ध्यान, भावक्रिया, आत्मनिरीक्षण।

–मंजू लूणिया

➢ जीवन में मुझे ऐसी कार्यशाला में भाग लेने का मौका बार–बार मिलता रहे।

– पन्नालाल बैद

➢ कार्यशाला में जीवन जीने की कला सिखाई और महान् बनने का मार्ग बताया है।

–कमल बरमेचा

➢ व्यक्तित्व विकारा कार्यशाला आज की समस्याओं का समाधान है।

–कुसुम लूणिया

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला–2

दिनांक 03.01.2003 से 27.01.2003

आयोजक : जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, गांधीनगर, दिल्ली 110 031

प्रशिक्षणार्थियों के विविध अनुभव

➢ इस कार्यशाला से मेरा शारीरिक व मानसिक मनोबल बढ़ा। ललाट पर राफेद रंग का ध्यान करने से काफी शान्ति का अनुभव होता है। अध्यात्म के प्रति मेरी रूचि और बढ़ी है। मुझे स्पीच देने में थोड़ी झिझक सी महसूस होती थी कि मैं बिना देखे बोल पाऊंगी या नहीं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मगर इस कार्यशाला में भाग लेने के बाद मेरा आत्मविश्वास बढ़ा है। मैंने पहले दिन से अन्त तक बिना देखे और कई बार तो तत्काल उठकर भी मैं बोली मगर मुझे हिचकिचाहट नहीं हुई। प्रतिदिन 15 मिनट का समय (प्रेक्षाध्यान) अपने लिए अवश्य लगाऊंगी।

–राज गुनेचा, दिल्ली

➢ मेरा भावनात्मक एवं आध्यात्मिक अनुभव बहुत अच्छा रहा। मुनिश्री के यहां प्रवास के दौरान हमें बहुत सारी ज्ञान की बातें सीखने को मिली।

–सुरभि चोरड़िया (जैन), दिल्ली

➢ महाप्राण ध्वनि का प्रयोग तथा सामान्य श्वास, दीर्घश्वास, लयबद्ध श्वास आदि बहुत कुछ सीखने को मिला।

–सुरूचि चोरड़िया (जैन), दिल्ली

➢ इस कार्यशाला में आने से पहले मुझे थोड़ा गुस्सा आता था, परन्तु यहां आकर मैंने उस पर काबू पा लिया है। इस कार्यशाला में आकर नमस्कार महामंत्र का ध्यान आदि करके मेरी भावनाओं में बहुत अन्तर आया है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

–प्रज्ञा जैन, दिल्ली

➢ मुझे काफी गुस्सा आ जाता था, लेकिन यहां आकर हमने उस पर संयम पाना सीखा है। खड़े होकर बोलने में जो हिचकिचाहट थी वह अब कम हुई है। पाठ्यक्रम बहुत अच्छा लगा। हमें बहुत जानकारियां प्राप्त हुई।

–रंजना दूगड़, दिल्ली

➢ इस कार्यशाला में आकर हमने समय और स्वास्थ्य दोनों का महत्त्व समझा। अब मैं हर काम समय पर करती हूं। पहले मुझे थोड़ा गुस्सा आता था पर यहां कराए गये प्रयोगों से मैंने उस पर भी काबू पा लिया है। जो प्रश्न–उत्तर मुझे याद नहीं होते हैं, उन्हें याद करने से पहले मैं ध्यान करती हूं। उससे मुझे याद करने में आसानी हो गई है। मैं माइक पर आने से भी डरती थी, यहां आकर मैंने माइक पर बोलना सीखा।

–प्रियंका बैद, दिल्ली

➢ मेरे कान के पर्दे में छेद होने की वजह से दिक्कत रहती है, पर मुनिश्री ने यौगिक क्रियाएं करवाई और मैं उसे 20 दिनों से लगातार कर रही हूं। पहले तो दर्द व सूजन की शिकायत कम हुई, अब लगने लगा है कि मेरा कान ठीक हो जायेगा। समय प्रबंधन से तनाव नहीं होता।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अन्य कार्य व अपने लिए पर्याप्त समय निकल गया है। ध्यान से मन में शान्ति का अनुभव हुआ और ऐसे लगा जैसे प्रतिरोधक शक्ति प्रबल हो रही है। स्मृति के लिए भी सुझाव दिये गये थे व भंवरे की गूंजन वाली ध्वनि से फर्क महसूस हो रहा है। मैं बच्चों के साथ बहुत जल्दी तनाव में आ जाती हूं। आत्म–निरीक्षण से समय का, मैंने क्या सही या गलत किया उसका अनुभव होने लगा है। पाठ्यक्रम का चुनाव बड़ी सुझबूझ व वक्त की मांग के अनुसार किया गया। मुझे बहुत पसन्द आया व काफी जानकारियां मिली।

–मंजू नाहटा, दिल्ली

➢ बैठते समय रीढ़ की हड्डी सीधी रखने का अभ्यास हुआ है, मन शान्त हुआ, आवेश कुछ शान्त हुए हैं। अभिव्यक्ति क्षमता का भी बहुत विकास हुआ है। पहले बोलते समय दिल की धड़कन बढ़ जाया करती थी, अब ऐसा नहीं होता। ध्यान, महाप्राण ध्वनि और श्वास प्रेक्षा में बहुत ही आनन्द आने लगा है, एकाग्रता का भी बहुत विकास हुआ है। पहले मेरे पास हमेशा समय की कमी रहती थी। लेकिन अब (कुछ–कुछ) समय का सम्यक् नियोजन या प्रबंधन सीखने के बाद हर कार्य व्यवस्थित और समय पर हो पाता है। विषयों का चयन बहुत उपयुक्त है। सारे ही विषय जीवनोपयोगी और व्यक्तित्व विकास में सहयोगी है। इसमें कुछ विषय और भी जोड़े जा सकते हैं।

–श्रीमती मंगला कुण्डलिया, दिल्ली

➢ एक साधारण स्त्री के नाते जो राग–द्वेष की भावनाएं मेरे अन्दर विद्यमान है, आज मैं उनको निरपेक्ष दृष्टि से देखने में सक्षम हुई हूं। आध्यात्मिक ज्ञान की वृद्धि हुई है। पाठ्यक्रम सटीक और क्रमबद्ध होने के कारण भाग लेने वाले व्यक्तियों को बांधे रखने में कामयाब हुआ।

–संतोष बैद, दिल्ली

➢ जब से मैंने शिविर में भाग लिया तनाव नाम की चीज दिमाग से निकल गयी है।

–रणजीत भंसाली, दिल्ली

➢ मानसिक शक्तियों का जागरण हुआ। जिसमें स्मरण–शक्ति, चिन्तन–शक्ति, निर्णय–शक्ति और अन्तर्दृष्टि की ओर गहराई से झांकने का अवसर प्राप्त हुआ। ऐसी कार्यशाला मानो आधुनिक लेबोरेटरी हो व डाक्टरों से छुटकारा पाया जा सकता है। मेरा सभी को सन्देश होगा कि मुनिश्री धर्मेशकुमारजी के सान्निध्य में ऐसे क्लासेज/कार्यशाला जहां

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भी आयोजित हो जरूर अटेण्ड करें, इससे सभी का समय शत–प्रतिशत सार्थक होगा।

–मांगीलाल दूगड़, दिल्ली

➢ महाप्राण ध्वनि, कायोत्सर्ग, अन्तर्यात्रा एवं श्वास प्रेक्षा का प्रयोग सीखा। अभिव्यक्ति करने का मौका मिला, बहुत से लोगों से परिचय बढ़ा। पाठ्यक्रम बहुत ही उपयोगी है एवं इससे जीवन के अनेक पहलू उजागर होते हैं। ऐसी कार्यशाला का लगाया जाना अत्यन्त आवश्यक है।

–मन्नालाल सुराणा, दिल्ली

➢ कार्यशाला में आने से मन प्रसन्नता से भरा रहता है। पाठ्यक्रम काफी रोचक व उपयोगी है। मुनिश्री धर्मेशकुमारजी ने विषय काफी सरलता से समझाए ताकि हर व्यक्ति आसानी से समझ सके। व्यवस्था काफी अच्छी रही। कार्यशाला के पश्चात् मुझे अगर प्रचार–प्रसार हेतु कोई कार्य दिया जायेगा तो उसे अपना सौभाग्य समझूंगा।

–पूनमचन्द सेठिया, दिल्ली

➢ मुझे साइटिका व सर्वाइकल का दर्द रहता था। कार्यशाला में कान, आंख व गर्दन की यौगिक क्रिया से दर्द में काफी कमी आई है। मानसिक तनाव भी कम हुआ। पूरे दिन हल्कापन महसूस होता है तथा कार्य में मन लगता है। मुझे दीर्घश्वास एवं महाप्राण ध्वनि से शान्ति का आभास होता है। क्रोध भी कम हुआ है। कार्यशाला में आने के बाद मैं रोज सुबह सामायिक व नमस्कार महामंत्र का रंगों सहित जाप करता हूं जिससे मेरी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास हो रहा है। क्रोधमुक्ति के कारण पारिवारिक शान्ति, बच्चों के प्रति स्नेह की भावना तथा चिन्ता मुक्ति के कारण व्यापार में भी कार्यकुशलता बढ़ी है।

–हनुमान बरड़िया, दिल्ली

➢ यहां आकर मानसिक रूप से हल्कापन महसूस कर रहा हूं। शरीर में स्फूर्ति एवं आनन्द महसूस हो रहा है। ऐसा लगता है जैसे अन्दर के रसायन बदल रहे हैं। वर्षों से जो आदतें पीछा नहीं छोड़ रही थी उनमें बदलाव लाने का मन कर रहा है। लोगों से मिलने में आसानी लगती है। भय का भाव मिट गया है। पहले माइक के सामने बोलने की क्षमता नहीं थी, इस कार्यशाला को ज्वाइन करने के बाद उसका विकास हुआ है।

–उम्मेदमल बैद, दिल्ली

➢ कायोत्सर्ग व योग साधना से शरीर के हर अवयवों में नई स्फूर्ति का अनुभव होता है। शरीर में काफी हल्कापन महसूस होने लगा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है व मन भी काफी प्रसन्न रहने लगा है। दिमाग में तनाव नहीं रहता। विचारों में विनय, धैर्य व भावशुद्धि का थोड़ा–थोड़ा अनुभव हो रहा है। ध्यान, कायोत्सर्ग में रूचि बढ़ी है। यौगिक क्रियाओं से तो मन का बहुत लगाव हो गया है। चिन्तन शक्ति में व आपस में लेन–देन में भी मधुरता का अनुभव होता है।

–गणेशचन्द भण्डारी, दिल्ली

➢ आत्म निरीक्षण के प्रयोग से मेरी स्मृति पहले से ज्यादा अच्छी हुई है, मैं अब अपने कार्य को पहले से ज्यादा व्यवस्थित रूप से कर पाता हूं। इस कार्यशाला ने मेरे जीवन को एक नई दिशा दी है। मैं पहले से ज्यादा संतुलित निर्णय ले पाता हूं।

–सुपारसमल दूगड़, दिल्ली

➢ कार्यशाला से पहले मैं बहुत तनावग्रस्त था, आवेश भी आता था। मैंने दो कार्यशालाओं में भाग लिया। मैंने अपने आप में नया परिवर्तन पाया है। तनाव, क्रोध, जल्दबाजी आदि पर मैंने काफी हद तक नियंत्रण पाया है। समय नियोजन के दौरान मैंने मुनिश्री से प्रतिक्रमण, आत्म–निरीक्षण सीखा। मेरे जीवन में बहुत बदलाव आया है। स्टेज पर आकर बोलने की क्षमता का विकास हुआ। घर पर भी वातावरण में बदलाव महसूस होता है। पाठ्यक्रम बहुत सरल एवं सुव्यवस्थित था। प्रेक्षा–प्रणेता आचार्य महाप्रज्ञजी द्वारा लिखित पुस्तक नया मानव : नया विश्व से हमें व्यक्तित्व विकास निर्माण के महत्त्वपूर्ण सूत्र मिलते हैं।

– इन्द्र बैंगानी, दिल्ली

➢ मैं यहां आकर मानसिक रूप से स्वयं को हल्का महसूस करता हूं। जब से यह कार्यशाला चल रही है, मैं शारीरिक रूप से चुस्त और बहुत आनंदित महसूस कर रहा हूं। मुझे अपने अन्दर (भीतर) की ओर झांकने का अवसर मिला, मार्ग मिला। अध्यात्म के प्रति रूचि बढ़ी व अपनी भावात्मक एवं आध्यात्मिक शक्ति को जगाने की इच्छा प्रबल हुई है। मुझे यह अनुभव हुआ कि हमारे भीतर जो भी कमियां हैं, उसे हम (अध्यात्म को, संयम को, साधना को अपनाकर) पूरा कर सकते हैं। अपने अन्दर अनन्त शक्ति का पता चला, इससे Confidence बढ़ा है। पाठ्यक्रम बहुत ही सटीक और समय की जरूरत के अनुसार बनाया गया है।

–जुगराज डागा, दिल्ली

➢ श्वास प्रक्रिया से विचारों की संख्या कम हुई है। मन जागरूक हुआ है। सोच Positive बना है। क्रोध पर काफी हद तक नियंत्रण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हुआ है। अभिव्यक्ति का भय समाप्त हो गया है। अब आगे आकर कुछ कहने का साहस कर सकते हैं। वक्तृत्व कौशल का विकास हुआ है। यौगिक क्रियाएं, दीर्घश्वास, लयबद्ध श्वास से मन एकाग्र हुआ है। सामान्य श्वास की संख्या कम हुई है। कार्यशाला में भाग लेने पर काफी लोगों से परिचय हुआ है। सम्पर्क बढ़े हैं। पौने आठ बजे पैर अपने आप कार्यशाला की तरफ बढ़ जाते हैं। आगे आकर कुछ करने की तमन्ना जागृत हुई है। हम समाज के प्रति और दूसरों के प्रति कुछ कर सकें ऐसा मन मे विश्वास हुआ है।

—दिनेशकुमार डूंगरवाल, दिल्ली

➢ आंख, कान व गर्दन की यौगिक क्रियाओं से मुझे बहुत फायदा हुआ है। मेरी भूलने की आदत में सुधार हुआ है। मैंने पाया कि जैन धर्म में कितने विद्वान गुरु हैं जो हमेशा तैयार रहते हैं कि समाज अच्छाइयां ग्रहण करे व अपनी बुराइयां उन्हें दे दें।

—पुखराज बैद, दिल्ली

➢ मुझे तनाव से मुक्त होने का अनुभव हासिल हुआ तथा मानसिक दृष्टि से श्वास की प्रक्रिया भी नियमित हो गई है। क्रोध ज्यादा आना मेरी कमी थी, उसमें काफी फर्क पड़ा है तथा धर्म के प्रति मेरी जागरूकता काफी बढ़ी है। अब माला जपने का क्रम नियमित हो गया है। इस कार्यशाला से मुझे व्यवहार कुशलता के बारे में काफी जानकारी मिली है।

—अनिलकुमार कुण्डलिया, दिल्ली

➢ सुचारू रूप से श्वास चलना तथा प्रातःकाल जल्दी उठना आदि सद्गुणों की प्राप्ति हुई है तथा मानसिक रूप से तनाव जैसी भयानक बीमारी से राहत मिली है। इस कार्यशाला में बताई गई बातों तथा प्रयोगों से जीवन के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश पड़ता है, इससे जीवन उन्नत व प्रकाशमय बन जाता है, लोग प्रगति के ऊंचे से ऊंचे लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं तथा आत्मविश्वास बढ़ता है। व्यक्तित्व को प्रकाशमय बनाने की प्रेरणा इन पाठ्यक्रमों के अन्तर्गत है।

—मनोज कुमार यादव, दिल्ली

➢ इस कार्यशाला से मेरी श्वास लेने की प्रक्रिया अच्छी हुई व विचार कम आने लगे हैं। इससे हमारा जीवन सरल, सुदृढ़ एवं अनुकरणीय बना है। इस कार्यशाला में हमें वैज्ञानिक आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सभी विषयों को समझाया गया है।

—गौरव जैन (मणोत), दिल्ली

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

➢ यौगिक क्रियाएं आदि करने से मेरी (गर्दन, आंख, कान आदि) इन्द्रियों में शीतलता महसूस कर रहा हूं। कायोत्सर्ग, प्रेक्षाध्यान द्वारा एकाग्रता में वृद्धि हुई है। कार्य दक्षता का विकास हुआ है। मैं मानसिक संतुलन का अनुभव कर रहा हूं। मेरे नकारात्मक विचारों में सुधार हुआ है एवं साथ ही आध्यात्मिक संबल मिला है। मेरे भावों में शुद्धि हुई है। इस कार्यशाला में प्रशिक्षण प्राप्त कर मुझे गौरव का अनुभव हो रहा है। इसमें बताई गई विधियों से प्रतिदिन प्रयोग करने से मुझे शान्ति प्राप्त हुई एवं तनाव से राहत मिली है। मेरे व्यक्तित्व में सुधार आया है। मेरे भीतर क्रोध पर नियंत्रण करने की भावना जागृत हुई है। कार्यशाला का पाठ्यक्रम अत्यन्त उपयोगी एवं वर्तमान समस्याओं के सुलझाने में सहायक है।

—मनीष छलानी, दिल्ली

➢ अपने श्वास को ठीक से जाना। अपने व्यवहार में कुछ परिवर्तन हुआ है। कार्यशाला में प्रयोग ज्यादा होना चाहिए।

—कमलकुमार गुलगुलीया, दिल्ली

➢ मेरी श्वास की प्रक्रिया सही हुई है और मन मजबूत हुआ है।

—धनराज मणोत, दिल्ली

➢ मुझे इस कार्यशाला से काफी लाभ मिला है। पहले मैं सुबह 9 बजे से पहले नहीं उठता था लेकिन कार्यशाला ज्वाइन करने के बाद मैं 6.30 बजे उठता हूं। मेरी सोचने की शक्ति पहले से काफी अच्छी हो गई है।

— विनोद बैद, दिल्ली

➢ श्वास पर नियंत्रण, एकाग्रता बढ़ने व क्रोध पर काबू पाने का अनुभव हुआ। सद्भावों का विकास हुआ है। व्यवहारिकता बढ़ी है।

—नवरतन पांडिया, दिल्ली

➢ मुझे शारीरिक रूप से कुछ अच्छा अनुभव हुआ है तो वह है—श्वास का प्रयोग। इससे पहले श्वास—प्रश्वास की संख्या ज्यादा थी, वह धीरे—धीरे कम हो रही है। पाठ्यक्रम बहुत—बहुत अच्छा लगा। इससे हमे बहुत कुछ जानने को मिला है।

—पवन भंसाली, दिल्ली

➢ इस कार्यशाला में जाने के बाद कैसे तनाव रहित रहने में सक्षम हो सकते हैं, इसका अनुभव किया। स्पष्टता व सुन्दर वक्तव्यों ने

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पाठ्यक्रम को बहुत सरलता प्रदान की है। हर व्यक्ति आसानी से इसका लाभ उठा सकते हैं।

—राजेश बरड़िया, दिल्ली

➢ कार्यशाला में आकर मैं बहुत तनाव रहित अनुभव कर रहा हूं। अब हम मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ रहते हैं। मुझे ऐसा लग रहा है, मेरे भीतर में बहुत परिवर्तन हो रहा है जो पुरानी आदते थी वह कार्यशाला में आने से दिन प्रतिदिन बदल रही है। कार्यशाला में आने से पहले मैं कभी भी माईक के सामने नहीं बोल पाया लेकिन मुनि श्री के कार्यशाला में मौका मिला और आज मैं इतने श्रोताओं के सामने निर्भय होकर बोलता हूं।

—राज कुमार चौरड़िया, दिल्ली

➢ मैने शारीरिक रूप से अपने को चुस्त—दुरूस्त पाया। मानसिक शान्ति का अनुभव किया। अपने व्यवहार में काफी परिवर्तन पाया। व्यक्तित्व विकास का यह पाठ्यक्रम हमारे जीवन रूपी सागर में एक बुंद की तरह है। बार— बार इस तरह की कार्यशाला का आयोजन होने पर हमारा ज्ञान बढ़ेगा।

—अजीत कुमार बोथरा, दिल्ली

➢ प्रेक्षा ध्यान करने से शरीर में जागृति आई और हम अधिक चुस्त—दुरूस्त रहने लगे। मेरा मन कार्यों में अधिक सक्रियता से लगने लगा और कार्य करना आसान हो गया। प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से मेरा आध्यात्मिक विकास हुआ और हमें अधिक जानने का अवसर मिला है। प्रेक्षाध्यान करने से हमारा दूसरों के प्रति व्यवहार बदल गया है और हम दूसरों से सहनशीलता, मधुरता से बात करने लगे हैं जिससे हमें दूसरों का सहयोग मिल रहा है। पाठ्यक्रम सुव्यवस्थित था ताकि हमें कम समय में अधिक जानकारी मिल सके। कार्यशाला की व्यवस्था बहुत ही कुशलता के साथ की गई।

—मुकेश संचेती, दिल्ली

➢ क्रोध पर, अभिव्यक्ति में घबराहट व दबाव पर कुछ हद तक नियंत्रण हुआ है।

—आलोक बच्छावत, दिल्ली

➢ मेरे शरीर में नई स्फूर्ति आई। सामान्य श्वास, दीर्घश्वास के प्रयोग मुझे बहुत अच्छे लगे। मेरा मनोबल मजबूत हुआ। पाठ्यक्रम हमें अच्छा लगा। हमें कई नई जानकारियां प्राप्त हुई।

—आलोक दूगड़, दिल्ली

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

➢ इस कार्यशाला में शरीर को स्वस्थ रखने के लिए मार्गदर्शन मिला। प्रेक्षाध्यान के प्रयोग से शरीर में स्फूर्ति व ताजगी का अनुभव होता है जो मानसिक भावों को प्रबल करने में विशेष सहयोगी है। इस कार्यशाला में भाग लेने से अध्यात्म के प्रति रूचि विकसित हुई व इसका अपने विकास में किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है, इसकी जानकारी प्राप्त हुई। पाठ्यक्रम उपयोगी व सरल है।

–सुमति कुमार बोथरा, दिल्ली

➢ पहले मुझे बहुत क्रोध आता था लेकिन अब नहीं, क्योंकि अब मैंने अपने क्रोध पर नियंत्रण करना सीख लिया है। अब मैं प्रतिदिन महाप्राण ध्वनि, यौगिक क्रियाएं, अन्तर्यात्रा के प्रयोग करती हूं। निश्चित तौर पर मेरे जीवन में इस कार्यशाला का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। जहां एक ओर इससे मेरे आत्मविश्वास में वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर अब मैं गंभीरता से अपने लक्ष्य को निर्धारित करने में लगी हूं।

–प्रियंका कोठारी, दिल्ली

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला–3

दिनांक 14.09.2003 से 13.10.2003

आयोजक : जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा, छोटी खाटू (नागौर–राज.)

संभागी संख्या – महिलाएं – 11 + पुरुष 39 = 50 संभागी

प्रशिक्षणार्थियों के विविध अनुभव

➢ पहले मेरी मंच पर खड़े होने की शक्ति नहीं थी लेकिन अगर अब मुझे एक मिनट के स्थान पर एक घंटा भी बोलने के लिए कहा जाए तो बोल सकता हूं। यहां की यौगिक क्रियाओं एवं महाप्राण ध्वनि से मेरी स्मरण शक्ति का विकास हो रहा है। इसके अलावा मेरी दुर्व्यसनों की आदत कम हो गई है। इस कार्यशाला में आने से मेरा जीवन सफल हो गया। यौगिक क्रियाओं से पाचन शक्ति बढ़ी है।

–अशोक सेठिया, छोटी खाटू

➢ हमारी शारीरिक व मानसिक शक्तियों, एकाग्रता, अच्छी भावानाओं व आध्यात्मिक विचारधारा का विकास हुआ।

–अजयसिंह कोचर, छोटी खाटू

➢ शरीर में स्फूर्ति का अनुभव होने लगा है। भावनाएं सकारात्मक होने लगी है। धर्म के प्रति रूचि जागृत होने लगी है। कार्य करने की तत्परता का अनुभव होने लगा है।

–पवनकुमार जोशी, छोटी खाटू

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

➢ इस व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में यौगिक क्रियाओं एवं जो बिन्दु हमें विस्तार पूर्वक बताए गये हैं उनके द्वारा हमारी स्मृति का अच्छा विकास हुआ है। शरीर में आन्तरिक शक्ति की प्रगति का अच्छा विकास हुआ है। मेरे जीवन में यह कार्यशाला व यौगिक क्रियाएं सदैव याद रहेगी और मुझे विश्वास है कि यदि मैंने इन सभी क्रियाओं को नियमित एवं क्रमबद्ध उपयोग में लाया तो मेरा जीवन सफल हो जायेगा। इस कार्यशाला में हमें सारी चीजें मिली जो हम चाहते थे।

–यशपाल कोठारी, छोटी खाटू

➢ हमने इस कार्यशाला में महाप्राण ध्वनि, कायोत्सर्ग, प्रेक्षाध्यान, लेश्याध्यान आदि की पूर्ण जानकारी प्राप्त की। इसके अलावा हमें कई प्रकार के रोगों, दुर्व्यसनों आदि से छुटकारा पाने के लिए मुनिश्री ने आंख, कान, नाक, गर्दन की तथा श्वास–पेट की क्रियाएं बताई जो हमारे लिए कारगर सिद्ध हुई। इस कार्यशाला का पूर्ण पाठ्यक्रम रोचक था। मैं जीवन में इसे उतारूंगा। इसके अलावा कार्यशाला में बताई गई महत्त्वपूर्ण बातों का ध्यान में रखते हुए कार्य करूगां। मैने जीवन विकास के लिए जरूरी 8 महत्त्वपूर्ण तत्वों पर गहन जानकारी ली इसके अलावा पुस्तक 'नया मानव : नया विश्व' काफी रोचक लगी।

–विनित बैद, छोटी खाटू

➢ हमने यहाँ मन पर संयम, चिन्तन, आदि का विकास किया है। क्रोध, घृणा, अहंकार, भय आदि में कमी आई है। पाठ्यक्रम के आठों विषय बहुत रोचक लगे।

– भागचन्द सेठिया, , छोटी खाटू

➢ कार्यशाला में पढ़ाये गये विषय एक से एक बढ़कर थे। व्यवस्था अच्छी थी मुनि श्री बहुत ही अच्छी तरह पढ़ाते थे, आपकी शैली बहुत अच्छी है।

–निर्मलादेवी लोढा, छोटी खाटू

➢ मेरे जीवन में इस कार्यशाला के समय प्रबन्धन विषय का बहुत प्रभाव पड़ा। कार्यशाला पूर्णरूप से सफल रही।

– विकास चौधरी, छोटी खाटू

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से शरीर में काफी परिवर्तन हुआ है। दिनचर्या सुधरी है। काम समय पर करने की आदत का विकास हुआ है। क्रोध पर काबू पाने का राज मिला है साथ ही स्मृति का विकास भी हुआ है।

–अमितकुमार जोशी, छोटी खाटू

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

➢ आज के इस वातावरण में इस प्रकार की कार्यशाला का बहुत महत्त्व है। मैं बार बार ऐसी कार्यशाला में भाग लेना चाहता हूं। मुनिवर ने सभी विषयों को बहुत ही लगन व सरल ढंग से समझाया। मेरे जीवन में अनुशासन की भावना का विकास हुआ है।

–कुलदीप बोथरा, छोटी खाटू

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में मुझे अपनी शक्तियों को जागृत एवं नियोजित करना आदि बहुत कुछ सीखने को मिला। आत्म--निरीक्षण के प्रयोग ने मुझे बहुत प्रभावित किया। ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग के ध्यान से क्रोध पर नियंत्रण करने की क्षमता का विकास हुआ है। निषेधात्मक भावों में कमी आई है। समय का सदुपयोग हुआ। आचार्यश्री की पुस्तक 'नया मानव : नया विश्व' बहुत अच्छी लगी।

–दीपिका जैन, छोटी खाटू

➢ मेरी आंख में 15–15 दिन बाद दर्द आता था, उल्टी व जी–मचलाता था। एक माह में ऐसा महसूस नहीं हुआ। मन को शान्ति मिली है। ऐसे शिविरों की बहुत आवश्यकता है।

–अमितकुमार जोशी, छोटी खाटू

➢ इस कार्यशाला में हमें यौगिक क्रियाएं, प्रेक्षाध्यान के प्रयोग करवाये गये जिससे तनाव–मुक्ति एवं मानसिक एकाग्रता का विकास हुआ। हमारे जीवन व्यवहार में बहुत ही अच्छे अनुभव हुए। स्मृति विकास, एकाग्रता विकास पर बहुत अच्छा प्रभाव हुआ। कार्यशाला का पाठ्यक्रम दैनिक जीवन में काम आने लायक व सभी के लिए उपयोगी है।

–प्रतिभा डूंगरवाल, छोटी खाटू

➢ मैंने व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की कला व समय का नियोजन करना सीखा।

–पदम कोचर, छोटी खाटू

➢ मैंने व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में अपने विचारों को अभिव्यक्त करना, निबन्ध लेखन की कलाओं का विकास किया।

–सोनू डूंगरवाल, छोटी खाटू

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में मेरे निषेधात्मक भावों में काफी परिवर्तन हुआ है। मैंने अपने विचारों को प्रकट करने की कला का विकास किया। आत्म–निरीक्षण के प्रयोग ने मेरे जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया है।

–वीनित भण्डारी, छोटी खाटू

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

➢ मेरा जीवन इस कार्यशाला में आने से काफी हद तक सफल हो गया। इसमें मुनिश्री द्वारा बताये गये यौगिक क्रियाओं, ध्यान से मेरे श्वास व विचारों में काफी परिवर्तन हुआ है। मेरी लेखन कला व अभिव्यक्ति कौशल का विकास हुआ है।

–प्रियंका धारीवाल , छोटी खाटू

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में मैंने अपने आपको कांफी स्वस्थ अनुभव किया है। मेरी मानसिक शक्तियों में भी सुधार हुआ है। जीवन व्यवहार में काफी परिवर्तन आ गया है।

–भावना कोचर , छोटी खाटू

➢ यौगिक क्रियाएं मुझे अच्छी लगी, मुझे फायदा भी हुआ। यदि समय एक महीने के स्थान पर थोड़ा बढ़ा दिया जाए तो मुझे अच्छा लगेगा। व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से दो बातों का प्रत्यक्ष लाभ हुआ। इससे मुझे आत्म–निरीक्षण की प्राप्ति हुई। स्मृति विकास हुआ।

–पंकज डूंगरवान , छोटी खाटू

➢ शारीरिक यौगिक क्रियाओं से शारीरिक अंगों में स्वच्छंदता का अनुभव हुआ है। पूरे दिन शरीर आनन्दमय रहता है। स्मरण शक्ति का विकास हुआ है। अच्छे भावों का विकास हुआ है एवं बुरे भावों का आना रूका है। चिन्ताएं व तनाव कम हुए हैं। पाठ्यक्रम के मुख्य बिन्दु जीवन में बहुत उपयोगी हैं एवं वर्तमान में चल रही परिस्थितियों के अनुकूल, बहुत ही रूचिप्रद हैं। आज की समस्याओं का इनमें समाधान हैं।

–आईदानसिंह शेखावत, व.अ., छोटी खाटू

➢ गृहस्थी में टेंशन (तनाव) रहना कोई बड़ी बात नहीं है। लेकिन कार्यशाला में मुनिवर ने तनाव रहित रहने के कई तरीके बताये उसे जिन्दगी भर नहीं भूलूंगी। सारे विषय अच्छे थे –समय प्रबंधन, तनावमुक्ति, स्मृति विकास। मुनिवर की शैली निराली थी। इसे जीवन में गंभीरता से लें तो खिल उठेंगे। कार्यशाला में मुनिश्री ने बड़ी ही सरलता से पाठ्यक्रम को समझाया। छोटे–बड़े सभी को लाभ मिला।

–रूबल जैन पुत्रीश्री रिखबचन्द जैन, छोटी खाटू

➢ मेरे में आलस्य था, इस पाठ्यक्रम से शरीर में स्फूर्ति रहने लगी है तथा मस्तिष्क में जो क्रोध या तनाव था वह दूर हुआ है। मस्तिष्क में हल्कापन महसूस होता है। कायोत्सर्ग द्वारा नींद में तथा स्वास्थ्य में वृद्धि हुई है। समय प्रबंधन पाठ्यक्रम करने पर महसूस हुआ कि मैंने अपने 47 वर्ष यों ही गवां दिये हैं। अब मैं अपने जीवन के ज्यादा से ज्यादा समय को आध्यात्मिक कार्यों में लगाऊंगी तथा सभी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

से मैत्रीपूर्ण व करूणापूर्ण व्यवहार करूंगी। हमारे जीवन में बहुत ही अच्छे अनुभव हुए। इससे स्मृति विकास, एकाग्रता, श्वास प्रेक्षा पर बहुत अच्छा लाभ हुआ।

—श्रीमती विमला धारीवाल, छोटी खाटू

➢ व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में अन्तर्यात्रा के अभ्यास से आन्तरिक शक्तियों का विकास हुआ। महाप्राण ध्वनि से स्मरणशक्ति का अच्छा विकास हुआ। व्यक्तित्व विकास कार्यशाला से हमारे बोलने का भय दूर हुआ। हमने जीवन को महान् बनाने का लक्ष्य प्राप्त किया।

खूशबू कोचर, छोटी खाटू

➢ कार्यशाला में आने पर हमारा मानसिक तनाव दूर हुआ और इन्द्रियां प्रसन्न रहने लगी। क्रोध, काम, मद, लोभ, घृणा, भय आदि से छुटकारा मिलने का अनुभव हुआ। कार्यशाला से मेरा आत्मविश्वास बढ़ा है, वाणी पर संयम हुआ है। पाठ्यक्रम बहुत रोचक था।

—विकास सारड़ा, छोटी खाटू

➢ कार्यशाला में यौगिक क्रियांए, प्रेक्षाध्यान के प्रयोग कराये गये जिससे तनाव मुक्ति, मानसिक एकाग्रता का विकास हुआ। श्वास दीर्घ बना व श्वास की संख्या कम हुई। कार्यशाला का समय प्रबंधन जीवन का एक पहलू बन गया है। —अश्विन धारीवाल, छोटी खाटू

➢ इस व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में शरीर हल्का हो गया है। थकान भी कम हुई है। विकास के लिए प्रामाणिक व्यवहार, मृदु व्यवहार आदि सूत्रों का प्रभाव आया है। आसनों के प्रयोग से शरीर मे स्फूर्ति का अनुभव हुआ है। पहले हम गलत श्वास लेते थे, अब सही श्वास लेना सीखा है। अस्त—व्यस्त जीवनशैली को सुव्यवस्थित बनाने के लिए ऐसे कार्यक्रम और भी चलाने चाहिए। प्रेक्षाध्यान के प्रशिक्षण की अति आवश्यकता है। —कपूरचन्द धारीवाल, छोटी खाटू

➢ मानसिक तनाव दूर हुआ है। वाणी संयम प्राप्त हुआ, बुद्धि तीव्र तथा स्मृति का विकास हुआ। मन से ईर्ष्या, द्वेष, चिडचिड़ापन नष्ट हो गया है। दया, सहिष्णुता आदि भावों का विकास हुआ है। अध्ययन में रूचि बढ़ी है। —अमित जोशी, छोटी खाटू

➢ प्राणी मात्र के प्रति कल्याण और सेवा की भावना मन में आनी लगी है। कार्यशाला में मुझे हर दिन नया अनुभव मिला। पाठ्यक्रम में कम से कम शब्दो में ज्यादा से ज्यादा महत्पूर्ण ज्ञानपूर्ण बाते हैं। वाणी संयम और समय की पाबंदी में वृद्धि हुई। व्यवस्था सुचारू रूप से थी कोई कमी नहीं थी। —प्रदीप वैष्णव, छोटी खाटू

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–2

कार्यशाला का स्वरूप

1. उद्देश्य

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास की महत्त्वपूर्ण प्रणाली है। इसके प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का कहना है कि मात्र उपदेश नहीं, साथ में प्रयोग भी हों और उनका परिणाम भी आये। इसी उद्देश्य को लेकर एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्यशाला का आयोजन किया जाता रहा है। इसके उद्देश्य हैं –

1. आपके सर्वांगीण व्यक्तित्व का विकास हो।
2. आप स्वस्थ रहें।
3. आपकी स्मरण–शक्ति सुदृढ़ हो।
4. आप तनावमुक्त रहें।
5. आपकी मानसिक शक्तियों का विकास हो।
6. आपकी एकाग्रता व कार्यदक्षता निरन्तर बनी रहे।
7. अपने लक्ष्य को सुनिश्चित रूप से प्राप्त करें।
8. आपका भावात्मक विकास हो।
9. आप समय–प्रबन्धन में सिद्धहस्त बनें।

2. कार्यशाला की विशेषताएं

- न्यूनतम कार्यक्रम और अधिकतम निष्पत्ति।
- सरल, सुदृढ़ एवं अनुकरणीय।
- वैज्ञानिक सिद्धान्त और आध्यात्मिक अभ्यास।
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि।
- आध्यात्मिक, वैज्ञानिक व्यक्तित्व निर्माण का अवसर।

2. <u>कार्यशाला के संभागियों हेतु आवश्यक सूचना</u>

1. अर्हता 10+2; आयु सीमा वर्ष 15+
2. यह अति महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। इसमें प्रारम्भ से अन्त तक पांच मिनट पूर्व आपकी पूर्ण उपस्थिति आवश्यक है।
3. आप शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से केवल कार्यशाला के लिए ही उपस्थित रहें। मोबाइल बन्द रखें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. कृपया बातचीत न करें, एकाग्रता से सुनें, समझें, अभ्यास करना सीखें।
5. यदि पूर्ण जागरूकता और तन्मयता के साथ अभ्यास करेंगे तो सफलता निश्चित है।
6. आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण जानकारी को नोट करने के लिए पेन और डायरी साथ में रखें। कार्यशाला में समय दें।
7. अभिव्यक्ति और जिज्ञासा समाधान का अवसर दिया जायेगा।

4. मूल्यांकन

1. नियमित उपस्थिति – 30 अंक
2. अभिव्यक्ति कौशल – 40 अंक
3. दो लिखित आलेख – 30 अंक

(अभिव्यक्ति अंक विभाजन – खड़ा होना– 1 अंक, संबोधन–1 अंक, विषय प्रस्तुति –2 अंक, धन्यवाद ज्ञापन– 1 अंक, कुल = 5 अंक)

5. कार्यशाला के विशेष लाभ

1. स्मरण शक्ति और एकाग्रता का विकास।
2. व्यक्तित्व विकास के रहस्यों का बोध।
3. व्यक्तित्व विकास के प्रयोगों का अभ्यास।
4. अभिव्यक्ति के भय का समापन।
5. अभिव्यक्ति कौशल का विकास।
6. लेखन की क्षमता का विकास।
7. आध्यात्मिक–वैज्ञानिक व्यक्तित्व का विकास।

6. प्रशिक्षणार्थियों को देय सामग्री

- संक्षिप्त अध्ययन सामग्री।
- पेन, डायरी
- साहित्य – नया मानव : नया विश्व – आचार्य महाप्रज्ञ
- फाइल

7. कार्यशाला अवधि : 26 दिन

प्रथम दिन : उद्घाटन कार्यक्रम

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मध्य के 24 दिन : प्रशिक्षण

अन्तिम दिन : अनुभव सत्र एवं प्रमाण पत्र वितरण

8. प्रचार–प्रसार

1. कार्यशाला से दो महीने पूर्व व्यक्तित्व विकास कार्यशाला फोल्डर तैयार हो, जनता के पास पहुंचे। उसी में रजिस्ट्रेशन फॉर्म संलग्न हो जिसे भर कर इच्छुक संभागी पुनः आयोजक संस्था को दे सके।
2. उद्घाटन व समापन में गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति को संभावित बनाया जा सकता है।
3. विषयों का सार व दैनिक सूचना समाचार पत्रों तक पहुंचायी जा सकती है।

9. प्रशिक्षण प्रबन्धन

1. सहायक संसाधन : हॉल (न्यूनतम 50 व्यक्तियों की बैठक क्षमता का) जिसमें बैनर, श्यामपट्ट, चॉक, डस्टर, दरी, घण्टी, घड़ी, उपस्थिति रजिस्टर, ध्वनि–प्रकाश साधन आदि।
2. प्रशिक्षण नीति : प्रत्येक विषय तीन दिन तक चलेगा।

   प्रथम दिन– 20 मिनट प्रयोग + 30 मिनट सिद्धान्त।

   द्वितीय दिन–20 मिनट प्रयोग + 30 मिनट परिचर्चा और अभिव्यक्ति।

   तृतीय दिन –20 मिनट प्रयोग + 30 मिनट अभिव्यक्ति।
3. कक्षा संचालन

   तीन मिनट – गीत–समय का अंकन हो....(तीसरा और पांचवा पद्य)

   तीन मिनट – सामान्य श्वास एवं दीर्घश्वास गणना।

   बीस मिनट – व्यक्तित्व विकासक प्रेक्षाध्यान के प्रयोग

   तीस मिनट – सिद्धान्त/परिचर्चा/अभिव्यक्ति

   चार मिनट – उपस्थिति अंकन + गीत (दो पद्य)
4. प्रयोग : 20 मिनट के लिए व्यक्तित्व विकासक प्रेक्षाध्यान प्रयोग

   1. यौगिक क्रियाएं – आंख, कान एवं गर्दन 5 मि.
   2. महाप्राण ध्वनि (तीन बार) 1 मि.
   3. कायोत्सर्ग (एक साथ सम्पूर्ण शरीर) 2 मि.
   4. अन्तर्यात्रा (भावना : मानसिक शक्तियों का विकास हो रहा है।) 2 मि.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. दीर्घश्वास (लयबद्ध श्वास) 2 मि.
6. दर्शन केन्द्र प्रेक्षा (भावना : आत्मविश्वास बढ़ रहा है।) 2 मि.
7. ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग का ध्यान (क्रोध शान्त हो रहा है।) 2 मि.
8. प्रतिक्रमण योग (आत्म–निरीक्षण प्रयोग) 3 मि.
9. महाप्राण ध्वनि (तीन बार) 1 मि

5. विद्यार्थी संख्या – इसको दो भागों में बांट सकते हैं–(1) वक्ता विद्यार्थी एवं (2) श्रोता विद्यार्थी। वक्ता विद्यार्थियों की संख्या 50 से अधिक न हो। श्रोताओं की संख्या स्थान की उपलब्धता के अनुसार।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–3

कार्यशाला मे प्रदत्त विषयों का संक्षिप्त सार

सफल जीवन के रहस्य एवं व्यक्तित्व विकास के सूत्र

(Secrets of Successful Life and Tips to Personality Development)

समस्त प्राणी जगत में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। उसमें विवेक शक्ति है। इससे वह अपने जीवन की दिशा को निर्धारित कर सकता है। अपने भाग्य का स्वयं विधाता बन सकता है। अपनी क्षमताओं के विकास द्वारा जीवन में लक्ष्य निर्माण कर उसकी प्राप्ति की योजना बना सकता है। पर मनुष्य इस शक्ति का उपयोग करना बहुत कम जानता है। उसे इसका ज्ञान बहुत कम ही है कि जीवन क्या है ? व्यक्तित्व विकास के सूत्र क्या है ? जीवन में सफलता के रहस्य क्या हैं ? इससे अनेक मनुष्य सफलता से वंचित रह जाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य व्यक्तित्व विकास एवं सफलता के रहस्य सूत्रों को जानें, जैसे --

विषय :–

1. स्वास्थ्य–प्रबन्धन : स्वस्थ, प्रसन्न एवं समाधिस्थ कैसे रहें ?
2. स्मृति–विकास : स्मरण शक्ति का विकास कैसे करें ?
3. समय–प्रबन्धन : समय का प्रबन्धन कैसे करें ?
4. तनाव–प्रबन्धन : तनाव को कैसे दूर करें ?
5. उच्च मानसिक शक्तियों का विकास : उच्च मानसिक क्षमताओं का विकास कैसे करें ?
6. एकाग्रता एवं कार्यदक्षता : एकाग्रता एवं कार्यदक्षता को कैसे बढ़ाएं ?
7. लक्ष्य प्राप्ति : लक्ष्य का निर्धारण एवं लक्ष्य प्राप्ति कैसे करें ?
8. भावात्मक विकास : क्रोध पर नियंत्रण कैसे करें ?

1. स्वास्थ्य प्रबन्धन

(Health Magagement)

"आरोग्ग–बोहिलाभं समाहिवर मुत्तमं दिन्तु"

1. स्वास्थ्य

स्वास्थ्य का अर्थ है स्वस्थ रहना अर्थात् स्व में स्थित रहना। जो व्यक्ति व्याधियों से आक्रान्त है, आधि (मानसिक रोग) से पीड़ित है एवं उपाधि (निषेधात्मक भाव) से ग्रस्त है वह स्व में स्थित नहीं रह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सकता। आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार स्वास्थ्य एवं स्वस्थ जीवन का सूत्र है :–

स्वास्थ्य = समाधि = जीवन – (व्याधि+आधि+उपाधि)

2. शरीर की संरचना और स्वास्थ्य

हमारा शरीर कोशिकाओं से बना होता है जैसे मकान ईंटों से। प्रत्येक कोशिका के पास शरीर का पूरा नक्शा होता है। इसी अनुसार शरीर के अवयव मिलजुल कर काम करते हैं एवं स्वास्थ्य को बनाये रखते हैं।

3. व्यवस्था में अव्यवस्था

व्यक्ति अज्ञानतावश, प्राकृतिक नियमों के उल्लंघन, निषेधात्मक भाव व विचार करने, असात्विक खान–पान, दुर्व्यसनों के आसेवन, असंयत रहन–सहन व गलत जीवन शैली से भीतरी नक्शे को ही त्रुटिपूर्ण बना लेता है तो स्वास्थ्य को बनाये रखना आसान नहीं होता है।

4. स्वास्थ्य एवं यौगिक क्रियाएं

चेतना हमारे अस्तित्व का केन्द्रीय तत्व है। जब भी शरीर में अव्यवस्था होती है उस समय व्यवस्था की पुकार होती है। चेतना का बरबस ही ध्यान उस ओर खींच जाता है। अपेक्षा है इन संकेतों को समझकर चेतना को वहां पर केन्द्रीत कर यौगिक क्रिया, आसन, प्राणायाम, शरीर प्रेक्षा एवं अनुप्रेक्षा द्वारा स्वास्थ्य को बनाएं रखें।

5. कब, कहां, कैसे ?

आवश्यक यौगिक क्रियाएं – 5 मिनट। 1. आँख की, 2. कान की, 3. गर्दन की, इनका अभ्यास आप प्रातः करें अथवा सायंकाल भोजन से पूर्व भी किया जा सकता है।

2. स्मृति–विकास

(Memory Development)

डा. गौरी स्माइल ने अपनी पुस्तक "The Memory Bible" में मस्तिष्क को युवा एवं तंत्रिकाओं को चुस्त–दुरूस्त रखने के लिए 10 ब्रह्मवाक्य (Commandments) की चर्चा की। उसमें मुख्यतया स्मृति–प्रशिक्षण, सृजन दक्षता (Building Skills), तनाव–न्यूनता (Minimising sress), मानसिक व्यायाम, मानसिक पोषण और स्वस्थ जीवन शैली पर बल दिया।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. स्मृति विकास

स्मरण शक्ति का जितना अधिक विकास होगा उतना ही व्यक्ति अधिक ज्ञानार्जन कर सकेगा। भविष्य की योजनाओं के निर्माण और क्रियान्विति में सफल हो सकेगा।

2. स्मृति के प्रकार

स्मृति के दो प्रकार हैं – अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक। प्रायः अल्पकालिक स्मृति किसी की भी खराब नहीं होती है किन्तु दीर्घकालिक स्मृति में कठिनाई आती है। प्रशिक्षण द्वारा अल्पकालिक स्मृति को दीर्घकालिक स्मृति में बदला जा सकता है।

3. स्मृति प्रशिक्षण

अच्छी स्मृति चार कारक तत्वों पर निर्भर करती है – (i) रूचि, (ii) एकाग्रता, (iii) सम्बन्ध–संयोजना एवं (iv) पुनरावर्तन।

4. मस्तिष्क की क्षमता और महाप्राण ध्वनि

मस्तिष्क की क्षमता असीम है। उसकी क्षमता का आधार ज्ञान–तन्तुओं के जागरण से है। यौगिक और प्रायोगिक प्रशिक्षण से मस्तिष्क के तन्तुओं को जागृत किया जा सकता है। महाप्राण ध्वनि, दीर्घश्वास, ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग के ध्यान एवं अनुप्रेक्षा द्वारा स्मरण शक्ति के विकास में अद्‌भुत सहयोग प्राप्त होता है।

5. कब करें

पढ़ने से पूर्व 9 बार महाप्राण ध्वनि का प्रयोग अवश्य करें एवं पढ़ाई के समापन पर भी दोहराएं। प्रातः एवं सायं भी करें।

3. समय – प्रबन्धन

(Time-Management)

"काले कालं समायरे"

1. समय

आम आदमी से लेकर विश्व विख्यात वैज्ञानिक तक सभी को काम के लिए 24 घण्टे मिलते हैं। व्यवस्थित व्यक्ति के पास सदैव समय की प्रचुरता रहती है एवं अस्त व्यस्त के पास समय की कमी। सफलता के लिए समय का प्रबन्धन जरूरी है।

2. समय विश्लेषण

वर्तमान में चल रहे कार्य एवं उसमें लगने वाले समय का विश्लेषण करना आवश्यक है। इसी के साथ व्यक्तिगत, सामाजिक एवं संघीय अपेक्षाओं का भी विश्लेषण कर समय का सम्यक् नियोजन करना प्रबन्धन का महत्त्वपूर्ण सूत्र है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. कार्य की प्राथमिकता

लक्ष्य एवं कार्य की प्राथमिकताओं को निर्धारित कर उसके अनुरूप समय का नियोजन करना चाहिए।

4. आत्म–विकास

24 घण्टे में अपने लिए कितना समय लगाते हैं ? चाकू से नियमित रूप से काम लेते हैं किन्तु उसके लिए धार देने में कितना समय लगाते हैं ? धार रहित चाकू बेकार हो जाता है।

5. आत्म–निरीक्षण

प्रतिदिन आत्म–निरीक्षण की आदत समय–प्रबन्धन का आधारभूत सूत्र है। इससे कार्य सुगम व जीवन व्यवस्थित हो जाता है। जीवन में नई चुनौतियों को स्वीकार करना आसान हो जाता है। आत्म–निरीक्षण का प्रयोग प्रारम्भ से ही कार्यशाला में प्रतिदिन करने से एक आदत बन जाती है।

4. तनाव – प्रबन्धन

(Stress-Management)

"काउस्सग्गं सव्वदुक्ख विमोक्खणं"

1. तनाव के कारण

यह समस्या मुख्य रूप से अति औद्योगीकरण, शहरीकरण, महंगाई, जनसंख्या वृद्धि, अतिमहत्त्वाकांक्षा, अस्त–व्यस्तता व सुविधावादी दृष्टिकोण का परिणाम है। एकल परिवार एवं आर्थिक प्रतिस्पर्धा आग में घी का काम कर रहे हैं।

2. तनाव

अत्यधिक दबाव जनित परिस्थितियों से अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र सक्रिय हो जाता है। इससे मांसपेशियां तनाव से भर जाती है। शरीर में असामान्य परिवर्तन घटित होते हैं। वे पुनः कुछ कारणों से सामान्य अवस्था में न आने से बीमारी का स्प ले लेते हैं।

3. तनाव का परिणाम

तनाव से अनिद्रा, अस्थमा, अल्सर, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह, पक्षाघात, मस्तिष्कीय रक्त स्राव आदि अनेक घातक बीमारियां भी देखने में आई है।

4. तनाव से शिथिलीकरण

शरीरगत आसामान्य परिस्थितियों को सामान्य बनाने का कार्य परानुकम्पी नाड़ी तन्त्र का है। इससे शरीर में संतुलन स्थापित होता है। शरीर शिथिल व शान्त हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. कायोत्सर्ग

दबावपूर्ण परिस्थितियां हावी होने पर परानुकम्पी नाड़ी तन्त्र को कार्य करने का अवसर ही नही मिलता। परिणामतः निरन्तर तनाव बना रहता है। इससे निपटने का वैज्ञानिक उपाय है– कायोत्सर्ग द्वारा परानुकम्पी नाड़ी तन्त्र को सक्रिय करना।

6. कब करें

किसी भी कार्य की समाप्ति पर एक मिनट का प्रयोग करें। विश्राम के समय भी इसे दोहराएं। रात्रि में सोने से पूर्व भी दोहराएं।

5. उच्च मानसिक शक्तियों का विकास

(Development of Higher Mental Powers)

1. शक्ति का स्वरूप

व्यक्ति के अन्दर शक्ति "प्राण" के रूप में रहती है। यह शक्ति शरीर के मुख्य भागों पर अपने ढंग से गति करती है। प्राण को ज्ञान केन्द्र में ले जाना शक्ति के विकास का आधार है। यह व्यक्तित्व विकास का भी प्रबल आधार है।

2. शक्ति का उपयोग

शक्ति केन्द्र के पास ही वासना और वृत्तियों के केन्द्र हैं। वासना और वृत्तियां प्रबल हैं तो शक्ति का उपयोग उनको पुष्ट करने में लग जाती है अथवा शक्ति नीचे के केन्द्र में रहेगी तो वह उनका पोषण करती रहेगी। इससे व्यक्ति की शक्तियां निषेधात्मक विचार, भाव और व्यवहार में ही खर्च हो जाती है।

3. शक्ति का ऊर्ध्वारोहण

हमारी चेतना नाड़ी संस्थान में सक्रिय रहती है। इसका मुख्य केन्द्र है मस्तिष्क ज्ञान केन्द्र। शक्ति का ऊर्ध्वारोहण, मार्गान्तरीकरण, रूपान्तरण शक्तिकेन्द्र से ज्ञान केन्द्र की ओर कर देंगे तो ज्ञान का पौधा लहलहा उठेगा। उच्च मानसिक शक्तियों का विकास होगा।

4. चित्त की ऊर्ध्वयात्रा – अन्तर्यात्रा

प्राण चित्त का अनुगमन/अनुसरण करता है। जब चित्त की यात्रा नीचे शक्ति केन्द्र से ऊपर ज्ञान केन्द्र की ओर होती है तो उसे अन्तर्यात्रा कहते हैं। इससे प्राण ऊर्ध्वमुखी बनता है। फलतः उच्च मानसिक शक्तियों का जागरण होता है जिससे मुख्य रूप से स्मरणशक्ति, चिन्तनशक्ति, निर्णयशक्ति और अन्तर्दृष्टि का विकास होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. कब ?

प्रातः शौच निवृत्ति के बाद प्रतिदिन 5 मिनट का अभ्यास करें। रात्रि में सोने से पूर्व भी इसका अभ्यास किया जा सकता है।

6. एकाग्रता एवं कार्यदक्षता का विकास (श्वास प्रेक्षा)

(Development of concentration and Efficiency)

"सहीए धम्ममादाय सेयं समणुपस्सति"

1. दायित्व एवं कार्यदक्षता

उम्र बढ़ने के साथ–साथ व्यक्ति के जीवन में जिम्मेदारियां बढ़ती जाती है पर उसी अनुपात में क्षमताओं का विकास नहीं हो पाता है। शनैः शनैः शक्तियों का ह्रास ही होता है। इससे दबाव व तनाव बढ़ता है। अतः आवश्यक है कि व्यक्ति सफलता के लिए कार्यदक्षता का प्रशिक्षण प्राप्त करे।

2. कार्य दक्षता

किसी भी कार्यक्षेत्र में दक्षता का मूल आधार सम्बन्धित क्षेत्र का नवीनतम एवं परिपूर्ण ज्ञान तथा मानसिक एकाग्रता है। मानसिक एकाग्रता का तात्पर्य है जो कार्य करें मन उसी में लगा रहे।

3. मानसिक भटकाव

प्रायः व्यक्ति की 20 प्रतिशत शक्ति काम में लगती है एवं 80 प्रतिशत मानसिक भटकाव में नष्ट हो जाती है। इससे कार्य क्षमता एवं कार्य निष्पत्ति में गिरावट आती है।

4. मानसिक एकाग्रता और श्वास प्रेक्षा

इस समस्या का समाधान है–मानसिक एकाग्रता का विकास। वर्तमान में चल रहे कार्य में मन लगाये रखने का प्रशिक्षण प्राप्त करना है। अर्थात् भाव क्रिया का अभ्यास करना है। श्वास प्रेक्षा के अभ्यास से मन की चंचलता कम होती है, वर्तमान में रहने का अभ्यास बढ़ता है, एकाग्रता बढ़ती है एवं कार्यदक्षता का विकास होता है।

7. लक्ष्य प्राप्ति

(Goal-Achievement)

व्यक्ति लक्ष्य बनाता है किन्तु पूरा नहीं हो पाता है, क्यों ?

1. व्यक्तित्व एवं अचेतन मन

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार व्यक्ति के मन को मुख्यतया दो भागों में बांटा जा सकता है – चेतन मन और अचेतन मन। इन दोनों के बीच में सेतु है– अवचेतन मन। चेतन मन की अपेक्षा अचेतन मन बहुत शक्तिशाली होता है। व्यक्ति जो कुछ बनना चाहता है उसे अचेतन मन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तक पहुंचाना आवश्यक है। अन्यथा लक्ष्य प्राप्ति की संभावना नगण्य हो जाती है।

2. अल्फा तरंग एवं दायां मस्तिष्क

अल्फा तरंगों की सक्रियता की अवस्था में दायां मस्मिष्क एवं अचेतन मन अधिक सक्रिय होता है। अनुसंधानों से यह पाया गया है कि मस्तिष्क की अल्फा तरंगों को, दाये मस्तिष्क को सक्रिय करने का सरल उपाय है – कायोत्सर्ग।

3. कायोत्सर्ग एवं लक्ष्य–प्राप्ति

कायोत्सर्ग की अवस्था में लक्ष्य की शब्दावली पर चित्त को एकाग्र कर उच्चारण व साक्षात्कार करने से वह लक्ष्य अचेतन मन तक चला जाता है। ऐसा लक्ष्य एक निश्चित अवधि में अवश्य साकार हो जाता है।

4. लक्ष्य प्राप्ति की प्रक्रिया

प्रेक्षाध्यान में इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को चार चरणों में बांटा गया है –

1. अभिप्रेरणा, 2. कायोत्सर्ग, 3. एकाग्रता, 4. साक्षात्कार।

8. भावात्मक विकास (लेश्याध्यान)

(Development of Emotional Intelligence)

1. आन्तरिक स्वास्थ्य

भौतिकता के एक तरफा विकास ने व्यक्ति के आन्तरिक स्वास्थ्य को कमजोर किया है। आज का मानव तनाव, चिन्ता, भय, अवसाद, निराशा, कुण्ठा, मिर्गी, आक्रामकता, ईर्ष्या, चिड़चिड़ापन आदि अनेक मानसिक और भावनात्मक व्याधियों से दुःखी है।

2. भावात्मक रूग्णता

जब व्यक्ति पर निषेधात्मक भाव हावी होते हैं तब व्यक्ति भावनात्मक रूप से अस्वस्थ हो जाता है। इससे वह स्वयं दुःखी होता है, परिवार व समाज को भी दुःखी बनाता है।

3. भावात्मक स्वास्थ्य

व्यक्ति के भीतर अच्छे भाव अच्छे रंगों में प्रकट होते हैं। बूरे भाव बूरे रंग में प्रकट होते हैं। इन्हें क्रमशः शुभ लेश्या और अशुभ लेश्या कहते हैं।

4. भावात्मक विकास

अच्छे भावों को पुष्ट करने के लिए सबसे सरल उपाय है – रंगों का ध्यान। अच्छे रंगों के ध्यान से भाव निर्मल व शुद्ध बनते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अच्छे भावों का विकास होता है। इससे व्यक्ति का व्यवहार मृदु एवं निश्छल बनता है तथा जीवन में संतोष एवं संयम का विकास होता है।

5. लेश्याध्यान

ज्योति केन्द्र पर श्वेत रंग, दर्शन केन्द्र पर लाल रंग और ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग के ध्यान से क्रमशः आवेश शान्त, अन्तर्दृष्टि का विकास एवं ज्ञान तन्तु सक्रिय होते हैं।

दैनिक तालिका

क्र. सं.	दिनांक	सामान्य श्वास	दीर्घश्वास	सामान्य श्वास में विचार	लयबद्ध श्वास में विचार

सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास का अमोघ साधन

नमस्कार महामंत्र का जप व ध्यान

प्रायः आदमी की शिकायत रहती है कि माला जपते हैं पर मन एकाग्र नहीं होता है। महामंत्र का जप रंग व चैतन्य केन्द्रों पर ध्यान केन्द्रित कर श्वास के साथ करने से एकाग्रता एवं सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास में अभूतपूर्व सहयोग मिलता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

क्र.सं.	1.	2.	3.	4.	5.
मंत्र पद	णमो अरहंताणं	णमो सिद्धाणं	णमो आयरियाणं	णमो उवज्झायाणं	णमो लोए सव्वसाहूणं
रंग (लेश्या)	चमकता हुआ श्वेत रंग	चमकता हुआ अरुण (लाल) रंग	चमकता हुआ पीला रंग	चमकता हुआ हरा रंग	चमकता हुआ नीला रंग
चैतन्य केन्द्र	ज्ञान केन्द्र (सिर के ऊपर चोटी के आसपास का [illegible])	दर्शन केन्द्र (दोनों भृकुटियों के मध्य)	विशुद्धि केन्द्र (गले के मध्य कंठ का भाग)	आनन्द केन्द्र (छाती के मध्य हृदय के पास)	स्वास्थ्य केन्द्र (नाभि से चार अंगुल नीचे)
लाभ	ज्ञान,स्वजागरूकता,मानसिक शान्ति आदि का विकास	आत्मविश्वास, अन्तर्दृष्टि, निर्णय शक्ति आदि का विकास	आत्मानुशासन, बुद्धिबल, अभिव्यक्ति कौशल आदि का विकास	आनन्द, निर्भयता, साहस आदि का विकास	स्वास्थ्य, पवित्रता, शक्ति आदि का विकास

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रारम्भिक आवश्यक सावधानियां

1. प्रारम्भिक अभ्यास के लिए नीचे के केन्द्र पर णमो लोए सव्वसाहूणं पद से दो मिनट के लिए अभ्यास प्रारम्भ करें। फिर शेष सभी केन्द्रों पर दो–दो मिनट का प्रयोग करें। अन्त में ऊपर के केन्द्र ज्ञान केन्द्र पर पर प्रयोग सम्पन्न करें।
2. विशेष निर्देशन के बिना केवल एक केन्द्र पर ही अभ्यास करके नहीं छोड़ें। सभी केन्द्रों पर प्रयोग अवश्य करें।
3. अभ्यास के बाद ऊपर से प्रारम्भ करते हुए नीचे तक एवं पीछे रीढ़ की हड्डी से होते हुए ऊपर ज्ञान केन्द्र तक अभ्यास किया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–4

रजिस्ट्रेशन फार्म

1. आवेदक का नाम :.....
2. पिता/पति का नाम :.....
3. माता का नाम :.....
4. आयु :..... वर्ष, लिंग – (पुरुष/स्त्री).....
5. शैक्षणिक योग्यता :.....
6. आवेदक का व्यवसाय :.....
7. घर का पता :.....
   .....
   .....
8. दूरभाष :.....
9. कार्यालय का पता :.....
   .....
   .....
   .....
10. दूरभाष :..... मोबाइल .....

संकल्प

1. "मैं व्यक्तित्व विकास कार्यशाला में भाग लूंगा/लूंगी तथा इसमें पूर्णकाल तक नियमित उपस्थित रहूंगा/रहूंगी। हाँ/नहीं
2. बोलने का भी अभ्यास करना चाहता/चाहती हूं। हाँ/नहीं
3. केवल श्रोता रहना चाहता/चाहती हूं। हाँ/नहीं

स्थान : ....

दिनांक : ..... हस्ताक्षर आवेदक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–5

प्रेक्षाध्यान व्यक्तित्व विकास कार्यशाला

दिनांक.....से दिनांक.....तक

प्रशिक्षणार्थी अनुभव–पत्रक

श्वास एवं विचारों की गणना :

दिन	श्वास संख्या		विचार संख्या	
	सामान्य श्वास	दीर्घश्वास	सामान्य श्वास की स्थिति में	लयबद्ध श्वास की स्थिति में
प्रथम दिन				
अन्तिम दिन				

आपके शारीरिक एवं मानसिक अनुभव

.....

आपके भावनात्मक एवं आध्यात्मिक अनुभव

.....

आपके जीवन व्यवहारगत अनुभव

.....

पाठ्यक्रम सम्बन्धी आपके विचार

.....

व्यवस्था संबंधी आपके विचार

.....

विशेष सुझाव

.....

कार्यशाला पश्चात् प्रेक्षाध्यान के प्रचार–प्रसार में आप किस प्रकार सहयोग कर सकते हैं?

.....

नाम ..... प्रशिक्षणार्थी के हस्ताक्षर

पता .....

.....

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–6

गीत

समय का अंकन हो....

–आचार्य तुलसी

जागे शुभ संस्कार, समय का अंकन हो,
पुष्ट बने आधार, समय का अंकन हो ।।
बौद्धिकता मानव का लक्षण,
मिलता है उससे संरक्षण,
शिक्षा का उपहार ।।1।।
मानव पशु की भेदक रेखा,
चमत्कार किससे अनदेखा,
शक्ति–स्रोत अपार ।।2।।
करें शक्ति का सही नियोजन,
सधे सभी अभिलषित प्रयोजन,
उन्नत हो आचार ।।3।।
श्रद्धा और तर्क का आश्रय,
अनेकान्त की गुंजित हो लय,
आस्था ले आकार ।।4।।
सर्वांगी व्यक्तित्व उदय हो,
लक्ष्य सामने सर्वोदय हो,
खुले प्रगति के द्वार ।।5।।
जिनशासन भैक्षवगण पाया,
कल्पवृक्ष जैसे घर छाया,
समतामय व्यवहार ।।6।।
सूक्त 'खणं जाणाहि' न भूलें,
अभिनव आयामों को छूलें,
'तुलसी' के उद्‌गार ।।7।।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–7

अणुव्रत : मानवीय आचार संहिता

1. मैं किसी भी निरपराध प्राणी का संकल्पपूर्वक वध नहीं करूंगा।
   - 0 आत्म–हत्या नहीं करूंगा।
   - 0 भ्रूण–हत्या नहीं करूंगा।
2. मैं आक्रमण नहीं करूंगा।
   - 0 आक्रामक नीति का समर्थन नहीं करूंगा।
   - 0 विश्व–शान्ति तथा निःशस्त्रीकरण के लिए प्रयत्न करूंगा।
3. मैं हिंसात्मक एवं तोड़–फोड़–मूलक प्रवृत्तियों में भाग नहीं लूंगा।
4. मैं मानवीय एकता में विश्वास करूंगा।
   - 0 जाति, रंग आदि के आधार पर किसी को ऊंच–नीच नहीं मानूंगा।
   - 0 अस्पृश्य नहीं मानूंगा।
5. मैं धार्मिक सहिष्णुता रखूंगा।
   - 0 साम्प्रदायिक उत्तेजना नहीं फैलाऊंगा।
6. मैं व्यवसाय और व्यवहार में प्रामाणिक रहूंगा।
   - 0 अपने लाभ के लिए दूसरों को हानि नहीं पहुंचाऊंगा।
   - 0 छलनापूर्ण व्यवहार नहीं करूंगा।
7. मैं ब्रह्मचर्य की साधना और संग्रह की सीमा का निर्धारण करूंगा।
8. मैं चुनाव के संबंध में अनैतिक आचरण नहीं करूंगा।
9. मैं सामाजिक कुरूढ़ियों को प्रश्रय नहीं दूंगा।
10. मैं व्यसन मुक्त जीवन जीऊंगा।
    - 0 मादक तथा नशीले पदार्थ– शराब, गांजा, चरस, हेरोइन, भांग, तम्बाकू आदि का सेवन नहीं करूंगा।
11. मैं पर्यावरण की समस्या के प्रति जागरूक रहूंगा।
    - 0 हरे–भरे वृक्ष नहीं काटूंगा।
    - 0 पानी का अपव्यय नहीं करूंगा।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–8

सार्वजनिक भाषण कला

1.0 सार्वजनिक भाषण कला

जनता में अपनी बात रखने के अनेक रूप हो सकते हैं, जैसे–भाषण, व्याख्यान, वाद–विवाद आदि। प्रत्येक वक्तव्य की अपनी अलग–अलग तकनीक होती है किंतु कुछ आधारभूत तथ्य सबके लिए समान होते हैं। वक्तव्य का उपयोग अलग–अलग दृष्टि से किया जाता है। जैसे–मनोरंजन करना, अपने विचारों से परिचित कराना, अपने कार्यक्रम को क्रियान्वित करवाना।

1.1 वक्तव्य की तैयारी

सामान्यतः वक्तव्य का एक मुख्य प्रयोजन होता है और अनेक छोटे–छोटे प्रयोजन भी होते हैं। वक्तव्य पूर्व तैयारी के साथ भी किया जाता है एवं कभी–कभी तत्काल भी दिया जाता है। वही वक्तव्य अच्छा होता है जिसका प्रभाव दूसरे पर पड़ता है, दूसरों की रुचि को बनाये रखा जाता है एवं दूसरों की अपेक्षाओं पर भी ध्यान दिया जाता है। एक अच्छे वक्तव्य को तैयार करने में निम्न बिन्दु सहायक हो सकते हैं–

- ✡ श्रोता और स्थान के अनुरूप विषय का चयन करना।
- ✡ अपने वक्तव्य को एक प्रयोजन तक सीमित रखना जो अपने ज्ञान एवं अनुभव के उपयुक्त हो।
- ✡ विषय को पुष्ट करने के लिए तथ्यों की खोज करना।
- ✡ विषय की रूपरेखा तैयार करना जो अपने वक्तव्य का सारांश रूप में हो।
- ✡ संकलित सामग्री का प्रभावी रूप में संगठित करना।
- ✡ वक्तव्य को अंतिम रूप देना जो रुचिपूर्ण एवं विविधता लिए हो तथा केन्द्रीय तत्व की पुष्टि करने वाला हो।
- ✡ अंतिम अवस्था है–वक्तृत्व को प्रभावी ढंग से लोगों के सामने रखना जो श्रोता के लिए सहज बोधगम्य हो।

1.2 श्रोता की पहचान

सभी वक्तव्य में श्रोता को पहचानना अत्यन्त आवश्यक होता है। वे क्या चाहते हैं? क्या वे सूचना चाहते हैं या मनोरंजन चाहते हैं? वे क्या जानते हैं? वे क्या नया जानना चाहते हैं? श्रोता की अपनी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मान्यता या धारणा क्या है? आदि बातों की जानकारी होने से वक्ता अपनी बात को श्रोता तक अच्छे ढंग से पहुंचा सकता है।

1.3 सामग्री का संगठन

प्रदत्त वक्तव्य श्रोता को सहज रूप से बोधगम्य हो। अतः सामग्री को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। सामान्यतया भाषण का प्रारम्भ विषय परिचय से किया जाता है। मध्य में मूल बिन्दु का स्पर्श एवं अन्त में सारांश की प्रस्तुति की जाती है। इसके अतिरिक्त सामग्री को व्यवस्थित रूप से प्ररतुत करने के लिए और भी अनेक तरीके हो सकते हैं–

1. विषयानुसार,
2. ऐतिहासिक रूप से,
3. स्थान के अनुसार,
4. तर्क के अनुसार,
5. आक्रामक तेवर के साथ,
6. समाधान परक,
7. भावात्मक,
8. मानवीयकरण।

विषयानुसार–विषयानुसार सामग्री को व्यवस्थित करना वहां उपयोगी होता है जहां विभिन्न सूचनाओं को सम्प्रेषित करना होता है। ऐसे वक्तव्यों में प्रत्येक विषय को छूते हुए उसे मूल विषय से जोड़ दिया जाता है।

इतिहास/कालक्रम से–जहां ऐतिहासिक वक्तव्य देना होता है वहां घटनाओं को कालक्रम से क्रमिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रशिक्षण के काल में इस प्रकार के वक्तव्य की विशेष उपयोगिता होती है।

स्थान के अनुसार–संग्रहालयों में वक्तव्य स्थान के क्रम से दिये जाते हैं। भौगोलिक स्थिति के अनुरूप क्रमशः वक्तव्य को ढाला जाता है।

कार्यकारण के अनुरूप–जहां वक्तव्य को तर्कयुक्त ठोस प्रमाणों के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता हो वहां प्रत्येक बिन्दु को ठोस प्रमाणों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। इसमें तर्क के नियमों का पूरा उपयोग किया जाता है।

1.4 रोचकता

वह वक्तव्य अधिक याद रह पाता है और प्रभावी बनता है जिसमें विचारों को मानवीय पहलुओं के साथ प्रस्तुत किया जाता है। मानवीयकरण का तात्पर्य है अपने विचारों को दृष्टान्त और उदाहरणों द्वारा समझाना। घटनाओं द्वारा पुष्ट करना। अपने जीवन्त उदाहरणों द्वारा प्रस्तुत करना। अपने विचारों को पुष्ट करने के और भी अनेक तरीके हो सकते हैं–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. अनुसंधानपूर्वक प्रमाणों को प्रस्तुत करना।
2. तथ्य और आंकड़ों को प्रस्तुत करना।
3. चित्रों का उपयोग करनाा।
4. महापुरुषों के वाक्यों का समावेश करना।
5. विशेषज्ञों की टिप्पणियों को जोड़ना।
6. तुलना करना।
7. दृश्य–श्रव्य साधनों का उपयोग करना।

श्रोताओं का ध्यान खींचने के लिए विषय–परिचय की आवश्यकता होती है। इसके माध्यम से आने वाले विषय एवं उसकी पृष्ठभूमि से परिचित कराया जाता है। वक्ता इस कार्य को अनेक तरीकों से विवादास्पद मुद्दे उठाकर, श्रोताओं के लिए चुनौती प्रस्तुत कर, महापुरुषों के शक्तिशाली व सामयिक वाक्यों को प्रस्तुत कर या चुटकला कहकर श्रोताओं का ध्यान बहुत अच्छी तरह से खींच सकता है।

1.5 प्रस्तुति

लिखकर तैयार वक्तव्य को प्रस्तुत करने से पूरी बात तो कह दी जाती है किंतु वह बेजान और उबाऊ हो जाती है। वक्तव्य तो जीवन्त और विविध होना चाहिए। सामान्यतया श्रोता की एकाग्रता बहुत थोड़ी होती है। वक्तव्य के प्रारम्भ और अंतिम ही उन्हें याद रहने की संभावना होती है। अतः यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि वक्तव्य के प्रारम्भिक और अंतिम चरण में वक्तव्य का सार या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संदेश श्रोता तक पहुंचना चाहिए वही पुनरावर्तित होना चाहिए।

वक्तव्य को गति देने के लिए वक्ता अपने पास नोट्स एवं वाक्यांश रख सकता है। उसे आवाज, लय और गति में प्रसंगानुसार उतार–चढ़ाव बनाना चाहिए जिससे श्रोता जागरूक रह सके। सामान्यतया व्यक्ति जो सुनता है उसका अधिकांश अंश वह भूल जाता है। अतः वर्तमान युग में दृश्य साधनों का अधिकतम उपयोग करना लाभदायक होता है। इससे याद रहने की संभावना बढ़ती है।

मुख्य बिन्दुओं पर बल देने के लिए विराम लेना, आवाज को धीमा करना और हाव–भाव व गति को कम करना उपयोगी होता है। यदि वक्ता वास्तव में अपने वक्तव्य को स्मरणीय बनाना चाहता है तो उसके मुख्य बिन्दुओं को (या पूर्ण रूप को) लिखित रूप में श्रोता तक पहुंचाना चाहिए।

अच्छे वक्तव्य के लिए यह आवश्यक है कि वक्ता अपने आप में स्पष्ट बने। स्वयं अपने आप को पूछें–मैं क्या कहना चाहता हूं ? मेरा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मुख्य संदेश क्या है? कौन–से वाक्य मेरे संदेश को अच्छी तरह से पहुंचाने वाले हैं? मैं क्या पाना चाहता हूं ? मैं वक्तव्य क्यों दे रहा हूं ?

1.6 अच्छी अभिव्यक्ति के बिन्दु–संक्षेप में

1. स्वच्छ पोषाक में रहें, भाषण–मंच तक ठाठ से चलकर पहुंचें और सीधे खड़े हों। आपकी आंखों और भावों में आत्मविश्वास नजर आए।
2. आत्मीय, सद्भावपूर्ण मुस्कराहट से प्रारम्भ करें।
3. सभी व्यक्तियों से सीधी बात करें। उनके सिरों के ऊपर से, खिड़की के बाहर, माइक्रोफोन की तरफ या पूरे समय एक ही व्यक्ति की ओर न देखें।
4. इतनी ऊंची आवाज में बोलें की सब सुन सकें।
5. आवाज में उतार–चढ़ाव और समय–समय पर विविधता लाएं।
6. अपने भाषण को रटें नहीं। हो सकता है आप भूल जायें, फिर आप कहां होंगे? रूपरेखा को पूरी तरह समझ लें और उससे अभ्यस्त हो जाएं। यदि विचार का केन्द्रीय शब्द छूट जाए तो भी आपके अलावा इस गलती को कोई नहीं पकड़ पाए।
7. श्रोताओं को भाषण पढ़कर कभी न सुनायें। कभी–कभार कोई अंश या उद्धरण पढ़ना पड़ सकता है पर पूरा भाषण कभी नहीं।
8. वार्तालाप में विचार एकत्र करें, शब्द नहीं।
9. मंच पर जाने के भय से ग्रसित न हों। यह सामान्य बात है। इसे कभी न कभी सभी महसूस करते हैं। दिये गये परामर्श का पालन करें तो वह आत्मविश्वास जो यह जानने से मिलता है कि आप कुछ महत्त्वपूर्ण बात कहने जा रहे हैं, आप में संचारित होगा। अपने विषय को समझें और ऐसी बात कहें जो श्रोता सुनना पसन्द करें। याद रखें मंच का भय देखने से ज्यादा अनुभव करने में बुरा होता है।
10. तत्पर नजर आएं, खुश रहें। आत्मविश्वास रखें, उत्साह से बोलें।

1.7 अच्छे भाषण के लिए ऐसा न करें

1. बिन्दुओं को दोहराएं नहीं।
2. अनावश्यक तथ्यों का प्रयोग न करें।
3. अधिक भावुकता नहीं दिखाएं।
4. बात को बढ़ा–चढ़ा कर न कहें।
5. भाषा अनुचित या व्यंगात्मक न हों।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. मंच पर जाने से न डरें।
7. विषय से दूर न जाएं।
8. श्रोताओं का समय खराब न करें।
9. अनुचित हल–चल न करें।
10. आवाज को अप्रिय एवं अस्पष्ट न बनाएं।
11. सुस्त या मंद न हों।
12. सन्देह न करें।

2.0 शारीरिक स्थिति और हाव–भाव

जब वक्ता की कथनी और करनी में अन्तर होता है तब श्रोता वक्ता की शारीरिक अभिव्यक्ति व हाव–भाव पर अधिक निर्भर रहता है।

उस समय शारीरिक अभिव्यक्ति निर्णायक सिद्ध होती है। वह वक्ता के कथन और हाव–भाव में विसंगति का स्पष्ट संकेत होती है। व्यक्ति की मुद्रा, उसका चेहरा, हाव–भाव आदि निरन्तर संदेश प्रसारित करते रहते हैं। अतः यह कहावत बन गई है कि व्यक्ति कोई बात छुपाना चाहता है तो भी उसका चेहरा चुगली खा जाता है। व्यक्ति के हाव–भाव उसकी कथनी के साथ सामंजस्य एवं संगति रखते हैं तो उसकी कथनी में शक्ति और विश्वसनीयता आ जाती है अन्यथा व्यक्ति की बात को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। अतः अच्छे वक्ता अपने वक्तव्य के साथ–साथ शारीरिक हाव–भाव और मुख–मुद्रा पर भी सलक्ष्य ध्यान देकर अपनी वक्तृत्व कला को सशक्त बनाने का प्रयत्न करते हैं।

कुछ विशेष बिन्दुओं पर ध्यान देकर वक्ता अपने कथन और हाव–भाव की विसंगति से बच सकता है। अतः अभिव्यक्ति के समय शरीर व आकृति का निम्नानुसार ध्यान दें–

भाषण देते समय शरीर व आकृति का निम्नानुसार ध्यान दें–

मुद्रा–विश्राम की आरामदायक स्थिति में रखें।

हाथ–प्रभावी संकेत का माध्यम बनाएं।

मुंह–हमेशा प्रफुल्लित रहे।

आंख–श्रोताओं से मिलाप बनाए रखें।

वस्त्र–सामान्य वस्त्र पहनें।

स्थिति–खड़े होने में आगे की ओर झुकाव रखें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2.1 मुद्रा (भाव–भंगिमा)

दोनों पैरों के बीच कुछ इंचों का अन्तर रखते हुए पूरी तरह संतुलित होकर खड़े हों और एक पैर दूसरे से थोड़ा–सा आगे रहे। जब मंच से बोलने को पुकारा जाये, संतुलित चाल से मंच तक जायें, फिर स्वाभाविक ढंग से खड़े हों, श्रोता जब तक करतल ध्वनि (तालियां बजाना) बन्द न कर दें तब तक रुकें। अपने श्रोता वर्ग को निहार लें और श्रोताओं को भी आपको निहार लेने का पूरा अवसर दें। भाषण के दौरान पैरों की थोड़ी हरकत तो की जा सकती है पर अधिक हरकत होने पर श्रोताओं का ध्यान भंग होता है।

2.2 अभिवादन

प्रत्येक वक्ता को सही अभिवादन के साथ भाषण प्रारम्भ करना चाहिये। साधारणतया यह होगा– "अध्यक्ष महोदय, भाइयों और बहनों।" इस अभिवादन में केवल पांच शब्द हैं परन्तु भाषण देने वाले व्यक्ति की अभिव्यक्ति और तरीके से श्रोताओं पर शब्दातीत (शब्दों के अर्थ के परे) असर पड़ता है। स्पष्ट रूप से कहा गया–अध्यक्ष महोदय (विराम 1, 2, 3), भाइयों और बहनों (विराम 1, 2, 3) से भाषण प्रभावी प्रारम्भ होता है।

जब कोई सम्मानित अतिथि उपस्थित हो, उसे अभिवादन में नाम सहित सम्मिलित करना चाहिये (यदि वह व्यक्तिगत हैसियत से ही वहां उपस्थित हो), उसका नाम और पद (यदि वह सरकार या किसी संस्थान के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित हो)। ऐसी स्थिति में अभिवादन होगा–अध्यक्ष महोदय, मि. एक्स (यदि निजी हैसियत से हो), भाइयों और बहनों या फिर अध्यक्ष महोदय मि. व्हाई (यदि आधिकारिक हैसियत से हो), भाइयों और बहनों।

2.3 हाथ

भुजाओं और हाथों की स्वाभाविक स्थिति बाजू में लटके रहने की ही होगी। हाथों को जेबों से बाहर रखें। यदि हाथ बाजू में रहेंगे तो उनका प्रयोग आसान होगा। सिक्कों, चाबियों आदि से न खेलें, इससे आपके भाषण के प्रति श्रोताओं का ध्यान भंग होता है। दूसरे ध्यान बँटाने वाले हाव–भाव – हाथ मारना, सिर खुजलाना, चश्मा उतारना व फिर पहनना या नोट्स को उलटना–पलटना आदि से बचें।

हाव–भाव दो प्रकार के होते हैं–

1. स्पष्टीकरण के लिए–आकार, संख्या, स्थान या भाषण में आने वाले अन्य भौतिक आयाम हाव–भाव द्वारा व्यक्त होते हैं। उदाहरण–एक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ओर पहाड़ था और नीचे थी खूबसूरत झील। मैंने पहले कभी नहीं देखी थी।

2. बात पर जोर देने के लिए–ये भाव शब्दों के प्रति आपकी भावना व्यक्त करेंगे। आपका मूड और आपकी भावना मुट्ठी बांधने और खोलने से व्यक्त हो सकती है।

2.4 दृष्टि सम्पर्क

श्रोताओं को देखें और उन्हें ही अपनी बात कहें, उनकी ओर नहीं। अपनी नजर किसी के जूतों या छत पर न टिकायें, खिड़की के बाहर भी न निहारें, किसी एक व्यक्ति को न घूरें, सभी को भाषण के दौरान साथ लेकर चलें। कभी–कभी मुस्कराना न भूलें ताकि आप इतने दुःखी (बीमार) न लगें जितने आप स्वयं को भले अनुभव कर रहे हैं।

2.5 पोशाक

ध्यान बंटाने वाले कपड़े न पहनें। यदि आप साफ–सुथरे कपड़े पहनें और बाल संवारे हुए हैं तो आपको संतुलन और आत्मविश्वास बनाये रखने में सहायता मिलेगी। पेन या पेन्सिल को सीने पर लगी जेब से बाहर न निकाले रखें। लम्बे नोट्स या कागज अपने साथ न रखें, उन्हें जेबों में भरे हुए भी न दिखने दें।

2.6 आवाज पर नियंत्रण

सार्वजनिक वक्ता के नाते आपकी आवाज आपके उपकरणों में से सर्वाधिक प्रभावी औजार है। यदि आप इसे प्रभावी ढंग से उपयोग में न लायें तो इसका परिणाम हानिकारक भी हो सकता है। अपनी आवाज को इस प्रकार नियंत्रित करें कि सबसे पीछे की सीटों पर बैठे लोग भी आपको बिना कठिनाई सुन सकें। भाषण के दौरान आवाज में विविधता (उतार–चढ़ाव) भी लायें। यह उतार–चढ़ाव महत्त्वपूर्ण बात पर जोर देने व अनावश्यक को दबाने के लिए हैं।

2.7 बल देने का महत्त्व

बल देकर आप अपने भाषण को प्रभावी बना सकते हैं और आपको अपने मुख्य बिन्दु श्रोताओं तक पहुंचाने में सहायता मिल सकती है। निम्नलिखित वाक्यों में रेखांकित शब्दों पर जोर देकर उच्चारण करें और अन्तर नोट करें–

1. हमें तो यह अवश्य करना चाहिये–दूसरे नहीं करेंगे।
2. हमें तो यह अवश्य करना चाहिये–यह आवश्यक है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. हमें तो यह अवश्य करना चाहिये–दूसरे चाहे न करें।

4. हमें तो यह अवश्य करना चाहिये–पर दूसरा कुछ नहीं।

निम्नलिखित गद्य का अभ्यास करें और देखें कि विरामों का प्रयोग किस प्रकार किया गया है और किस प्रकार श्रोताओं पर पड़ने वाले प्रभावों में वृद्धि होती है।

"वह मर गयी। कोई भी नींद इतनी सुन्दर और शांत नहीं, पीड़ा के लेशमात्र से मुक्त, देखने में सुकोमल। हां, वह मर गयी।"

2.8 भाषण की तैयारी के महत्त्वपूर्ण मुद्दे

भाषण की तैयारी करते समय निम्नांकित सूत्रों पर विशेष ध्यान दें–

1. विषय के अनुसार विचारों को पूर्ण रूप से लिखें।
2. उन्हें क्रमानुसार करें।
3. भाषण को रटें नहीं।
4. पूर्वाभ्यास अवश्य करें, उच्च स्वर में बोलें।
5. 3X5 इंच के कार्ड पर बिन्दुओं को लिखकर हाथ में रख सकते हैं।
6. श्रोता समुदाय पर नजर जमाए रखें।
7. भाषण का प्रारम्भ व अन्त सौम्यता व विशिष्टता से करें।
8. दर्पण के सामने पूर्वाभ्यास करने से आत्म–विश्वास बढ़ता है।

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–9

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आचार्य महाप्रज्ञ– नया मानव : नया विश्व (तीसरा संस्करण, 1996) आदर्श साहित्स संघ, चुरू
2. आचार्य महाप्रज्ञ, प्रेक्षाध्यान : सिद्धान्त और प्रयोग, जैन विश्व भारती, लाडनूं
3. आचार्य महाप्रज्ञ, मैं कुछ होना चाहता हूं, जैन विश्व भारती, लाडनूं
4. डेल कारनेजी, लोक व्यवहार, तारा पोरवाल सन्स एण्ड कम्पनी, बम्बई
5. एम.एल. दशोरा, संगठन : सिद्धान्त एवं व्यवहार (1994), हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर
6. मुनि किशनलाल, प्रेक्षाध्यान : यौगिक क्रियाएं, जैन विश्व भारती, लाडनूं
7. मुनि किशनलाल, नशामुक्ति और प्रेक्षाध्यान, जैन विश्व भारती, लाडनूं
8. सफलता का सूत्र : स्वप्रबन्धन, मुनि प्रशान्तकुमार, प्रकाशक– आदर्श साहित्य संघ, दिल्ली
9. मुनि धर्मेश, प्रेक्षा संदर्शिका, जैन विश्व भारती, लाडनूं
10. डॉ0 एस.एन.शर्मा, हरप्रसाद भार्गव, आधुनिक सामान्य मनोविज्ञानए 4/230 कचहरी घाट, आगरा
11. शिव खेड़ा– (प्रथम संस्करण 2000), जीत आपकी, फुल सर्कल, दिल्ली–32
12. Anthony Robbins, (1996), Unlimited Power, Simon & Schuster Ltd. London.
13. Arun Zaveri & Mayur, Therapeutic Thinking.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

14. B.P. Gaur, Personality and Transcedental Meditation, A Jainsons Publication, East of Kailash, New Delhi

15. Bajrang Jain & Kavita Saravgi, Develop thyself , B. Jain Pub. (pvt) Ltd.

16. David S Stephen (3rd Ed.) Personal/Human Resource Management, Prentice Hall of India.

17. Jack Black (1994), Mind store, Thorsons An imprint of Hosper Collins Publishers.

18. John Mulligaun, Personal Management Hand Book (1988) Human Potential Resource Group University of Surrey.

19. Zibardo– Psychology and Life, Harper and Collins.

□□□

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

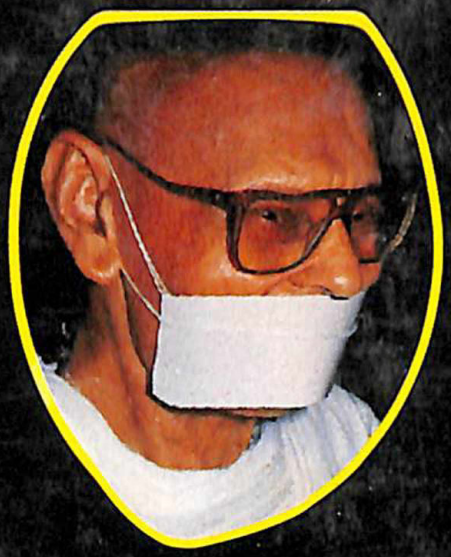

प्रेक्षाध्यान जीवन दर्शन है। इसमें जीवन की समग्रता का दर्शन किया जा सकता है। मुनिश्री धर्मेशकुमार प्रेक्षाध्यान के अभ्यासी हैं और उस पर वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने वाले मुनि हैं। उनके लेखन में अभ्यास और विज्ञान का समन्वय है। प्रस्तुत पुस्तक आकार में बहुत बड़ी नहीं है पर प्रकार की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। इससे पाठक को अनेक आयामों में गति करने का अवसर मिलेगा।

आचार्य महाप्रज्ञ

जैन विश्व भारती
लाडनूं-३४१३०६ (राज.)

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org